Time to Remember.... Please to Repay

pitrapaksha

GAYA

तर्पण

2014

पितृपक्ष मेला

महासंगम 2014

जिला प्रशासन गया की प्रस्तुति

पितृपक्ष मेला
महासंगम 2014

तर्पण

स्मारिका

प्रधान सम्पादक
गोवर्द्धन प्रसाद सदय

सम्पादक
डॉ० राजदेव शर्मा

सम्पादक-सहयोगी
कंचन कुमार सिन्हा
डॉ० सरदार सुरेन्द्र सिंह
डॉ० राकेश कुमार सिन्हा 'रवि'

प्रकाशन सहयोगी
शिव वचन सिंह (अधिवक्ता)
डॉ० के. के. नारायण
छ घंटी बाला जी

अध्यक्ष स्मारिका प्रकाशन समिति
शंभु शंकर बहादुर

संयोजक
अनन्त कुमार
जिला जन-सम्पर्क पदाधिकारी, गया

प्रकाशक
विनोद कुमार सिंह
सचिव
संवास सदन समिति, गया

पितृपक्ष मेला
महासंगम 2014

देश विदेश से आये तमाम श्रद्धालुओं का विष्णु नगरी गया में स्वागत, अभिनन्दन एवं कोटि-कोटि नमन। तीर्थ-यात्रियों की सेवा एवं उनकी संतुष्टि ही हमारा लक्ष्य ।

महत्वपूर्ण दूरभाष संख्या

गया (कोड - 0631)	कार्यालय	आवास	मोबाइल
आयुक्त, मगध प्रमंडल, गया	2225821	2229002	9473191426
पुलिस महानिरीक्षक, गया	2223085	2222349	9431822960
जिला पदाधिकारी, गया	2222900	2222800	9473191244
वरीय पुलिस अधीक्षक, गया	2225901	2225902	9431822973
नगर पुलिस अधीक्षक, गया	2224572	2225855	9473191722
उप विकास आयुक्त, गया	2224044	2222256	9431818351
निगम आयुक्त, गया	2220699	-	9470488794
अपर समाहर्त्ता, गया	2221024	-	9473191245
अनुमंडल पदाधिकारी, सदर, गया	2222357	-	9473191246
पुलिस उपाधीक्षक, नगर, गया	-	-	9431800110
सिविल सर्जन, गया	2220303	2420009	9470003278
सचिव, संवास सदन समिति, गया	-	-	9431413791
प्रशासक, संवास सदन समिति, गया	-	-	9798185725
जन शिकायत पदाधिकारी, गया	-	-	9631015264
जिला जन-संपर्क पदाधिकारी, गया	2226184	-	9570771507
अधीक्षक, मगध मेडिकल कॉलेज, गया	2210741	-	9470003301
प्रखंड विकास पदाधिकारी, नगर, गया	2210057	-	9431818068
अंचल अधिकारी, नगर, गया	-	-	9431622310
कार्यपालक अभियंता, विद्युत (शहरी), गया	-	-	7763814315
सहायक अभियंता, टेलीफोन, गया	-	2220000	9431200490
रेलवे स्टेशन प्रबन्धक, गया	-	2220069	9771427923
रेलवे टूरिस्ट इन्फौरमेशन सेन्टर, गया	2223635	-	-
रेलवे इन्क्वायरी, गया	2226131	2228283	139
संवास सदन समिति मेला नियंत्रण कक्ष, गया	2221035, 2221033	2221036	2229000
रेड क्रॉस, गया	2220057	-	-
फायर ब्रिगेड, गया	2222258	-	9473199839

किसी भी जानकारी या समस्या के समाधान के लिए सम्पर्क करें :-

हेल्पलाईन 'ई-समाधान' (24×7) : **9304401000**

Online Information & Complain Centre : **www.pinddaangaya.in**

भगवान् विष्णु का शृंगार विभूषित
पूज्य–चरण

पितृपक्ष मेला
महासंगम 2014

स्मारिका परिवार

संरक्षक

संजय कुमार अग्रवाल, भा०प्र०से०
जिला पदाधिकारी, गया

प्रधान सम्पादक

गोवर्द्धन प्रसाद 'सदय'

सम्पादक

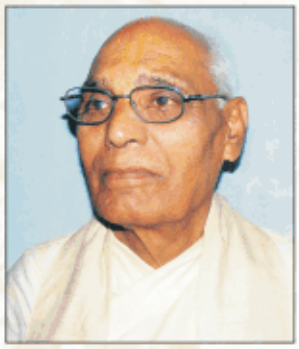

डा० राजदेव शर्मा

सम्पादक-मण्डल

कंचन कुमार सिन्हा

डा० सरदार सुरेन्द्र सिंह

डा० राकेश कु. सिन्हा 'रवि'

पितृपक्ष मेले को राजकीय दर्जा देने की अभूतपूर्व, ऐतिहासिक अधिसूचना

बिहार सरकार
राजस्व एवं भूमि सुधार विभाग

अधिसूचना

संख्या 8/नियम संशोधन (रा०मेला) – 03 09/2011 259 (8)/रा० दिनांक 02/09/2014

विभागीय अधिसूचना सं०–677 (8) रां० दिनांक 10.09.2009 द्वारा बिहार राज्य मेला प्राधिकार के प्रबंधन मे दिए गये निम्नांकित मेलों को राजकीय मेला का दर्जा दिया जाता है।

(i) पितृपक्ष मेला, गया

(ii) हरहिर क्षेत्र मेला, सोनपुर (सारण)

बिहार राज्यपाल के आदेश से
ह०/–
(शशि भूषण तिवारी)
निदेशक–सह–
विशेष सचिव, भू–अर्जन।

ज्ञापांक – 259 दिनांक 02/9/14

प्रतिलिपि :– अधीक्षक, सचिवालय मुद्रणालय, गुलजारबाग, पटना को अधिसूचना की दो प्रति एवं सी०डी० के साथ बिहार राजपत्र के असाधारण अंक में प्रकाशनार्थ प्रेषित करते हुए अनुरोध है कि उसकी 500 (पाँच सौ) अतिरिक्त प्रतियाँ राजस्व एवं भूमि सुधार विभाग को उपलब्ध करायी जाय।

ह०/–
(शशि भूषण तिवारी)
निदेशक–सह–
विशेष सचिव, भू–अर्जन।

ज्ञापांक – 259 दिनांक 02/9/14

प्रतिलिपि :– माननीय मुख्यमंत्री के प्रधान सचिव, बिहार, पटना/माननीय मंत्री, राजस्व एवं भूमि सुधार विभाग के आप्त सचिव, बिहार, पटना/मुख्य सचिव, बिहार, पटना/प्रधान सचिव, राजस्व एवं भूमि सुधार विभाग के प्रधान आप्त सचिव, बिहार, पटना को सूचनार्थ एवं आवश्यक कारवाई हेतु प्रेषित।

ह०/–
(शशि भूषण तिवारी)
निदेशक–सह–
विशेष सचिव, भू–अर्जन।

ज्ञापांक – 259 दिनांक 02/9/14

प्रतिलिपि :– सभी प्रमंडलीय आयुक्त, बिहार/सभी जिला पदाधिकारी, बिहार को सूचनार्थ एवं आवश्यक कारवाई हेतु प्रेषित।

ह०/–
(शशि भूषण तिवारी)
निदेशक–सह–
विशेष सचिव, भू–अर्जन।

ज्ञापांक – 259 दिनांक 02/9/14

प्रतिलिपि :– सभी विभाग/सभी विभागाध्यक्ष, बिहार, पटना को सूचनार्थ एवं आवश्यक कारवाई हेतु प्रेषित।

ह०/–
(शशि भूषण तिवारी)
निदेशक–सह–
विशेष सचिव, भू–अर्जन।

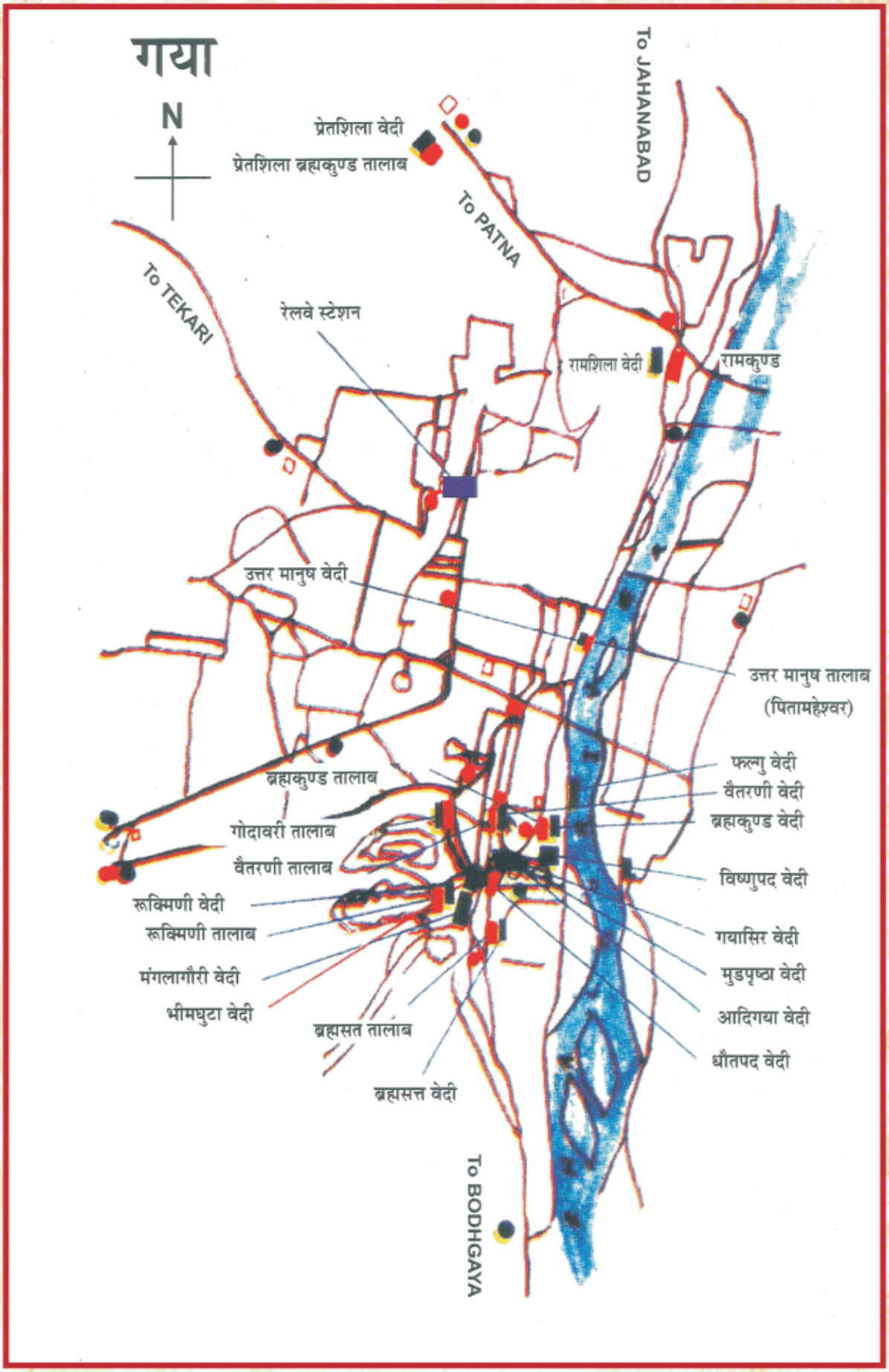
गया
N
प्रेतशिला वेदी
प्रेतशिला ब्रह्मकुण्ड तालाब
To PATNA
To JAHANABAD
To TEKARI
रेलवे स्टेशन
रामशिला वेदी
रामकुण्ड
उत्तर मानुष वेदी
उत्तर मानुष तालाब
(पितामहेश्वर)
ब्रह्मकुण्ड तालाब
फल्गु वेदी
वैतरणी वेदी
ब्रह्मकुण्ड वेदी
गोदावरी तालाब
वैतरणी तालाब
विष्णुपद वेदी
रूक्मिणी वेदी
रूक्मिणी तालाब
गयासिर वेदी
मुडपृष्ठा वेदी
मंगलागौरी वेदी
भीमघुटा वेदी
आदिगया वेदी
ब्रह्मसत तालाब
धौतपद वेदी
ब्रह्मसत्त वेदी
To BODHGAYA

भारतीय संस्कृति की अद्भुत धरोहर है पितृपक्ष महासंगम

संजय कुमार अग्रवाल
भा० प्र० से०

गया एक धार्मिक, सांस्कृतिक एवं पौराणिक महत्त्व का नगर है। यह एक ऐसा स्थल है जो सनातन धर्मावलंबियों एवं बौद्ध धर्मावलंबियों-दोनों के लिए तीर्थस्थान है। सनातन धर्मावलंबियों के लिए विष्णुपद और बौद्ध धर्मावलंबियों के लिए बोधगया, इन दोनों के कारण ही गया की विशिष्ट पहचान है। सनातन धर्मावलंबियों के लिए तो गया मोक्षधाम के रूप में विश्वविख्यात है। यहाँ पूरे वर्ष यात्री आते है और अपने पूर्वजों की आत्मा की चिरशान्ति के लिए तर्पण, पिण्डदान, पितरपूजा आदि कर्म सम्पन्न करते हैं। यह कार्य पितृपक्ष के अवसर पर विशेष रूप से संपादित किया जाता है, जो दिनांक 08.09.2014 से प्रारंभ हो कर 15 दिनों तक चलेगा। इस अवसर पर देश के कोने-कोने से यात्रियों का आगमन विशेष रूप से होता है तथा विदेशों से भी सनातन धर्मावलंबी पितृधाम गया आते हैं और अपने पितरों की आत्मा की चिरशान्ति के लिए धार्मिक कृत्यों का सम्पादन करते हैं। पितृपक्ष एक विशेष अवधि है। साथ ही, पितर-पूजा भारतीय संस्कृति का महान अवदान है। इसी कारण पितृपक्ष की अवधि में गया में सम्पूर्ण भारत का दृश्य दिखाई देता है। अतः इस वर्ष से इस अद्भुत दृश्य व अवसर को पितृपक्ष महासंगम के नाम से ख्याति देने का निर्णय लिया गया है।

गया की आबादी आठ लाख से अधिक है। किन्तु पितृपक्ष की अवधि में यह संख्या दुगुनी हो जाती है। गया के जिलाधिकारी होने के नाते देश-विदेश से आए प्रत्येक यात्री को पन्द्रह दिनों तक सुरक्षित व संतुष्ट रखने का उत्तरदायित्व मुझ पर हो जाता है। निश्चय ही यह चुनौतिपूर्ण कार्य है। इस बात की अनुभूति करते हुए मैंने विभिन्न विभागों के पदाधिकारियों एवं सामाजिक कार्यकर्त्ताओं के साथ अनेक बैठकें की और प्रायः सभी बिन्दुओं पर तत्परता के साथ कार्य प्रारम्भ कर दिया। इसका सुन्दर परिणाम निकला। अब मुझे विश्वास है कि यात्रियों को अबाधगति से बिजली मिलेगी, उन्हें पीने को स्वच्छ पानी मिलेगा, सम्यक् रूप से सुरक्षा मिलेगी और स्वास्थ्य-सुविधाएँ मिलेंगी। यात्रियों के आवासन के लिए पर्याप्त व्यवस्थाएँ की गई हैं। मेरा यह प्रयास होगा कि यात्रियों को इतनी अच्छी सुविधाएँ दी जाएँ ताकि वो पितृपक्ष गया की अच्छी छवि अपने मानस-पटल पर संजोकर ही घर लौटें। यद्यपि काफी कुछ करने की और जरूरत है, जिसके लिए हमलोग एक दीर्घकालीन योजना भी बना रहे हैं जिसमें गया वासियों एवं समस्त यात्रियों का सहयोग आवश्यक है।

पितृपक्ष महासंगम के अवसर पर प्रति वर्ष एक 'स्मारिका' का प्रकाशन किया जाता है। इस स्मारिका के द्वारा गया की धार्मिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक संपदाओं तथा धरोहरों की जानकारी दी जाती है। मैं स्मारिका के सम्पादक मण्डल, इसके विद्वान् लेखकों, विज्ञापन दाताओं को धन्यवाद देना चाहता हूँ। इस महासंगम को सफल बनाने में लगे विभिन्न स्वयंसेवी संगठनों को भी साधुवाद देना चाहता हूँ। इनके अतिरिक्त महासंगम की सफलता के लिए लगे अधिकारियों, कर्मचारियों एवं नगर वासियों के प्रति भी आभार प्रकट करता हूँ।

शुभकामनाओं के साथ

जिला पदाधिकारी-सह-अध्यक्ष
संवास सदन समिति, गया

पितृपक्ष स्मारिका	–	***तर्पण, 2014***
प्रकाशक	–	संवास सदन समिति
पितृपक्ष	–	8 सितम्बर से 24 सितम्बर, 2014
छाया चित्र	–	मनीष भण्डारी
मुद्रण एवं साज-सज्जा	–	मगध प्रिन्टर्स, गया
सहयोग राशि	–	₹ 150 रू० मात्र

स्मारिका के सम्पादन-कार्य से जुड़े सभी सदस्य अवैतनिक हैं। स्मारिका में प्रकाशित रचनाओं में अभिव्यक्त विचारों के लिए स्वयं लेखक-गण उत्तरदायी हैं।

अनुक्रमणिका

1.	शुभ संदेश एवं मंगलकामनाएँ		i - xvi
2.	अतिथि देवो भव	गोवर्द्धन प्रसाद सदय	1
3.	तमिल लेख		3
4.	तेलुगु लेख		4
5.	बंग्ला लेख		5
6.	गया तिर्थक्षेत्राची संक्षिप्त माहिती व वर्णन (मराठी लेख)	बच्चु भाई चौधरी	7
7.	श्राद्ध में योगियों का निमंत्रण	स्वामी राघवाचार्य जी	8
8.	श्राद्ध की धार्मिक एवं दार्शनिक अवधारणा	डॉ० श्रीकान्त मिश्र	10
9.	भारतीय जीवन में कर्मवाद और भाग्यवाद की अवधारणा	डॉ० वंशीधर लाल	18
10.	गया पितृपक्ष की अवधारणा	श्री योगेश्वर शर्मा 'योगेश'	21
11.	नैतिक मूल्यों की प्रासंगिकता	डॉ० राधामोहन तिवारी	22
12.	जल प्रबंधन और तर्पण	श्री अभिषेक शेखर	25
13.	गयावाल पण्डों के उपाधिनाम	डॉ० रामनिरंजन परिमलेन्दु	27
14.	विष्णु-चरण मंदिर-दर्शन और पूर्वजों का श्राद्ध-भाव तर्पण	डॉ० एस. एन. पी. सिन्हा	32
15.	.... वन्दे विश्वास रूपिणौ	डॉ० नलिनी राठौर	33
16.	श्राद्धबलि के लिए गयाधाम की यात्रा सबसे उपयुक्त	श्री कंचन	34

17. गया जी एक सांस्कृतिक पहचान	श्री नवलेश बर्थुआर	36
18. श्राद्ध-तर्पण और दान	डॉ० सरदार सुरेन्द्र सिंह	38
19. बहुतेरे पुत्रों को समान अधिकार	आचार्य नवीन चन्द्र मिश्र 'वैदिक'	40
20. पुण्यश्लोक लोकमाता अहिल्याबाई होल्कर	प्रो० डॉ० महेश कुमार शरण	41
21. शिखरस्थ साहित्य-साधक 'वियोगी जी'	डॉ० राजदेव शर्मा	45
22. गया महात्म्य	श्री सुमन्त	49
23. सीता कुण्ड में सीता जी ने किया था पिण्ड दान	श्री गणेश प्रसाद	50
24. अन्तःसलिला फल्गु के तट पर बसे धार्मिक स्थल	श्री रामनरेश सिंह पयोद	51
25. जीवन में कर्मयोग की भूमिका	डॉ० संकेत नारायण सिंह	53
26. जोग लगन ग्रहवार-तिथि सकल भये अनुकूल	डॉ० राधानन्द सिंह	54
28. विभिन्न तिथियों, नक्षत्रों एवं दिनों में श्राद्ध-फल	प्रो० राधे मोहन प्रसाद	57
29. गया के गौरव-वृद्धि में चीनी यात्रियों का योगदान	डॉ० राकेश कुमार सिन्हा 'रवि'	59
30. गया-तीर्थ का अंधकार युग	डॉ० शत्रुघ्न दांगी	60
31. श्राद्ध का अधिकार महिलाओं को भी	डॉ० अनिल सक्सेना	62
32. पितृपक्ष एक पर्व है	श्री रामवचन सिंह	64
33. सनातन धर्म में श्राद्ध की महत्ता	श्री मनीष कुमार	65
34. संस्कृत मूला भारतीय संस्कृति	डॉ० वेंकटेश शर्मा	67
35. पितृतीर्थ गया का महात्म्य	डॉ० रमेश शर्मा	70
36. भारतीय संस्कृति का दर्पण संत साहित्य	डॉ० राम सिंहासन सिंह	73
37. पितरों के प्रति असीम श्रद्धा की झलक	श्री मुकेश कुमार सिन्हा	78
38. सप्त दिवसीय गया-यात्रा	डॉ० श्रीनिवास शर्मा	79
39. फल्गु का महत्त्व गंगा से कम नहीं	श्री ब्रजनन्दन पाठक	81
40. गया में बारहों मास पिण्डदान	श्री अशोक कुमार अंज	84
41. पितृपक्ष और जीवित पुत्रिका व्रत	श्री चंचला रवि	87
42. गया में रेल-व्यवस्था	डॉ० मनोज कुमार अम्बष्ठ	88
43. मानव जीवन का अंतिम पड़ाव है आत्म साक्षात्कार	श्रीमती अनुराधा प्रसाद	93
44. राजकीय गया संग्रहालय : एक झलक	डॉ० विनय कुमार	94
45. असत्य को त्याग सत्य का सहारा लेना मानवोचित धर्म	श्री विजय कुमार सिन्हा	96
46. गरुड़ के सात प्रश्न और कागभशुण्डि जी के उत्तर	श्री लीलाकान्त झा	97
47. श्रद्धा, श्राद्ध और आत्म-सत्ता	डॉ० सच्चिदानन्द प्रेमी	100
48. लक्ष्मण गीता	श्री शिववचन सिंह	102
49. हिन्दू धर्म और पितृ-तीर्थ गया	डॉ० सोनू अन्नपूर्णा	103
50. पितृपक्ष : विश्व का अनूठा मेला	श्री अनन्त कुमार	105
51. The Spiritual Heritage of Gaya	Dr. K. K. Narayan	106

सत्यमेव जयते

भारत के उप-राष्ट्रपति के संयुक्त सचिव
और विशेष कार्य अधिकारी
JOINT SECRETARY &
OFFICER ON SPECIAL DUTY
TO THE VICE-PRESIDENT OF INDIA
TEL. : 23016422 / 23016344 FAX : 23012646

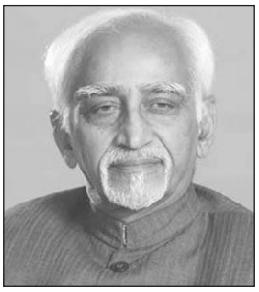

शुभकामना संदेश

महामहिम उपराष्ट्रपति जी को यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि विगत वर्षों की भांति इस वर्ष भी जिला प्रशासन, गया 8 से 24 सितम्बर 2014 माह में पितृपक्ष मेले का आयोजन करने जा रहा है। इस अवसर पर जिला प्रशासन द्वारा एक स्मारिका का प्रकाशन भी किया जाएगा, जो एक सराहनीय प्रयास है।

उपराष्ट्रपति जी पितृपक्ष 2014 एवं प्रकाश्य स्मारिका के सफलता हेतु अपनी शुभकामनाएँ प्रेषित करते हैं

नई दिल्ली
22 अगस्त, 2014

(नागेश सिंह)

DR. D. Y. PATIL
GOVERNOR OF BIHAR

सत्यमेव जयते

RAJ BHAWAN
PATNA - 800 022
Ph. 0612-2217826 Fax 2786184

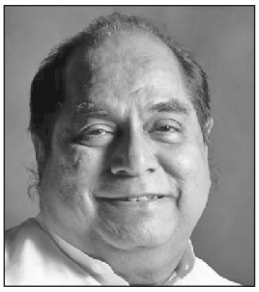

शुभकामना संदेश

यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हुई कि विश्वप्रसिद्ध 'पितृपक्ष मेला-2014' (8-24 सितम्बर) के आयोजन से जुड़ी स्मृतियों को संजोने और इस मेले की ऐतिहासिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक महत्ता को प्रतिपादित करने के उद्देश्य से एक सारगर्भित स्मारिका के प्रकाशन का निर्णय जिला प्रशासन, गया द्वारा लिया गया है।

आशा है, मेल में देश-विदेश से अपने पितरों की आत्मा की शांति हेतु तर्पण करने पहुँचने वाले तीर्थ-यात्रियों को बेहतर सुविधा और व्यवस्था उपलब्ध करायी जाएगी। मेला के सफल आयोजन एवं 'स्मारिका' के उपयोगी प्रकाशन हेतु शतशः शुभकामनाएँ।

(डॉ० डी० वाई० पाटिल)

मुख्यमंत्री
बिहार

बिहार सरकार

पटना

शुभकामना संदेश

यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हुई कि गया में विश्व प्रसिद्ध 'पितृपक्ष मेला' दिनांक 8 सितम्बर 2014 से प्रारंभ होगा और 24 सितम्बर 2014 तक चलेगा। इस उपलक्ष्य में जिला प्रशासन, गया द्वारा एक 'स्मारिका' प्रकाशित करने का निर्णय भी लिया गया है।

गया एक पौराणिक शहर है। ऐसी मान्यता है कि यहीं पिण्डदान करने से पितरों की आत्मा को शान्ति मिलती है। उन्हें मोक्ष प्राप्त होता है। आस्था के इसी प्रवाह में बहकर देश और विदेश से हजारों नर-नारी इस शहर में आते हैं और पितृपक्ष में पिण्डदान की क्रिया सम्पन्न करते हैं। इस शहर में आनेवाले श्रद्धालु हमारे आदरणीय अतिथि हैं। उनकी सुख-सुविधा का ख्याल रखना हमारा परम कर्त्तव्य है। हमारी अपेक्षा है कि जिला प्रशासन इस अवसर पर शहर की साफ-सफाई, बिजली, पानी का समुचित प्रबंध और कानून व्यवस्था बनाये रखने हेतु हर संभव प्रयास करेगा ताकि आनेवाले यात्रियों को कष्ट न हो और उनकी श्रद्धा के प्राबल्य को आघात न पहुचे।

मुझे विश्वास है कि गया शहर के नागरिकगण भी पितृपक्ष मेला को सफल बनाने में अपना महत्त्वपूर्ण सहयोग जिला प्रशासन को देंगे।

'स्मारिका' के सफल प्रकाशन हेतु मेरी मंगलकामनाएँ।

(जीतन राम मांझी)

उदय नारायण चौधरी
अध्यक्ष
बिहार विधान सभा

बिहार सरकार

Uday Narain Choudhary
Speaker
Bihar Legislative Assembly

शुभकामना संदेश

यह अत्यन्त ही प्रसन्नता की बात है कि गया जिला प्रशासन द्वारा पितृपक्ष मेला 2014 के अवसर पर एक स्मारिका के प्रकाशन का निर्णय लिया गया है।

ऐतिहासिक एवं धार्मिक नगरी गया की फल्गु नदी के तट पर प्रत्येक वर्ष पितृपक्ष मेला का अयोजन किया जाता रहा है। इस अवसर पर देश के विभिन्न भागों से ही नहीं, बल्कि विदेशों से भी लाखों की संख्या में धर्मावलम्बी गया पहुँचकर अपने पूर्वजों की आत्मा की शांति हेतु श्रद्धापूर्वक श्राद्ध करते हैं। इस अवसर पर स्मारिका के प्रकाशन का निर्णय सराहनीय हैं। उम्मीद है कि इस स्मारिका में विगत वर्ष तथा वर्तमान वर्ष के पितृपक्ष मेला की जानकारियाँ समावेषित की जायेगी, जिससे आम जनता लाभान्वित हो सकेगी।

मैं पितृपक्ष मेला 2014 की सफलता तथा इस अवसर पर प्रकाशित होने वाली स्मारिका के सफल प्रकाशन की कामना करता हूँ।

(उदय नारायण चौधरी)

2, देशरत्न मार्ग, पटना
2, Deshratna Marg, Patna
☎ : 0612-2217856, 2217082 (O)
☎ : 0612-2215858, 2215232 (R)
Fax : 0612-2217373 (O) 2217343
e-mail : unchoudhary@gmail.com

अवधेश नारायण सिंह
सभापति
बिहार विधान परिषद्

बिहार सरकार

Awadesh Narain Singh
Chairman
Bihar Legislative Council

शुभकामना संदेश

प्रत्येक वर्ष आश्विन माह में आयोजित होनेवाला 'गया का पितृपक्ष मेला' पौराणिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से हिन्दू आस्था का प्रतीक है। अपने पितरों की आत्मा की शांति हेतु देश-विदेश से लाखों की संख्या में श्रद्धालुगण हर वर्ष पवित्र फल्गुतट पर पधारकर पितृ तर्पण करते हैं, जिला प्रशासन के अथक सहयोग से यह मेला हर वर्ष शांतिपूर्ण ढंग से सम्पन्न होता है। इस अवसर पर एक स्मारिका का भी प्रकाशन किया जाता है।

मेला के सफल आयोजन एवं इस अवसर पर प्रकाश्य स्मारिका हेतु मेरी अशेष शुभकामनाएँ स्वीकार करें।

7/8/14

(अवधेश नारायण सिंह)

2, कौटिल्य मार्ग, पटना - 800001
2, Kautilya Marg, Patna - 800001
Tel : 0612-2215819, 2215245 (O), Fax-2215683
2215617 (R) Mob. : 9431018630

नरेन्द्र नारायण यादव
मंत्री
राजस्व एवं भूमि सुधार विभाग
बिहार सरकार

बिहार सरकार

दूरभाष सं० : 0612 – 2217355 (का.+फैक्स)
0612 – 2222988 (आ.)
मोबाईल सं० : 919430829401
10, दारोगा प्र० राय पथ, पटना – 800 001

शुभकामना संदेश

यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हो रही है कि प्रत्येक वर्ष की भाँति इस वर्ष भी गया की पावन धरती पर विश्व प्रसिद्ध पितृपक्ष मेला 08 सितम्बर, 2014 से प्रारंभ होकर 24 सितम्बर, 2014 तक चलेगा। इस अवसर पर लोग अपने पितरों की आत्मा की शान्ति हेतु तर्पण करते हैं। इस ऐतिहासिक एवं पावन अवसर पर देश-विदेश से लाखों श्रद्धालुगण एवं तीर्थ यात्री इस मेला में सम्मिलित होते हैं।

पितृपक्ष मेला की सफलता तथा स्मारिका के सफल प्रकाशन हेतु मेरी हार्दिक शुभकामनाएँ।

(नरेन्द्र नारायण यादव)

श्याम रजक
شیام رجک

बिहार सरकार

मंत्री
खाद्य एवं उपभोक्ता संरक्षण विभाग
बिहार, पटना

पत्रांक .....

दिनांक .....

शुभकामना संदेश

यह जानकर अत्यंत प्रसन्नता हो रही है कि पितृपक्ष मेला-2014 के अवसर पर गया प्रशासन द्वारा स्मारिका का प्रकाशन कराया जा रहा है।

अपने पूर्वजों के प्रति श्रद्धा व्यक्त करना ही श्राद्ध हैं। यू तो विश्व के विभिन्न धर्मों में आत्मा एवं पुनर्जन्म पर मत विभिन्नता हैं। परन्तु सभी संप्रदायों में अपने दिवंगत प्रियजनों को याद कर उनके प्रति श्रद्धा व्यक्त करने की परम्परा सर्वमान्य है। हिन्दू भी एक निश्चित तिथि को अपने पूर्वजों के प्रति श्रद्धा व्यक्त करने हेतु श्राद्ध करते हैं। देश के विभिन्न स्थानों पर श्राद्ध की परंपरा रही है। परन्तु गया में किया गया पिंडदान हिन्दुओं के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण माना जाता है। इस अवसर पर देश-विदेश के श्रद्धालुओं द्वारा अपने पूर्वजों के तर्पण हेतु गया आगमन होता है।

पितृपक्ष मेले में आने वाले तीर्थ यात्रियों/श्रद्धालुओं को प्रशासन एवं स्थानीय जनता का पूर्ण सहयोग मिलेगा। इसका मुझे पूर्ण विश्वास है।

स्मारिका के सफल प्रकाशन की कामना करता हूँ।

सधन्यवाद!

(श्याम रजक)

कार्यालय : ग्राऊंड फ्लोर, पुराना सचिवालय, पटना, बिहार। दूरभाष : 0612-22217819, फैक्स : 0612-2215077
आवासीय कार्यालय : 20ए, हार्डिंग रोड, पटना। दूरभाष : 0612-2205740, दूरभाष+फैक्स : 0612-2215276, मो० : 9431022200
E-mail : shyam@shymarajak.com **Website : wwww.shyamrajak.com**

जावेद इकबाल अंसारी
मंत्री
पर्यटन विभाग, बिहार

बिहार सरकार

मुख्य सचिवालय
पटना – 800 015
दूरभाष : 91-612-221122
फैक्स : 91-612-2216199

शुभकामना संदेश

मुझे यह जानकर काफी प्रसन्नता हुई कि गया नगर में विश्व प्रसिद्ध पितृपक्ष मेला दिनांक 08 सितम्बर 2014 को प्रारम्भ हो रहा है। यह मेला दिनांक 24 सितम्बर 2014 तक चलेगा। इस अवसर पर देश-विदेश के लाखों तीर्थ यात्री गया पहुँचकर अपने पितरों की आत्मा की चिर शांति के लिए तर्पण करेंगे। हिन्दुओं के सदग्रन्थों में ऐसी मान्यता है कि पितृपक्ष में गया में पितरों का पिण्डदान करने से उन्हें मोक्ष की प्राप्ति होती है।

गत वर्ष की भाँति इस वर्ष भी इस अवसर पर जिला प्रशासन के द्वारा एक स्मारिका का प्रकाशन किया जा रहा है। निश्चय ही यह एक सराहणीय प्रयास है। में स्मारिका के सफल प्रकाशन की कामना करता हूँ।

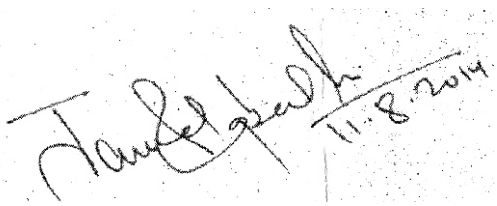

(डॉ० जावेद इकबाल अंसारी)

डॉ० विनोद प्रसाद यादव
मंत्री
पंचायती राज विभाग
बिहार सरकार, पटना

बिहार सरकार

Dr. Vinod Prasad Yadav
Minister
Panchayati Raj Department
Govt. of Bihar, Patna

शुभकामना संदेश

पितृपक्ष मेला हिन्दी कैलेण्डर के अनुसार भाद्रपद शुक्ल पक्ष के अनन्त चतुर्दशी के दिन से प्रत्येक वर्ष प्रारंभ होता है। हर वर्ष बड़ी संख्या में सनातन हिन्दू पिण्डदान के लिए गया आते हैं ताकि उनके पूर्वजों को मोक्ष प्राप्ति हो सके। इसके लिए वे पिण्डदान के साथ अन्य धार्मिक क्रिया-कलापों को विभिन्न वेदियों पर जो विष्णुपद मंदिर, फल्गु नदी, अक्षयवट, सीताकुंड, पितामहेश्वर एवं अन्य स्थानों पर स्थित है, करते हैं। यह मान्यता है कि पितृपक्ष के दौरान गया में पिण्डदान करने से उनके पूर्वजों की आत्मा को मोक्ष प्राप्ति में सहायता मिल सकती है। गया पिण्ड दान के लिए अति पवित्र स्थल है। पिण्डों व्यक्तिगत रूप से भगवान विष्णु के चरण-चिन्हों को समर्पित किया जाता है।

पिण्ड दान के लिए गया आने वाले पिण्ड दानियों को मेरी और बिहार सरकार की ओर से ढेर सारी शुभकामना है। पितृपक्ष के अवसर तीर्थ यात्रियों की सुविधा हेतु गया जिला प्रशासन के द्वारा बिजली, पानी के साथ-साथ नगर में स्वच्छता उपलब्ध कराना एवं विधि-व्यवस्था बनाये रखने में महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। गया जिला प्रशासन को भी पितृपक्ष मेले की ढेर सारी शुभकामना।

भवदीय
01/07/14
(डॉ० विनोद प्रसाद यादव)

आवास : B-3/22, राजवंशी नगर, बेली रोड, पटना
शेरघाटी आवास : नया बाजार, शेरघाटी, गया

दूरभाष : 0612-2280689
मोबाईल : 0-9471006789

Prof. (Dr.) Md. Ishtiyaque
VICE-CHANCELLOR

MAGADH UNIVERSITY
NH-83, Bodhgaya, Gaya - 824 234. (Bihar) India
Mobile : +91-8757652429
Tele. : +91-631-2222714, 2220387 (R)
Fax : +91-631-2221717 (R), 2200572 (O)
Phone : +91-631-2200495 (O)
Website : www.magadhuniversity.ac.in
e-mail : mishtiaak@gmail.com

शुभकामना संदेश

मुझे यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हो रही है कि विगत वर्षों की भाँति इस वर्ष भी जिला प्रशासन की ओर से विश्व प्रसिद्ध पितृपक्ष मेला 2014 के पावन अवसर पर स्मारिका का प्रकाशन किया जा रहा है। इस पावन अवसर पर न केवल देश से बल्कि विदेशों से भी हजारों की संख्या में श्रद्धालु-धर्मावलम्बी विष्णुपद में तर्पण और पिंडदान कर अपने पितरों की आत्मा को चिर शान्ति दिलाते हैं आशा है, प्रकाशित होने वाली स्मारिका में गया के पौराणिक, धार्मिक, आध्यात्मिक तथा सांस्कृतिक विरासत से सम्बन्धित शोधपरक आलेख प्रकाशित होंगे जो पाठकों के लिए ज्ञानवर्द्धक तथा प्रेरणादायी होंगे।

मैं पितृपक्ष मेला के सफल आयोजन तथा स्मारिका के सफल प्रकाशन की मंगल कामना करता हूँ।

(मो० इश्तियाक)

आर० के० खण्डेलवाल
भा०प्र०से०
आयुक्त
मगध प्रमण्डल
गया – 823 001 (बिहार)

सत्यमेव जयते

2225821 (का०)
2229002 (आ०)
0631-2221641 (फैक्स)
ई-मेल : divcom-magadh-bihar@nic.in

शुभकामना संदेश

इस वर्ष पितृपक्ष मेला 08 सितम्बर से प्रारंभ होकर 24 सितम्बर 2014 तक मनाया जा रहा है। इस अवसर पर देश-विदेश के लाखों तीर्थयात्री मोक्षधाम गया आकर अपने पितरों की मुक्ति एवं उनकी आत्मा की शांति हेतु पिण्डदान एवं तर्पण करते हैं। यहाँ आनेवाले श्रद्धलुओं के आवासन, पेयजल, सुरक्षा व्यवस्था, चिकित्सा व्यवस्था, यातायात एवं परिवहन, सफाई इत्यादि सभी सुविधाओं के लिए प्रशासन द्वारा व्यापक व्यवस्थायें की गई हैं। आशा है कि यहाँ आने वाला प्रत्येक तीर्थयात्री एक मधुर स्मृति लेकर वापिस जायेगा।

गया न केवल सनातन धर्मावलम्बियों के लिए बल्कि अन्य धर्मों के अनुयायियों के लिए भी महत्त्वपूर्ण संगम स्थल है। बोधगया में भगवान बुद्ध को ज्ञान की प्राप्ति हुई और उन्होंने सत्य, अहिंसा और करूणा का संदेश दिया। यह स्थल विश्व के समस्त बौद्ध धर्मावलम्बियों के लिए आस्था का महान केन्द्र है एवं इसे विश्व धरोहर भी घोषित किया गया है।

गया जिला में अनेक मनोहारी पर्यटक स्थल हैं। यहाँ से महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक पुरावशेष मिले हैं। ऐतिहासिक, धार्मिक, पौराणिक एवं सांस्कृतिक दृष्टिकोण से महत्त्वपर्ण गया के समृद्ध विरासत के संरक्षण एवं यहाँ के पर्यटक स्थलों के विकास के लिए सरकार निरंतर प्रयत्नशील है। इस कड़ी में इस मेले को राजकीय मेला घोषित किया गया है।

यह अत्यंत प्रसन्नता का विषय है कि पितृपक्ष मेला 2014 के अवसर पर जिला प्रशासन, गया द्वारा स्मारिका प्रकाशित की जा रही है। मुझे विश्वास है, ये पितृपक्ष मेला से संबंधित पहलुओं से जनमानस को अवगत कराने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायेगा।

पितृपक्ष मेला के आयोजन एवं स्मारिका प्रकाशन की सफलता की शुभकामनाओं सहित।

(आर० के० खण्डेलवाल)

प्रदीप कुमार श्रीवास्तव
भा०पु०से०
पुलिस उप–महानिरीक्षक
मगध क्षेत्र, गया।

सत्यमेव जयते

मोबाईल– 9431822960
कार्यालय– 0631–2223085
आवास– 0631–2222349
फैक्स – 0631–2222352

शुभकामना संदेश

मुझे यह जानकर काफी प्रसन्नता हो रही है कि विश्व प्रसिद्ध पितृपक्ष मेला गया नगर में 08 सितम्बर से प्रारंभ हो रहा है। हिन्दू धर्म के मतानुसार ऐसी धारणा है कि गया में पिण्डदान करने से पितरों को मोक्ष की प्राप्ति होती है। यही कारण है कि केवल भारत ही नहीं विदेशों में बसे हिन्दू भी अपने पितरों की चिर शान्ति के लिए तर्पण–श्राद्ध हेतु गया जी पधारते हैं। इस अवसर पर स्मारिका का प्रकाशन निश्चय हीं एक सराहनीय प्रयास है।

पितृपक्ष मेला 2014 के सफल एवं शान्तिपूर्ण संचालन तथा इस अवसर पर प्रकाशित होने वाली स्मारिका की सफलता हेतु मेरी हार्दिक शुभकामनाएँ।

(प्रदीप कुमार श्रीवास्तव)

निशांत कुमार तिवारी, भा.पु.से.
वरीय पुलिस अधीक्षक
गया

सत्यमेव जयते

फोन नं० - 0631 - 2225901 (O)
2225902 (R)
मो० : 9431822973

शुभकामना संदेश

यह जानकर काफी प्रसन्नता हो रही है कि प्रतिवर्ष की भाँति इस वर्ष भी नैसर्गिक सुषमा से आच्छादित, समन्वयवादी संस्कृति से आप्यायित, आध्यात्मिक स्पन्दन से झंकृत एवं कर्म-ज्ञान-भक्ति से आप्लावित, सदानीरा अन्तःसलिला के पुलिन पर अवस्थित नगर गया में प्रागैतिहासिक काल से आयोजित पन्द्रह दिवसीय पितृपक्ष मेला का दिनांक 08.09.2014 से शुभारम्भ हो रहा है। ब्रह्मर्षियों का सत्संग ही काल-चक्र के अनवरत प्रवाह-क्रम में वाह्य-कर्म काण्ड के विधान द्वारा श्रद्धा और आस्था के समेकित रुप में परिवर्तित होकर ''पिण्डदान'' और ''पितृपक्ष मेला'' के स्वानुष्ठान में आयोजित होता रहा है। ईश्वर के सगुण-साकार के प्रतीकात्मक स्वरूप की ब्रह्माण्डीय सत्ता का पिण्ड में आवाहन कर निर्गुण-निराकार रूप में विलय का संकल्प ही पिण्डदान है। इस अवसर पर देश-विदेश से लाखों की संख्या में तीर्थयात्री पधार कर इस आस्था-नगरी में अपने पितरों के लिए पिण्डदान कर मुक्ति हेतु कामना करते हैं।

इस अवसर पर अपनी समस्त प्रशासनिक, अनुशासनिक, धार्मिक एवं आध्यात्मिक ऊर्जा का राशीभूत रूप इस पुनीत अवसर पर समर्पित भाव से निष्काम सेवा द्वारा प्रदान कर सुख, शांति एवं सुरक्षा की भावना को सतत् क्रियमाण रखना ही पुलिस विभाग का मूल उद्देश्य है। ''मातृ देवो भव, पितृ देवो भव, आचार्य देवो भव, अतिथि देवो भव'' का औपनिषदिक भाव हमारे पुलिस विभाग के समस्त सहकर्मियों के अंतः करण में संचरित होता रहे यही मेरी हार्दिक शुभकामना है।

गया जिला अपनी स्थापना के 150वें वर्ष में 03 अक्टूबर, 2014 ई० को प्रवेश करेगा। गया नगर के तमाम नागरिकों, पितृपक्ष अनुष्ठान से जुड़े सभी आचार्यों-होताओं, उध्वर्यु, उद्गाताओं एवं अपने विभागीय सहकर्मियों का आह्वान करता हूँ कि अपनी सेवा एवं आतिथ्य भावना से आगत तीर्थयात्रियों को संतुष्ट और प्रसन्न रख कर अपनी गौरवमयी परम्परा को बनाये रखें।

इस शुभ अवसर पर प्रकाश्य 'स्मारिका' के सम्पादक मण्डल, प्रकाशन से जुड़े नगर एवं जिला प्रशासन के समर्पित सहकर्मीगण एवं सुधी पाठकों के साथ-साथ सभी तीर्थ यात्रियों एवं उनके पूर्व पुरुषों को नमन करता हूँ।

'स्मारिका' आर्य संस्कृति की संवाहिका बनकर गवेषणात्मक तथ्यों से भावी पीढ़ी का मार्गदर्शन करे। इसी शुभकामना के साथ।

(निशांत कुमार तिवारी)

सम्पादक की कलम से ....

अतिथि देवो भव

पितृपक्ष की अवधि अपने आप में ही यथेष्ट महत्त्वपूर्ण है। यों तो इसे लोग मगध और विशेषकर गया की सीमा में ही बाँध देते हैं, किन्तु सच्चाई यही है कि सम्पूर्ण सनातन धर्मवलंबियों के लिए यह अवधि अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। इस अवधि में पितरों को स्मरण किया जाता है- श्रद्धापूर्वक उनकी आत्मा की शान्ति के लिए कर्मकाण्ड में बतायी गयी विधियों के अनुरूप पितर-पूजा तथा श्राद्ध-कर्म सम्पन्न किए जाते हैं। पितर-पूजा तथा गया-श्राद्ध की यह परम्परा कब से चली आ रही है, कोई नहीं जानता। अनादि काल से यह परम्परा चली आ रही है। आज के वैज्ञानिक युग में भी हम ने अपने हृदय की श्रद्धा पर मस्तिष्क के तर्क को हावी होने नहीं दिया है। यही कारण है कि संसार के जिस कोने में भी सनातन धर्मावलंबी हैं, वे पितृपक्ष की अवधि में गयाधाम आकर गया-श्राद्ध करने को लालायित रहते हैं। पितृपक्ष की अवधि में देश के कोने-कोने से यात्री यहाँ आते हैं, गया धाम में सोलह सतरह दिनों तक उनका आवास रहता है। अत: इस समय ऐसा प्रतीत होता है कि सम्पूर्ण भारतवर्ष गयाधाम में आकर सिमट गया है। इस अवधि में गया धाम की आबादी दुगुनी-तिगुनी बढ़जाती है। फिर भी सभी ओर सुख-शान्ति और आनन्द परिव्याप्त रहता है। प्रशासन के साथ-साथ गया धाम के निवासी भी अपने अतिथियों के स्वागत के लिए पूर्ण रुपेण तत्पर रहते हैं, गया धाम के कण-कण में यह भाव प्राणवायु की तरह विद्यमान है कि- अतिथि देवो भव।।

गयाधाम में जो तीर्थ-यात्री आते हैं, उनकी आंतरिक इच्छा रहती है पितरों को तृप्ति लाभ पहुँचाना। और इसी निमित्त वे यहाँ श्राद्ध-कर्म सम्पादित करते हैं। उनके इस आध्यात्मिक अनुष्ठान में हम सब सहभागी रहते हैं और अपने 'स्व' से ऊपर उठकर अतिथि-सेवा के भाव से उत्प्रेरित उन्हें यथा-साध्य सुख-सुविधा पहुँचाने को तत्पर रहते हैं, ताकि उन्हें अपने धार्मिक अनुष्ठान में किसी प्रकार की कठिनाई नहीं हो। इस दिशा में गया प्रशासन पूरी तरह चौकस और तत्पर रहता है। गया प्रशासन की ओर से तीर्थ-यात्रियों को विशेष मनोरंजन के क्षण भी उपलब्ध कराये जाते हैं। तीर्थ-यात्री दिन में धार्मिक अनुष्ठान सम्पादित करने के बाद संध्या समय भजन-कीर्तन तथा प्रवचत का लाभ उठायें इसकी भी व्यवस्था प्रशासन की ओर से की जाती है। और इसी क्रम में पितृपक्ष की अवधि में एक स्मारिका प्रकाशित करने की योजना भी बनी ताकि जो तीर्थ-यात्री यहाँ से लौंटें, तो उनके साथ एक ऐसा सारस्वत अवदान रहे, जिससे वे गयाधाम तथा पितृपक्ष और पितर-पूजा का मर्म हृदयंगम कर सकें।

स्मारिका प्रशासन के क्रम में प्रस्तुत अंक इस कड़ी का उन्नीसवाँ पुष्प है। प्रकाशन का शुभारंभ 1995 में हुआ था। उस समय इसका नाम चंरणामृत रखा गया था। तत्पश्चात निरंजना, सेतु, श्रद्धा, परिक्रमा, प्रदक्षिणा, तर्पण, श्राद्धांजलि, नैवेद्य, पुष्पाज्जलि, अर्चना, आराधना, नीराजन, तीर्थामृत नाम दिए गए। नए-नए नामों से स्मारिका को अभिहित करने का क्रम 1995 से 2008 तक अनवात चला। तत्पश्चात् गया प्रशासन ने निश्चय किया कि इसका एक ही नाम स्थायी रुप से रखा जाय और तदनुकूल **तर्पण** नाम से यह स्मारिक प्रकाशित की जा रही है। बीच में सन् 2012 ई० में कुछ अपरिहार्य कारणों से इसका प्रशासन सम्भव नही हो सका था। किन्तु बाद में पुन: इसका प्रकाशन हो रहा है। आज तर्पण, 2014 अपने पाठकों के समक्ष प्रस्तुत है।

इस अवसर पर हम गयाधाम के जिलाधिकारी श्री संजय कुमार अग्रवाल के प्रति आभार प्रकट करना चाहते हैं कि उन्होंने अपने समुचित मार्ग-दर्शन से स्मारिका को भव्यता प्रदान की है। संवास सदन समिति के अध्यक्ष होने के नाते वे ही स्मारिका के संरक्षक भी हैं, साथ ही पितृपक्ष मेला का सम्पूर्ण दायित्व जिलाधिकारी को तो रहता ही है, संवास सदन समिति के अध्यक्ष होने के नाते उत्तरदायित्व बढ़ जाता है। पितृपक्ष के कुछ माह पूर्व ही इन्होंने गया के जिलाधिकारी के रुप में पदभार ग्रहण किया है। फिर भी, इस कम अवधि में ही इन्होंने पितृपक्ष मेला से संबंधित प्रत्येक बिन्दुओं का यथेष्ट निरीक्षण किया और सभी दिशाओं में विभिन्न सरकारी विभागों के कार्यों को समुचित मार्ग-दर्शन भी किया। जिलाधिकारी महोदय के आदेशानुसार वरीय उप समाहर्ता श्री शंभु शरण बहादुर तथा जिला जनसम्पर्क पदाधिकारी श्री अनन्त कुमार जी ने भी जो सहयोग दिया, उसके लिए उनके प्रति भी हम कृतज्ञता ज्ञापित करते हैं। साथ ही हम अपने विद्वान लेखकों के आभारी हैं कि उन्होंने मेरे आग्रह पर अपना आलेख सुलभ करा दिया है। इसके अतिरिक्त कुछ विद्वान लेखकों से हम क्षमायाचना भी करते हैं- कारण, कुछ विवशता के कारण कई विद्वान लेखकों के आलेखों को हम प्रकाशित नहीं कर सके हैं। जगह की कमी, समय की कमी तथा भावों और विषयों की पुनरावृत्ति से बचने आदि के कारण अभिलेखों में काट-छाँट भी करनी पड़ी है। विद्वान लेखकों को इसकी शिकायत होगी किन्तु, मेरी विवशता देखते हुए वे मुझे क्षमा प्रदान करेंगे। हम अपने विज्ञापन-दाताओं के प्रति भी आभार प्रकट करते हैं।

अन्त में मैं यही निवेदन करूँगा कि हमारा पूरा सम्पादक मण्डल स्मारिका के कार्य को भगवान् विष्णु की पूजा समझ कर ही सम्पादित करता रहा है। अतः हमें विश्वास है हमारे पाठक-गण भी इसे भगवान् विष्णु का प्रसाद समझकर ही ग्रहण करेंगे।

।। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।।

- गोवर्द्धन प्रसाद सदय
प्रधान सम्पादक - तर्पण, 2014

◆

हरि व्यापक सर्वत्र समाना।
प्रेम ते प्रकट हों हि मैं जाना।।

- गोस्वामी तुलसीदास

கயாவில் பிண்டப் பிரதானம் செய்வது பற்றிய வரலாறும் முக்கியத்துவமும்

இந்தியாவில் கயா ஒரு தனிச் சிறப்பு மிக்கதும் பழமையானதுமான ஒரு நகரமாகும். உலகமெங்கிலுமிருந்தும் வரும் இந்து மத புனித யாத்ரீகர்களுக்கு இது ஒரு முக்கியத்துவம் வாய்ந்த நகரமாகும். வரலாறு மற்றும் கலாசாரத்துடன் ஆன்மிகத்தையும் அனுபவிக்க விரும்பும் நம்பிக்கைகளுடன் அவர்கள் தங்களுடைய மூதாதையர்களை வணங்கி வழிபடவும் வருகிறார்கள். மாபெரும் புராண காப்பியங்களான இராமயணம் மற்றும் மகாபாரதத்தில் இந்த கயா நகரத்தை முறையே மகத சேத்ரம் மற்றும் கயாபுரி என்றும் குறிப்பிடப்பட்டுள்ளது. கயாவில் பிண்டப் பிரதானம் செய்வது முக்திக்கான வழி என்று அறியப்படுகிறது. (முக்தி என்பது பிறப்பு, இறப்பு மற்றும் மறுபிறப்பு என்ற வாழ்க்கை சக்கரத்திலிருந்து விடுபடுதல் என்பதாகும்.) இந்து மத தத்துவம் பிறப்பு மற்றும் மறுபிறப்பு என்ற வாழ்க்கை சக்கரத்தில் நம்பிக்கை கொண்டுள்ளது. இறந்தவர்களின் ஆன்மா இந்த பூமியிலும் நரகத்திலும் பயங்கரமான இடங்களிலும் உலவுகின்றது. எனவே நம்மை விட்டு இந்த உலகத்திலிந்து பிரிந்து சென்ற ஆன்மாவிற்கு அமைதிகிடைக்க வேண்டியும் நரகத்தில் அந்த ஆன்மா அனுபவிக்கும் வேதனைகளிலிருந்து விடுபடவும் இறந்தவரின் வாரிசான குடும்ப உறுப்பினர்கள் கண்டிப்பாக கயாவுக்கு வந்து பிண்டப் பிரதானம் செய்ய வேண்டும். கயாவில் பிண்டப் பிரதானம் செய்யப்பட்டவுடன் இவ்வுலகை விட்டுச் சென்ற ஆன்மா முக்தி என்ற விடுதலையைப் பெற்றுவிடும.(இதைத்தான் மோட்சம் என்று சொல்கிறார்கள்). கயாவில் பிண்டப் பிரதானம் செய்யப்படும் வரையில் அலைந்து திரியும் அந்த ஆன்மா அதனுடைய வாரிசுகளை சபித்துக்கொண்டே இருக்கும் என்று நம்பப்படுகிறது. அந்தக் குடும்பம் கவலைகளிலும் பிரச்னைகளிலும் உழன்றுகொண்டே இருக்கும். இதைத்தான் 'பித்ரு தோஷம" என்று அழைக்கிறார்கள். கயாவில் பிண்டப் பிரதானம் செய்வதன் மூலம் மட்டுமே இந்த தோஷத்தை நீக்க முடியும். பிண்டப் பிரதானம் செய்ய யார் யார் கயாவுக்கு வருகிறார்களோ அவர்கள் அருளும் ஆசிர்வாதமும் பெற்றவர்கள் ஆகிறார்கள். தாய்-தந்தையர் வழியில் வரும் ஏழு தலைமுறையினரும் பயன் பெறுகின்றனர் என்பதோடு பிண்டப் பிரதானம் செய்யும் அந்த நபரும் பிறப்பு-இறப்பு என்ற வாழ்க்கை சக்கரத்திலிருந்து விடுதலைப் பெறுவார் ஏன்று குருபுராணத்தில் சொல்லப்பட்டுள்ளது. வாயு புராணத்தில் 'கயா மகிமை' என்ற தலைப்பில் உள்ள அத்தியாயாத்தில் விவரிக்கப்பட்டுள்ளபடி பிரம்மா மனிதக்குலத்தைப் படைக்கும்போது கயாசூரன் என்ற அசுரனையும் படைத்தார். அந்த அசுரன் கோலஹல் என்ற மலையின் உச்சிக்குச் சென்று விஷ்ணுவை நோக்கி கடுந் தவம் புரிந்தான். கயாசூரனின் தவத்தில் மனம் மகிழ்ந்து அந்த அசுரனிடம் என்ன வரம் வேண்டும என்று கேட்டாராம் அதற்கு அந்த அசுரன் "தேவதையோ அல்லது ராட்சசரோ புழு பூச்சியோ பாவம் செய்தவனோ முனிவனோ ரிஷியோ அல்லது தீய ஆவிகளோ எதுவாக அல்லது யாராக இருந்தாலும் தன்னைத் தொட்டுவிட்டால் அவர்களுடைய பாவங்களெல்லாம் தொலைந்து முக்தி என்ற விடுதலை பெற வேண்டும்"என்று வேண்டிக்கொண்டான். அன்று முதல் அவனைத் தொடுபவர்கள் முக்தி என்ற விடுதலை அடைவதுடன் விஷ்ணு பகவானின் இருப்பிடமான வைகுண்ட பதவியையும் அடைந்துவிடுகின்றனர். பிரம்ம தேவன்தான் முதன் முதலில் கயாவில் பிண்டப்பிரதானம் செய்தார் என்று நம்பப்படுகிறது. அப்போது முதல் இந்த வழக்கம் தொடர்கிறது. இராமபிரான் யுதிஷ்திரா(தர்மர்) பிதாமகர் பீஷ்மர் இவர்கள் அனைவரும் கயாவில் இந்தச் சடங்கினைச் செய்துள்ளனர். இந்தி கால அட்டவணையின்படி அமாவசையையொட்டி அதற்கு முன்பு வரும் பதினைந்து நாட்களில் பிண்டப் பிரதானம் செய்தால் அது சிறப்பு முக்கியத்துவம் பெறும்.

◆

శ్రీ విష్ణేనమః

శ్రీగయగదాధారాయ నమః

గయ విచ్చేయు యాత్రికులకు

శ్రీమంగళ గౌరి బ్రాహ్మణ నిత్యాన్నదాన సత్రమునకు

స్వాగతం సుస్వాగతం

భారతదేశంలో ఒక ప్రత్యేక దైవిక ఆధ్యాత్మిక హిందూ మత సాంప్రదాయ వారసత్వ నగరం గయ. ఆదికాలం నుంచి రామాయణ, భారతం మరియు అనేక పురాణాలలో ఇది గయాపురిగా పిలవబడింది. మరణించిన అనంతరం పరిభ్రమిస్తుండే ఆత్మకు అతని కుమారులుగాని, వారసులుగాని, గయలో పిండప్రదానం చేస్తే ఆ ఆత్మకు ముక్తి కలుగుతుంది. పిండప్రదానం చేయకపోవడం వల్ల ఆ ఆత్మ అశాంతితో తిరుగుతూ కుటుంబంలో శాంతి లేకుండా చేసి అనేక అరిష్టాలకు కారణం అవుతుంది. గయలో పిండప్రదానం చేసిన వ్యక్తి యొక్క అయిదు తరాలు ముందర అయిదు తరాలు వెనుక పునీతం చేస్తుంది. ముక్తికి మార్గం చూపిస్తుంది అని కురుమ పురాణంలో చెప్పబడింది.

అనేక పురాణాలతోపాటు వాయు పురాణంలో ఈ గయ నగర ప్రాశస్త్యం చక్కగా చెప్పబడింది. పూర్వకాలం గయాసురుడు అనే మహాపురుషుడు దైవకార్యం కోసం అతని గుండెల మీద (గయాసురుని గుండెలమీద) బ్రహ్మ విష్ణువులు చేత ఒక మహాయజ్ఞం నిర్వహించబడినది. దానికి తృప్తి చెందిన శ్రీ మహావిష్ణువు వరము కోరుకోమనగా దేవతలుగాని, రాక్షసులుగాని గంధర్వులుకాని, పరమహంసలుకాని, యోగులు కాని, పుణ్యాత్ములు కానీ, పాపాత్ములుకాని ఎవరైనా కానీ ఆ ప్రాణికి తన నగరంలో (గయా నగరంలో) పిండప్రదానం చేస్తే అన్ని పాపాలు నశించి ఆ ఆత్మకు ముక్తి మార్గంలో ప్రయాణించేటట్లు వరం ఇవ్వమని కోరాడు. అందుకే ఆదినుంచి ఎంతోమందికి ఇక్కడ పిండ ప్రదానం జరుగుతున్నది.

తొలుత సృష్టికర్త అయిన బ్రహ్మ ఇక్కడ పిండప్రదానం చేశాడని నమ్మకం. శ్రీరామచంద్రుడు, ద్వాపరయుగంలో పాండవులు, ధర్మరాజు వంటి మహాపురుషులు ఈ సంప్రదాయాన్ని కొనసాగించారు. ప్రతిమాసం కృష్ణపక్షంలో హిందీ క్యాలెండర్ ప్రకారం ఇక్కడ పిండ ప్రదానం చేస్తే అత్యుత్తమమని ప్రతీక.

ఈ గయానగరంలో చూడవలసిన ముఖ్య దేవాలయం శ్రీమంగళ గౌరి అమ్మవారు (శక్తిపీఠం) మరియు బుద్ధుడు తపస్సు చేసిన బోధి వృక్షం బుద్ధ గయ. ప్రమాదంలో మరణించిన వ్యక్తికి చేసే త్రిపిండ ప్రదానం. 2. మరణించిన వ్యక్తి చేసేది మూడు చోట్ల, నది, వటవృక్షం, పాదం దగ్గర.

చాగంటి బాలాజి

శ్రీమంగళగౌరీ బ్రాహ్మణ నిత్యాన్నదాన సత్రము,

విష్ణుపాద్ రోడ్, చాంద్-చౌరా,

గయ

ఫోన్ నెం.=.+91-7765040203

গয়াক্ষেত্র - পিতৃপুরুষদের মোক্ষধাম

ডা০ সুশান্ত কুমার মুখার্জী

ভারতবর্ষের সমস্ত তীর্থস্থানের মধ্যে গয়াধাম অন্যতম। সেই ত্রেতাযুগ থেকে যখন শ্রীরামচন্দ্র বনবাসে থাকাকালীন গয়ার পার্শ্ববর্ত্তী এলাকা পার হয়ে যাওয়ার সময়ে কিছু দিন গয়াতে বসবাস করেছিলেন এবং সেই সময়ে রাজা দশরথ পুত্রবধু সীতার কাছে পিণ্ডদান গ্রহন করেছিলেন। সেই সময়ে থেকে বা আরও আগে থেকে পারলৌকিক ক্রিয়া এবং পুর্ব পুরুষ দের মোক্ষ কামনায় গয়া এক বিশিষ্ট স্থান।

হিন্দু শাস্ত্র অনুযায়ী শ্রী বিষ্ণুর দশ অবতার এবং সেই পরিপেক্ষিতে শ্রী বিষ্ণু গয়ার পূন্যভূমিতে পদার্পন করেছেন। " পরিত্রানায় সাধুনাং " অর্থাত গয়াসুরকে অবনত করতে তার বক্ষঃস্থলে যজ্ঞ করার ব্যবস্থা করতে। অতএব শ্রী বিষ্ণু কৃপাধন্য এই শহর বিশেষরুপে পিতৃপুরুষদের মোক্ষলাভের অন্যতম স্থান। শ্রীসীতার অভিশাপ বহন কারিনী অন্তঃসলিলা ফল্গুও পিতৃ মোক্ষের অন্যতম সাক্ষী এবং মাধ্যম।

গয়াতে স্বাভাবিক মৃত্যুর ক্ষেত্রে তিন জায়গায় শ্রাদ্ধকর্ম হওয়ার বিধান আছে। সর্বপ্রথম ফল্গুতে, দ্বিতীয়তঃ গদাধরের শ্রীপাদপদ্মে অর্থাত গয়াসুরের মস্তক, যজ্ঞচলাকালীন নারায়ণ নিজের শ্রীপাদপদ্ম দিয়ে সেই মাথা চেপে ছিলেন এবং তৃতীয়তঃ অক্ষয়বটে। এই রুপ ধারণা আছে যে গয়াতে পিণ্ডদান হয়ে গেলে প্রয়াত আত্মার সদগতি হয়ে এবং চিরবাঞ্ছিত বিষ্ণুলোক প্রাপ্ত হয়ে থাকে।

এ ছাড়াও যাদের অপঘাতে মৃত্যু হয়ে থাকে তাদের আত্মার সদগতির জন্যেও এখানে ব্যবস্থা আছে। গয়া শহর থেকে ৫ কি০ মি০ উত্তরে প্রেতশিলা নামক পাহাড়ের উপর সেই পিণ্ডদানের ব্যবস্থা।

এ ছাড়াও এখানে ষোলো বেদী স্থান আছে, যেখানে বিভিন্ন তিথিতে পনেরো দিন ব্যাপী শ্রাদ্ধানুষ্ঠান পিতৃপক্ষে হয়ে থাকে। এরমধ্যে কোন দিন দুধ দিয় তর্পন বা কোন দিন ফল্গুনদীবক্ষে অথবা ফল্গুতীরে পিতৃপুরুষগনে প্রকাশোৎসব অর্থাত দীপাবলি অনুষ্ঠান হয় থাকে।

ভারতবর্ষের বিভিন্ন প্রান্ত এবং রাজ্য হিসাবে পাণ্ডাদের এলাকা নিদিষ্ট করা আছে। পাণ্ডরা সেই রাজ্যের তীর্থযাত্রীদের তীর্থগুরু বলে অভিহিত হয়ে থাকেন। গয়া শ্রীচৈতন্য মহাপ্রভুর দীক্ষাস্থান, কল্পতরু শ্রীরামকৃষ্ণ পরমহংসের আবির্ভাব প্রেরনা স্থান, শ্রী বিজয়কৃষ্ণ গোস্বামীর দীক্ষা স্থান- সবে মিলে গয়ার মাহাত্ম্য আরও প্রবল হয়ে।

এখানে শ্রীপ্রনবানন্দজী মহারাজ প্রতিষ্ঠিত ভারত সেবাশ্রম সঙ্ঘ, দক্ষিনেশ্বর আদ্যাপীঠ অধিগৃহীত রামকৃষ্ণ আশ্রম, শ্রীভোলাগিরি আশ্রম ও বিজয়কৃষ্ণ গোস্বামীর আশ্রম যাত্রীদের সেবা ও সাহায্যে প্রতিনিয়ত কাজ করে চলেছে।

পিতৃপক্ষের পনেরো দিন রাজ্য সরকার পিতৃশ্রাদ্ধকারীদের জন্য প্রচুর ব্যবস্থা করে থাকে যাতে সকল তীর্থযাত্রীদের, আগন্তুকদের থাকার, আসা যাওয়ার সুবিধা হয়েএবং কোন ভাবে কেউ যেন প্রতারিত না হয়। জায়গায়-২ চিকিৎসা শিবির, কম মূল্যে সাধারণ জিনিষ পত্র সরবরাহ ইত্যাদির ব্যবস্থা থাকে। এ ছাড়াও বহু সমাজসেবী ব্যক্তিবিশেষ বা সংস্থা সেবা ভাবে এগিয়ে আসেন পিতৃশ্রাদ্ধকারীদের সাহায্যে

সবে মিলে - মাতৃ দেব ভব
পিতৃ দেব ভব
আচার্য্য দেব ভব
অতিথি দেব ভব, পরিবেশ হয়ে থাকে,
পিতৃপক্ষের পনেরোটা দিন।।

প্রস্তুতি - ইন্ডিয়ান প্রিন্টিং প্রেস, গয়া।

◆

১) পিতৃউৎসবে আগত সকল তীর্থযাত্রীকে স্বাগত জানাই ।

জেলা প্রশাসন-

पितृ उत्सव में आये हुए सभी तीर्थयात्रियों का स्वागत है।

जिला प्रशासन।

২) পবিত্র পিতৃপক্ষ উপলক্ষ্যে সকল পিণ্ডদানীদের সাদর অভিনন্দন জানাই।

জেলা প্রশাসন-

पवित्र पितृपक्ष के उपलक्ष्य में सभी पिन्डदानियों का सादर अभिनन्दन है।

जिला प्रशासन।

৩) পবিত্র গয়াক্ষেত্রে সকলে স্বাগত -

" अतिथि देव भव"

জেলা প্রশাসন-

पवित्र गया क्षेत्र में सभी का स्वागत है।

" अतिथि देवो भव "

जिला प्रशासन।

৪) পিতৃপুরুষদের মোক্ষ কামনার্থে সকলকে স্বাগত জানাই।

জেলা প্রশাসন-

पितृपुरूषों के मोक्ष कामनार्थ सभी का स्वागत करता हैं।

जिला प्रशासन।

◆

गया तिर्थक्षेत्राची संक्षिप्त माहिती व वर्णन

बच्चू भाई चौधरी

गया तिर्थक्षेत्र अति प्राचीन श्राद्ध कार्यासाठी सनातन धर्मचि अंत: सलिला फल्गु नदीच्या तीरावर हे मोक्ष स्थान आहे याचे महत्व गयासुर नावाच्या दैत्याने वर मांगुन घेतल्या कारणानें वाठळे। गयासुर धार्मिक प्रकृतिचा असल्या कायाणानें त्यांनी ब्रह्मदेवतेहा प्रसन्न करुन तीन वर मागितहेण हे स्थान माझा नावाने प्रसिद्ध होवो, दुसरे यथे जो कोणी आपळे पूर्वजांचे श्राद्ध तर्पण निवा स्मरण जरी करेळ त्यांच्ये पूर्वजांचा उद्धार व्हावा। सिरे ज्या दिवज्ञी पिंड मळा मिळजार नाही मी उठन उभा राहीन। गयासुराच्या अंगावर भगवान विष्णुने उजवा पाव ठेवुन न्याचा उद्धार कळां, तेव्हापासुन येथे श्री विष्णु चरण अंकित आहे–

पंचक्रोहां गया क्षेत्रं क्रोहामेकं गयासिरह:

यत्र यत्र स्मरिहयांनि पितृणा दत्रमक्षय।

गया यात्रा 5 कोसाची आहे या स्थानावर गयावाळ ब्राह्मणांचे पण महत्व आहे। त्यानी सांगितल्या शिवाये गया यात्रा पूर्ण होन नाहि हे सुद्धा प्रमाण आहे।

हामी पूत्र प्रमाजेन पिंड दळयाद गया सिरे उद्धरेन सप्त गोत्राणि कुहमेकातरं हातंम। सेथें पिण्डदान केल्यानें 101 कुण्ड आणि 7 गोत्रांचा उद्धार होनो पण त्याकरिता श्रद्धा गरजेची आहे श्रद्धेचे कार्य श्राद्ध आहे।

श्रद्धया दियते तन श्राद्धं।

◆

महाराष्ट्र सेवा सदन
तनपुरे धर्मशाला, चाँदचौरा, गया
मो० – 09934292132, 09934846231

विहाय कामान् यः सर्वान् पुमांश्चरित निस्पृहः।
निर्मनो निरहंकारः शान्ति मधिगच्छती।।
गीता– 2/71

''जो मनुष्य सब इच्छाओं को त्याग देता और कामना-रहित होकर कार्य करता है, जिसे किसी वस्तु के साथ ममत्व नहीं होता और जिसमें अहंकार की भावना होती, उसे शान्ति प्राप्त होती है।''

श्राद्ध में योगियों का निमंत्रण

जगद्गुरु स्वामी राघवाचार्य जी

श्राद्ध से बढ़कर कोई भी पूजा-पाठ कल्याणकारी नहीं है। अत: हर हालत में अपने मृत पितरों का श्राद्ध करना चाहिए। इसलियै मनुष्यों को चाहिये कि वह भक्तिपूर्वक यदि कुछ न भी मिले तो शाक (साग) से भी अपने मृत पितरों का श्राद्ध करें। धन होतो कंजूसी न करे। जो ऐसा करता है, उसके कुल में कोई दु:खी नहीं रहता।

श्राद्धात्परतरं नान्यच्छ्रेयस्कर मुदाहृतम्।
तस्मात् सर्व प्रयत्नेन श्राद्धं कुर्याद्विचक्षराा:।।

(सुमन्तु)

तस्माच्श्राद्धं नरो भक्त्या शाकैरपि यथाविधि कुर्वीत श्रद्धया तस्य कुले कश्चिन्न सीदति।।

(ब्रह्मपुराणे)

श्राद्ध का मुख्य अंग ब्राह्मण भोजन है। क्योंकि पितर निमन्त्रित ब्राह्मणों के शरीर में प्रविष्ट होकर भोजन करते हैं। पितर उन्हीं ब्राह्मणों के शरीर में प्रविष्ट होते हैं जिनमें पात्रता है। स्त्रियों में पात्रता नहीं होती इसलिये स्त्रियों को श्राद्ध में भोजन नहीं कराना चाहिये, चाहे वह कितनी भी व्रतचारिणी हो। परम्परा किन्हीं कारणों से बनती है। यदि वह परम्परा शास्त्र विरुद्ध है, तो उसे तोड़ना चाहिये और शास्त्र का अवलम्बन करना चाहिये। श्राद्ध में ब्राह्मण को पात्रता की परीक्षा करना चाहिये। किन्तु तीर्थों में परीक्षा नहीं लेनी चाहिए। ''तीर्थो विगुणापि''

किन्तु योगियों (संयासियों को) को श्राद्धोचितसर्वगुण सम्पन्न बताया गया है। यदि उपलब्ध हो तो सर्व प्रथम सन्यासियों का (नियोग) निमन्त्रण करना चाहिये। अत: अमावस्या, अष्टका, कुतुप, अपराह्ण आदि सभी श्राद्धों में बुद्धिमान को चाहिये के वह योगियों (सन्यासियों) को श्राद्ध में भोजन करावे। क्योंकि पितर सभी योगा धार होते हैं इसलिये श्राद्ध में योगियों को पूजना चाहिये। यदि एक हजार ब्राह्मणों की पंक्ति में एक योगी अग्रासनी है अर्थात पंक्ति के प्रारम्भ में बैठा है तो वह यजमान एवं श्राद्ध भोक्ताओं को नौका के समान संसार सागर से पार करदेता है। यह मार्कण्डेय पुराण में आया है।

पितरों ने महाराज ऐल (पुरूरवा) के समक्ष जो गाथा गायी है वह 'पितृगीता' के नाम से प्रसिद्ध है उसमें कहा है कि हमारे कुल में कौन ऐसा पुत्र या पौत्र होगा जो योगियों के भोजन के बाद बचे अन्न से हमलोगों का पिण्ड करेगा। क्योंकि सपात्रक श्राद्ध में ब्राह्मण भोजन के बाद ही पिण्डदान होता है।

पितृ गाथास्तथैवात्र गायन्ते ब्रह्म वादिभि:।
या गीता: पितृभि: पूर्व मैलस्यासन महीपते:।।
कदा न: सन्तताग्रय: कस्याचिद् भविता सुत:।
यो योगि भुक्त शेषान्नात् भुविपिण्डान् प्रदास्यति।।

यदि तत्त्व ज्ञानी योगी न मिले, तो नैष्ठिक या उपकुर्वाण ब्रह्मचारी या अन्य ब्राह्मणों को श्राद्ध में भोजन कराना चाहिये। किन्तु प्रयत्न करना चाहिये कि योगी मिल जाय। एक हजार गृहस्थ एक हजार ब्रह्मचारी और एक सौ वानप्रस्थ से एक योगी श्रेष्ठ है। यदि योगी पूर्व का नास्तिक हो विकर्म हो, सनकी हो, तस्कर हो, किन्तु वर्तमान में योगी हो, उसके श्राद्ध में भोजन पुत्र या पौत्र करावे तो उससे पितर उसी तरह प्रसन्न होते है जैसे वर्षा होने पर किसान।

यदि श्राद्ध में भोजन के लिये संन्यासी उपलब्ध नहीं हो तो ब्रह्मचारी, गृहस्थ और वानप्रस्थ को ही भोजन कराना चाहिये। संन्यासी ज्ञान निष्ठ होते है, वानप्रस्थ व्रतनिष्ठ और ब्रह्मचारी स्वाध्याय निष्ठ होते हैं। ज्ञाननिष्ठ यानी संन्यासी को यत्न पूर्वक निमन्त्रण करना चाहिये। संन्यासी नहीं मिलने पर ब्रह्मचारियों, गृहस्थों और वानप्रस्थों को निमन्त्रण करना चाहिये। संन्यासी का अतिक्रमण कर यदि अन्यों का निमन्त्रण करता है तो उसके पितरों का पतन होता है, और दाता को नरक की प्राप्ति होती है। इसका तात्पर्य यह है कि श्राद्ध में संन्यासी ब्रह्मचारी, गृहस्थ और वान प्रस्थ चारों पूज्य हैं। किन्तु संन्यासी सर्व श्रेष्ठ है। वीतराग यति संन्यासी को श्राद्ध में सुपूजित अन्न दिया जाय तो उससे करोड़ो कल्पों तक पितर तृप्त हो जाते हैं।

यतये वीतरागाय दत्तमन्नं सुपूजितम्।
नक्षीयते श्रद्धया वै कल्प कोटि शतैरपि।।

किन्तु शिखा सहित मुण्डन कराने वाले और जटिलों (शैव, पाशुपत, काल मुखादि) के तथा काषाय वस्त्र घारियों (पीपल आदि के कषाय से रंगे वस्त्र वालों) को श्राद्ध में नहीं पूजना चाहिये।

जो संन्यासी शिखा रखते हों धातु (गैरिक धातु) के रंगे गेरुआ वस्त्र पहनते हों एसे त्रि दण्डि संन्यासियों को भोजन कराना चाहिये। वे ही व्रती ज्ञानी, ध्यानी होते हैं। ऐसे देवभक्त महात्मा दर्शन मात्र से पवित्र करदेते हैं।

श्राद्ध में ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ, और संन्यासी चारों आश्रमियों को भोजन कराने का विधान है किन्तु प्राथमिकता संन्यासी को दी गयी है। यदि के उपलब्ध रहते गृहस्थ को भोजन कराता है तो उसे कुछ भी फल नहीं मिलता बल्कि पूरे पितरों का पतन हो जाता है।

योगिनं समतिक्रम्य गृहस्थं यदि पूजयेत।
न तत्फलमवाप्नोति सर्वं गोत्रं प्रतापयेत।।

रामानुज मठ, देवघाट
विष्णुपद मन्दिर परिसर, गया

◆

श्राद्ध की धार्मिक एवं दार्शनिक अवधारणा

डॉ० श्रीकान्त मिश्र

भारतीय धर्म और संस्कृति के साथ-साथ विश्व के प्रायः समस्त धर्मों तथा संस्कृतियों में मरणोत्तर संस्कारों की सूक्ष्म अथवा स्थूल अवधारणा देखने को मिलती है। प्राचीन मिस्र की सभ्यता में मृतक के भावों को विशेष रीति से संरक्षित कर उन्हें एक विशिष्ट अन्त्येष्टि स्थल, जिन्हें पिरामिड कहा जाता है, में मृतक की अत्यन्त प्रिय वस्तुओं के साथ रखा जाता था। जिनके अवशेष आज भी विद्यमान हैं और तत्कालीन जनों के मृतक के साथ सहानुभूति और उनके प्रति आस्था का परिचय देते हैं। ईसाई धर्म में आज भी यह प्रथा प्रचलित है। मुस्लिम धर्म में इसी प्रकार से मृतक के अन्तिम संस्कार किये जाने का विधान है। प्राचीन दक्षिण भारत की वृहत् अथवा महापाषाण संस्कृति में इसी प्रकार के अन्त्येष्टि स्थल, जिन्हें 'समाधि' कहा जाता है, में मृतक के भावों को उनकी प्रिय वस्तुओं के साथ रखा जाता था। वर्तमान में भी यतियों और संन्यासियों के अन्तिम संस्कार इसी रीति से पूर्ण किये जाते हैं। इन सांस्कारिक कृत्यों का प्रयोजन मृत आत्माओं के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने, उनकी आत्मिक शान्ति तथा उनसे सुख-समृद्धि की कामना की पूर्ति और उनका संरक्षण तथा कृपा प्राप्त करने का होता था।

किन्तु सनातन भारतीय धर्म या वैदिक सभ्यता एवं संस्कृति, जिनमें संस्कारों तथा कर्म-काण्ड की महत्वपूर्ण भूमिका है और इसमें भी अन्त्येष्टि, श्राद्ध आदि मरणोत्तर संस्कारों का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। वैदिक संस्कृति के अनुयायियों में मरणोत्तर संस्कार प्रतिपादित करने के मूल में मृत आत्माओं (पितृगण या पितर) का संरक्षण एवं कृपा प्राप्त करने की कामना तो थी ही इससे भी महत्त्वपूर्ण अवधारणा 'पितरों' के 'मोक्ष' और उनकी 'आत्मिक शान्ति' की थी। इस प्रयोजन की पूर्ति के लिये ही वैदिक संस्कृति एवं शास्त्रों में मृतकों के प्रति किये जाने वाले अनुष्ठानों, विभिन्न यज्ञीय कर्म-काण्डों का निर्देश किया गया है, जो वैदिक संस्कृति की मूल प्रकृति और अवधारणा है और यदि भारतीय धर्म और संस्कृति से पितृगणों की उपासना (अर्थात् मरणोत्तर श्राद्धादि संस्कारों) का परित्याग कर दिया जाय तो यह प्रायः निष्प्राण सी प्रतीत होने लगेगी।

वैदिक संस्कृति में मृतात्माओं के प्रति किये जाने वाले अनुष्ठानों एवं कर्म-काण्डों से अन्य धर्मों तथा सम्प्रदायों के लोग भी विशिष्ट रुप से प्रभावित होते थे और आज भी उससे प्रेरणा प्राप्त करते हैं। इसका एक मार्मिक उदाहरण हमें प्रसिद्ध मुस्लिम शासक शाहजहाँ की अनुभूति से प्राप्त होता है। इसके अनुसार शाहजहाँ को उसके पुत्र औरंगजेब ने बंदी बनाकर कारागार में बन्द कर दिया और स्वयं राजा बन गया। इस अवधि में औरंगजेब ने शाहजहाँ के प्रति घोर अमानवीय अत्याचार किये। इससे पीड़ित होकर शाहजहाँ अपनी भावना को अपने अन्तकाल में प्रकट करते हुये कहता है कि ''मेरे इस्लाम परस्त बेटे से तो वे काफिर (हिन्दू) अच्छे, जो मृतक पितरों तक को पानी पिलाते हैं।'' यह उद्धरण वैदिक धर्म के मरणोत्तर संस्कारों के मूल प्रयोजन और संस्कारों के पीछे वैदिक ऋषियों की मनोवृत्ति का हमें बार-बार स्मरण कराता है और इससे प्रेरणा लेने का मार्ग भी दिखलाता है।

श्राद्धादि मरणोत्तर संस्कारों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि-

शास्त्रीय परम्परा और ऐतिहासिक दृष्टि से भी मरणोत्तर श्राद्धादि संस्कारों और पितरों (मृत आत्माओं) के प्रति किये जाने वाले कृत्यों, कर्मों और अनुष्ठानों का उल्लेख वैदिक संहिताओं में दिखलाई पड़ता है, जो यह सिद्ध करता है कि मृतकों या पितरों के प्रति किये जाने वाले विभिन्न संस्कार आदि पूर्णतः 'वेद

सम्मत' हैं। कालान्तर में इन संस्कारों की विस्तृत व्याख्या ब्राह्मण ग्रन्थों, गृह्य (पारस्कर, गोभिल आदि) तथा धर्म सूत्रों (गौतम, आपस्तम्भ आदि), विभिन्न स्मृतियों (याज्ञवल्क्य, मनु, नारद आदि), विभिन्न पुराणों (गरूण्ड़ पुराण में विस्तृत व्याख्या), धर्म शास्त्रीय व्याख्याओं-निबंधों तथा महाभारत आदि ऐतिहासिक ग्रन्थों में प्राप्त होती है। सम्प्रति अनेक कर्मकाण्डीय विद्वानों के ग्रन्थ और अनुष्ठान विधियाँ उपलब्ध हैं जिनमें मरणोत्तर संस्कारों का विस्तृत विवेचन और विधि-विधान सहजता से प्राप्त हो जाते हैं।

श्राद्धादि कृत्यों का धार्मिक तथा दार्शनिक महत्त्व-

श्राद्धादि मरणोत्तर कृत्यों, अनुष्ठानों का विशिष्ट धार्मिक तथा दार्शनिक महत्त्व है। श्राद्धादि कृत्यों का धार्मिक तथा दार्शनिक महत्व सर्वप्रथम इस कारण से है कि इन कृत्यों और अनुष्ठानों के महत्त्व को भारतीय धर्मशास्त्रों, पुराणों और स्मृतियों आदि ने स्वयं स्वीकार किया है तथा इसके विधि-विधानों का प्रतिपादन किया है। श्राद्धादि अनुष्ठानों का सामान्य जन पूरी निष्ठा से पालन अथवा अनुसरण करने का प्रयत्न करता है। स्वत: वेदों ने भी पितरों के अस्तित्व को स्वीकार करते हुये उनके निमित्त विशिष्ट कर्मकाण्डीय विधानों को निर्दिष्ट किया है। पितरों के निमित्त किये जाने वाले कृत्यों का दार्शनिक महत्त्व इस तथ्य में ही निहित है कि वेदों ने स्वयं इसका विधान किया है। जब आस्तिक सम्प्रदाय के दर्शन वेदों को अपना प्रामाण्य मानते है अथवा प्रकारान्तर से आस्तिक दर्शनों की उत्पत्ति का मूल स्रोत 'वेद' ही है तो यह स्वाभाविक है कि दर्शन की दृष्टि में श्राद्धादि कृत्यों का महत्त्व होगा ही। यद्यपि इन आस्तिक दर्शनों ने इनके महत्व अथवा विधि-विधानों के विषय में विस्तार से कुछ नहीं कहा है।

साथ ही यह भी कहा जा सकता है कि दर्शन का मूल प्रयोजन मानव के आत्यन्तिक कल्याण के निमित्त सिद्धान्तों और दृष्टिकोण का प्रतिपादन करना और मानव जीवन को उसके चरम लक्ष्य एवं परम पुरुषार्थ 'मोक्ष' की प्राप्ति कराना है। इसी प्रकार का उद्देश्य श्राद्धादि अनुष्ठानों का है कि वे प्रेत-योनि को प्राप्त कर चुके पुरुष को अथवा मृतक को उसके प्रेत जीवनावधि में सुख और कल्याण की प्राप्ति कराकर अन्तत: मोक्ष की भी प्राप्ति भी करा सके। श्राद्धादि अनुष्ठानों का धर्म, आचार शास्त्र और समाज तथा नीति दर्शन के दृष्टिकोण से इसलिये महत्त्वपूर्ण ज्ञात होते हैं कि जिन मृत आत्माओं अथवा पूर्वजों ने हमें शरीरादि जीवन प्रदान किया, हमारा पालन-पोषण किया, हमें समाज में रहने, जीवननिर्वाह करने में समर्थ बनाया तथा अन्त में परम पुरुषार्थ की प्राप्ति के निमित्त योग्य बनाया, तो हमारा भी यह कर्तव्य हो जाता है कि हम उनके प्रति श्रद्धा- विश्वास प्रकट करें, उनके कल्याण के निमित्त (अर्थात् प्रेतयोनि से मुक्ति के लिये) कुछ उपाय करें। यही तो श्राद्धादि कर्मों का मूल प्रयोजन है। अत: यह कहा जा सकता है कि श्राद्धादि कर्मों का पूर्णत: धार्मिक तथा सामाजिक महत्त्व है।

श्राद्ध का स्वरुप-

महार्षि याज्ञवल्क्य के अनुसार ''द्रव्यस्य प्रेतोद्देशेन श्रद्धया त्याग:'' अर्थात् श्रद्धा के साथ प्रेतों (पितरों) के प्रति किया गया द्रव्य त्याग ही श्राद्ध कहलाता है। ब्रह्मपुराण के अनुसार 'जो कुछ उचित काल, पात्र तथा स्थान के अनुसार उचित या शास्त्रोंक्त विधि के अनुसार पितरों को लक्ष्य करके श्रद्धा पर्वूक ब्राह्मणों को दिया जाता है, वह श्राद्ध कहलाता है।' कल्पतरु के द्वारा दी गई परिभाषा के अनुसार 'पितरों को उद्देश्य करके यज्ञीय वस्तु का त्याग तथा ब्राह्मणों द्वारा उसका ग्रहण प्रधान श्राद्ध स्वरूप है।' इस प्रकार से इन परिभाषाओं से स्पष्ट है कि मृत आत्माओं या पितरों को लक्ष्य करके अर्थात् उनके सुख-कल्याण आदि के निमित्त वस्तुओं का त्याग तथा श्राद्ध के लिये आमन्त्रित ब्राह्मणों द्वारा उन वस्तुओं का ग्रहण और पितरों के प्रतिनिधि रुप में ब्राह्मणों द्वारा भोजन लिया जाना ही श्राद्ध है। साथ ही श्राद्ध में पितरों का अथवा उनके प्रतिनिधि रुप में ब्राह्मण पूजन भी

किया जाता है।

श्राद्ध के प्रकार-

याज्ञवल्क्य स्मृति के अनुसार श्राद्ध के तीन प्रकार हैं- 1. नित्य 2. नैमित्तिक तथा 3. काम्य। इनमें से नित्य श्राद्ध वह है, तो एक निश्चित अवसर, जैसे- अमावस्या, अष्टका आदि पर संपादित किया जाता है। नैमित्तिक श्राद्ध वह है जो किसी मांगलिक अवसर या कार्य जैसे- विवाह, पुत्रजन्म आदि के अवसर पर संपादित किया जाता है। नैमित्तिक श्राद्ध को ही अभ्युदय श्राद्ध भी कहा जाता है तथा काम्य श्राद्ध वह है, जो किसी विशिष्ट फल की इच्छा जैसे-संतति आदि की प्राप्ति के लिये किया जाता है।

श्राद्ध के वर्गीकरण के दूसरे प्रकार के अनुसार दो प्रकार के श्राद्ध होते है- 1. एकोद्दिष्ट तथा 2. पार्वण श्राद्ध। ऐकोद्दिष्ट एक ही व्यक्ति अर्थात् केवल मृतात्मा को लक्ष्य करके संपादित की जाती है। इस श्राद्ध में विश्वेदेवा आदि का आवाहन नहीं होता है। वहीं पार्वण श्राद्ध तीन पुरुषों या तीन पीढ़ियों पिता, पितामह और प्रपितामह को लक्ष्य करके तथा विश्वेदेवा आदि का आवाहन करके अमावस्या या संक्रान्ति या आश्विन कृष्ण पक्ष में सम्पन्न किया जाता है।

याज्ञवल्क्य स्मृति के अनुसार ही श्राद्धों का तीसरा वर्गीकरण भी है। इसके अनुसार श्राद्ध पाँच प्रकार के हैं- 1. अहरह: 2. नैमित्तिक 3. काम्य 4. वृद्धि और 5. पार्वण। इनमें से अहरह: वह श्राद्ध है जो नित्य प्रति पके हुये चावल, जौ आदि से सम्पन्न किया जाता है।

शण्णवति श्राद्ध के अनुसार वर्ष भर में की जाने वाली कुल श्राद्धों की संख्या 96 है।

श्राद्ध में आमन्त्रित जन या ब्राह्मणों का निरुपण-

भारतीय धर्मशास्त्र और स्मृति ग्रन्थों में श्राद्ध में आमन्त्रित किये जाने वाले व्यक्तियों अथवा ब्राह्मणों की प्रकृति और स्वभाव आदि का भी भली-भाँति निरुपण किया गया है। प्रकारान्तर से श्राद्ध में भोजन करने तथा दान ग्रहण करने के अधिकारियों के स्वरुप को निरुपित करते हुये धर्मग्रन्थ कहते हैं कि ''जो ब्राह्मण युवा होते हुए सभी वेदों में पारंगत, श्रोत्रिय, ब्रह्मणात्मक वेदवेत्ता, ज्येष्ठ साम, त्रिमधु और त्रिसुपर्ण आदि विशेष विद्याओं के अध्ययन के लिये विहित व्रत के आचरण के साथ उनके अध्येता हैं वे ब्राह्मण, इस प्रकार के आचरण करने वाले ब्राह्मणों के दौहित्र, शिष्य तथा अन्य सम्बन्धी, कर्मनिष्ठ, तपोनिष्ठ, पंचाग्नि विद्या के ज्ञाता, ब्रह्माचारी, मातृ-पितृभक्त एवं ज्ञाननिष्ठ ब्राह्मण ही होने चाहिए अर्थात् इस प्रकार के व्यक्ति ही श्राद्ध में भोजनीय तथा दान देने के योग्य हैं।''

श्राद्ध के अवसर अथवा काल-

महर्षि याज्ञवल्क्य के अनुसार ''अमावस्या, अष्टका, वृद्धि (पुत्रादि के जन्म के अवसर), कृष्णपक्ष, दोनों अयनों, द्रव्य लाभ होना, श्राद्ध योग्य ब्रह्मण की प्राप्ति होना, विषुवत् संक्रान्ति, मकर संक्रान्ति, व्यतीपात, गजच्छाया योग, सूर्य तथा चन्द्रग्रहण, कर्ता की श्राद्ध के प्रति अभिरुचि होने तथा मृतक की तिथि आदि के अवसर-ये सब श्राद्ध के काल कहे जाते हैं।''

कुछ श्राद्धों की संक्षिप्त विधियाँ-

क. पार्वण श्राद्ध-

पार्वण श्राद्ध का अवसर उपस्थित होने पर मध्या काल में श्राद्ध कर्ता श्राद्धोपयोगी वस्तुओं, द्रव्यों

यथा–तिल, यव, दुग्ध आदि का संग्रह करके श्राद्ध स्थल पर उत्तम भावों के साथ प्रविष्ट हो। वह श्राद्ध के लिये पाक आदि का भी निर्माण कर ले। इसके पश्चात् प्राय: निम्न विधि के अनुसार अपना कार्य संपादित करे–

1. सर्वप्रथम वह पूर्वाभिमुख होकर 'अपवित्र पवित्रो' मन्त्र से अपने ऊपर जल छिड़के (पवित्रीकरण)।
2. अब आचमन, प्राणायाम, मार्जन करके श्राद्ध के पूर्व विष्णु पूजन का संकल्प करे।
3. भगवान् विष्णु का षोड्षोपचार पूजन करके रक्षादीप प्रज्ज्वलित कर पवित्री धारण करें तथा ध्यान (सप्त व्याधा दर्षार्णेशु मन्त्र से) करे।
4. इसके बाद पीली सरसों से प्राच्यै नम: आदि मन्त्रों से दिक् रक्षण करें तथा दाहिनी कमर की ओर भिकुश और तिल बांधे या वस्त्र में लपेट ले।
5. 'स्योना' पृथिवी इस मन्त्र से श्राद्ध भूमि का जौ तथा पुष्पों से पूजन करे।
6. इसके बाद कुश, तिल और जल लेकर श्राद्ध का संकल्प गोत्रादि के साथ करे।
7. तीन बार गायत्री का जप करके देवताभ्य: पितृभ्य च मन्त्र पढ़ करके पुन: गायत्री का तीन बार जाप करे।
8. इसके बाद उत्तराभिमुख विश्वेदेवा के आसनों का संकल्प 'अद्यामुकगौत्राणां पितृन्' पढ़कर करें।
9. अब अपसव्य तथा बाँये पैर को मोड़कर दक्षिणाभिमुख होक हाथ में मोटक, तिल लेकर पितरों के लिये आसन का संकल्प कर उस पर जल छोड़े। इसके बाद सव्य होकर विश्वान् तथा विश्वेदेवा इन मन्त्रों से विश्वेदेवों का आवाहन करें।
10. पुन: यवोऽसि यव इस मन्त्र से भोजनपात्र पर यव को बिखेरें तथा विश्वेदेवा: श्रुणु तथा ''आगच्छन्तु महाभागा विश्वेदेवा महाबला:।। ये यत्र विहिता: श्राद्धे सावधाना भवन्तु'' यह पढ़ें।
11. तथा फिर दक्षिणाभिमुख व अपसव्य होकर तथा बाँये पैर को मोड़कर उषन्तस्त्वा निधी पढ़कर पितरों का आवाहन तथा अपहता असुरा इन मन्त्र को पढ़कर पितरों के भोजनपात्र पर तिलों को बिखेरें, पुन: आयान्तु न: पितर: इस मन्त्र को पढ़ें।
12. पुन: सव्य होकर दो अर्घ पात्र विश्वेदेवा आसनों के सम्मुख रख कर उनके सामने एक–एक पवित्री पूर्वाग्र कर रखें (पवित्रे स्थो० मन्त्र से)। फिर अर्घ्यपात्र में शन्नों देवी मन्त्र से जल तथा यवोसि मन्त्र से यव प्रक्षिप्त करें तथा फिर गन्ध, पुष्प छोड़े।
13. अब अपसव्य होकर पितरों के आसन के सम्मुख अर्घ पात्र रखें तथा प्रत्येक के सम्मुख दक्षिणाग्र कर एक–एक पवित्री (पवित्रे स्थो मन्त्र से) रखें। इसके बाद अर्घपात्र में शन्नो देवी मन्त्र से जल तथा तिलोऽसि मन्त्र से मिल प्रक्षिप्त करें। गन्ध, पुष्प भी डालें।
14. पुन: सव्य होकर विश्वेदेवों के अर्धपात्र को वाम हस्त में लेकर दक्षिण हस्त से देवों की पवित्री उठाकर उनके भोजन पात्र में पूर्वाग्र रखें तथा फिर दक्षिण हस्त से अर्घ पात्र को ढँक कर या दिव्या आप: मन्त्र पढ़कर हाथों में कुश, यव और जल लेकर अर्घ का संकल्प करें।
15. अब अपसव्य होकर इसी प्रकार से पितृगणों के अर्घों को क्रमश: लेकर संकल्प करें।
16. पुन: सव्य होकर विश्वेदेवों के अर्घपात्र को पवित्री सहित यथाक्रम उनके आसनों के दक्षिण भाग में विश्वेभ्यो देवेभ्य: इस मन्त्र को पढ़कर सीधा रखें।

17. अब अपसव्य होकर शास्त्रानुसार पितरों का अर्घमेलन पितृभ्य: तथा मातामह मन्त्रों से करें।

18. पुन: सव्य होकर हाथों में कुश, यव और जल लेकर विश्वेदेवों को गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, ताम्बूल, यज्ञोपवीत, वस्त्रादि अर्पित करें। ये वस्तुएँ अन्त में 'नम:' का प्रयोग कर अर्पित की जायें।

19. अब अपसव्य होकर पितृगणों को भी गन्ध, पुष्पादि का अर्पण अन्त में 'स्वधा' लगाकर अर्पित की जाए। इसी प्रकार से मातामह आदि को भी गन्ध, पुष्पादि दिया जाये।

20. पुन: सव्य होकर विश्वेदेवों के भोजनपात्र तथा असान के चतुर्दिक् चतुष्कोण मण्डल का निर्माण जल से ''यथा चक्रायुधो'' मन्त्र से करें।

21. इसके पश्चात् पितृगणों के भोजनपात्र तथा आसन के चतुर्दिक् भी मण्डल की रचना जल से करें।

22. पुन: सव्य तथा पूर्वाभिमुख होकर श्राद्ध में देय अन्नादि को घृत के साथ विश्वेदेवों के निमित्त एक पात्र में जल भर कर उसी में दो आहुति अग्नये तथा सोमाय मन्त्र से प्रदान करें।

23. फिर अपसव्य होकर प्रत्येक पितरों के लिए घृत, जल, तिल सहित अन्न को लेकर दक्षिण की ओर कुश के ऊपर 'इदमन्नम्' मन्त्र से रखें।

24. इसके पश्चत् विश्वेदेवों के लिये सव्य होकर तथा पितरों के लिए तृप्ति पर्यन्त भोजनादि अन्न परोंसे।

25. पुन: सव्य होकर विश्वेदेवों भोजनादिक अन्न के ऊपर मधु वाता मन्त्र के द्वारा दोनों हाथों से मधु प्रदान करे और फिर तीन बार मधु मधु मधु कहें।

26. अब अपसव्य होकर पितरों के अन्न के ऊपर भी मधु वाता मन्त्र के द्वारा दोनों हाथों से मधु प्रदान करे और फिर तीन बार मधु मधु मधु कहें।

27. पश्चात् सव्य होकर विश्वेदेवा के भोजन पात्रों का स्पर्श दाहिने हाथ को उत्तान कर पृथिवी ते पात्रं तथा इदं विष्णुर्वि मन्त्रों से करें तथा फिर कृष्ण हव्यमिदं मन्त्र पढ़ें और इदम् अन्नम् आदि मन्त्रों से अन्न का स्पर्श करें। इसके बाद यवोऽसि मन्त्र से भोजनादि अन्न को ऊपर यव प्रक्षिप्त करें तथा हाथ में कुशा, यव, जल लेकर विश्वेदेवों को अन्न प्रदान करें का संकल्प करें।

28. पुन: अपसव्य होकर तथा वाम जानु को मोड़कर इसी प्रकार से पितृगणों के भोजन पात्र तथा अन्न का स्पर्श करें, साथ ही विश्वेदेवों के मन्त्र इदं हवि: के स्थान पर इदं कव्यम् को पढ़ें तथा यव के स्थान पर पितरों के लिये तिल अपहता मन्त्र से प्रक्षिप्त करें। इसके बाद पितरों को भी अन्न प्रदान करने का संकल्प करें।

29. अन्न भोजनादि संकल्प के बाद ''अन्नहीनं क्रियाहीनं विधिहीनं च यत् भवेत्। तत्सर्वंछिद्रमस्तु'' पढ़कर ध्यान करें।

30. इसके बाद तीन बार गायत्री का जप और फिर कृणुष्व पाज: आदि मन्त्रों को पढ़कर भूमि में तिलों को विकीर्ण करें। पुन: पितरों के मन्त्रों, पुरुष सूक्त के मन्त्रों तथा अप्रतिरथ मन्त्रों का भी यथासंभव वाचन करें। इसके बाद वहाँ उच्छिष्ट अन्नाभोजनादि के पास तीन कुशों को रखकर तिल और जल मिला हुआ भोजनादि को अग्निनादग्धा च मन्त्र से उन्हीं कुशें के ऊपर रख दें।

31. इसके पश्चात् श्राद्ध कर्ता अपनी पवित्री को त्याग दें तथा हस्त-पाद प्रक्षालन करके आचमन करें। पुन: पवित्री धारण कर भगवान् श्रीहरि विष्णु का धन और उसके बाद तीन बार गायत्री का जप करें।

32. पुन: अपसव्य होकर एक हस्त परिमाण तथा चतु:अंगुल ऊँची वेदी, जिसका ढाल दक्षिण की ओर हो,

बनावे। इसके बाद दोनों हाथों से कुशा को लेकर अपहता मन्त्र से वेदी पर दो रेखा बनावें। इस कुश को ईशानकोण की ओर फेंके। रेखाओं के ऊपर ये रुपाणि मन्त्र पढ़कर अंगारे को घुमावें तथा इस अंगार को दक्षिण की ओर रख दें। अब वेदी पर बनी रेखाओं के ऊपर तीन छिन्न मूल कुशों को रखें।

33. इसके बाद सव्य होकर देवताभ्यो' तीन बार जापें।

34. पुनः अपसव्य होकर छः पात्रों में जल, तिल, गन्ध, पुष्प छोड़कर पितरों के स्थान में रख दें और फिर शेष अन्न भोजनादि से छः पिण्डों का निर्माण करें। आचमन तथा भगवान् विष्णु का ध्यान करके शास्त्रोक्त विधि और मन्त्रों से ध्यान कर उनका संकल्प करें।

35. पूर्व में धारण की गई नीवीं को निकाल कर पिण्डों के ऊपर सूत्र चढ़ावें तथा सूत्रदान का संकल्प करें। इसके बाद मापेटक, कुश, तल लेकर प्रत्येक पिण्ड का गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, ताम्बूल आदि से पूजन करें। शिवा आपः सन्तु-इस मन्त्र से भोजन पात्र पर जल डालें। पुष्प और अक्षत भी डालें। इसके बाद मोटक तिलादि लेकर अक्षय उदक का संकल्प करें। यह प्रक्रिया सभी छः पिण्डों पर करें।

36. इसके बाद सव्य होकर दक्षिण की ओर देखते हुये पिण्डों के ऊपर अघोराः पितरः सन्तु-इस मन्त्र से जल धारा दें।

37. श्राद्ध देवों और पितरों से गोत्र अन्नो वर्द्धतां मन्त्र से आशीर्वाद की याचना पूर्वमुख होकर करें।

38. इसके बाद अपसव्य होकर पिण्डों के ऊपर कुश और पवित्री रखकर दक्षिणाग्र जल और दुग्ध धारा ऊर्ज्जं वहन्ती मन्त्र से गिरायें, फिर झुककर क्रमशः सभी पिण्डों को एक-एक करके उठावें तथा उन्हें सूँघें। फिर सभी पिण्डों के कुश आदि को अग्नि में डाल दें।

39. सव्य होकर विश्वेदेवों के अर्ध्यपात्र को हिलावें।

40. पुनः अपसव्य होकर पितरों के अर्घ्यपात्र को सीधा करें।

41. सव्य होकर देवों की श्राद्ध दक्षिणा का तथा अपसव्य होकर पितरों की श्राद्ध दक्षिणा का संकल्प करें।

42. वाजे वाजेऽवत इस मन्त्र से पितरों का तथा सव्य होकर वि वेदेवाः प्रीयन्ताम्' कहकर विश्वे देवों का विसर्जन करें।

43. देवताभ्यः पितृभ्यः मन्त्र का तीन बार जप करें।

44. पुनः अपसव्य होकर दोनों हाथों से रक्षा दीप को बुझा दें और फिर हाथ-पैर घोकर आचमन करें ओर फिर सव्य होकर प्रमादात्कुर्वतां मन्त्र से श्राद्ध कर्म में हुई न्यूनता अथवा प्रमाद के लिये क्षमा प्रार्थना करें।

45. भगवान् श्रीहरि विष्णु का ध्यान करें तथा श्राद्ध की वस्तुओं को ब्राह्मण को दें या जल में फेंक दें।

(ख) एकोदिष्ट श्राद्ध की सामान्य विधि (मत्स्य एवं अन्य पुराणों की विधि के अनुसार)-

यह श्राद्ध पिता आदि केवल एक ही व्यक्ति के उद्देश्य से संपादित किया जाता है, अतः इसका नाम ''कोदिष्ट श्राद्ध'' है। पुराणों में वर्णित विधियों के अनुसार मृतक की मृत्यु के बारहवें दिन अर्थात् सूतक की समाप्ति के दूसरे दिन यह श्राद्ध की जाती है। इस श्राद्ध में विश्वेदेवा का आवाहन, पूजन तथा अग्नि में पिण्डदान सर्वथा निषिद्ध है।[10] इस श्राद्ध में एक ही पवित्रक, एक ही अर्घ्य और एक ही पिण्ड का विधान है। (श्राद्ध की सम्पूर्ण विधि-विधान के लिये श्राद्ध-प्रकाश, श्राद्ध मयूख आदि श्राद्ध विधि ग्रन्थों का अनुशीलन करें)। किसी

मृतक पिता आदि की मृत्यु के बारहवें दिन इस श्राद्ध को संपादित करने के बाद इसी विधि से प्रतिमास मृतक की मृत्यु तिथि पर इस श्राद्ध को वर्ष पर्यन्त तक करें। एक वर्ष पूर्ण होने पर सपिण्डीकरण श्राद्ध के पश्चात् मृतक की आत्मा या प्रेतात्मा, पितृयोनि (मत्स्यपुराण के अनुसार 'अग्निष्वात्त' आदि देवपितरों की योनि) को प्राप्त होती है तथा वह पार्वण आदि वृद्धि श्राद्धों में भाग पाने के योग्य हो जाता है।

(ग) सपिण्डीकरण श्राद्ध

इस श्राद्ध में सर्वप्रथम विश्वेदेवों का आवाहन और नियोजन करें। इसके बाद पितरों को स्थान दें और मृतक की आत्मा (प्रेतात्मा) को पृथक स्थान दें। इसके पश्चात् अर्घ्य देने के लिये चन्दन, जल और तिल से युक्त चार पात्रों में अर्घ तैयार करें और फिर प्रेत मात्र के जल से पितरों के पत्रों को सिंचित करें। इसी प्रकार से श्राद्ध कर्ता अथवा पिण्डदाता चार पिण्डों का निर्माण करके उन्हें संकल्पपूर्वक (पितृगणों औश्र अप्रेत के स्थानों पर पृथक-पृथक) स्थापित करें। फिर ये समाना: आदि दो मन्त्रों से प्रेत के पिण्ड के कुश से तीन भागों में विभक्त करें तथा एक-एक भाग को क्रमश: पितरों के पिण्डों में मिलायें। इस प्रकार से प्रेत अब पितरों के गण मं सम्मिलित हो जाता है। (सम्पूर्ण विधि के लिये श्राद्ध विधियों का पर्यावलोचन करें)।

(घ) अभ्युदयिक या नान्दीमुख श्राद्ध-

यह श्राद्ध हर्ष-संयोग, उत्सव, यज्ञ, विवाह आदि शुभ तथा मांगलिक अवसरों पर संपादित किया जाता है। इस श्राद्ध में प्रथमत: माता, मातामही, प्रमातामही की पूजन करने के बाद पितरों का पूजन होता है। इसके बाद मातामह और विश्वेदेवों के पूजन का विधान है। श्राद्धकर्ता पूर्वाभिमुख होकर प्रदक्षिणा आदि कार्य संपादित कर जल, फल, दही और अक्षत, दूर्वा आदि को संयुक्त कर पिण्डों को निर्मित कर सभी श्राद्ध पितरों, देवों आदि को समर्पित करें। इस अभ्युदयिक श्राद्ध में 'सम्पन्नम्' इस मन्त्र का उच्चारण करके दोनों प्रकार के पितरों को अर्घ्य प्रदान किया जाता है। इस श्राद्ध में दो ब्राह्मणों की भी यथाशक्ति पूजा करने का विधान है। साथ ही इस श्राद्ध में एक विशेष बात यह है कि इसमें पितरों के लिये तिल के प्रयोग के स्थान पर 'नान्दी' शब्द के साथ यव का प्रयोग किया जाता है। श्राद्ध कार्य में सभी प्रकार के मंगल स्तोत्रों तथा सूक्तों का पाठ करें।

गया तीर्थ में पिण्डदान और श्राद्धादि का महत्त्व-

भारतीय धर्मशास्त्रों में विशेषत: पुराणों के अनुसार गया तीर्थ का पितरों के कल्याण और उनके मोक्ष के सम्बन्ध में अत्यधिक महत्व बतलाया गया है। यद्यपि सभी तीर्थ यथा-प्रयाग, गया, पुष्कर, अमरकण्टक आदि में श्राद्ध करने की दृष्टि से महत्त्व है और यह भी कहा जाता है कि अपने विशिष्ट कल्याण का इच्छुक प्रत्येक तीर्थ में श्राद्ध करें। तथापि इन तीर्थो में भी सबसे अधिक महत्व गया तीर्थ को दिया गया है। इस तीथ्र में श्राद्ध करने का फल यह बतलाया गया है कि यहाँ पर श्राद्ध करने से पितरों को तो परम पद अर्थात् मोक्ष की प्राप्ति होती है है साथ में श्राद्ध करने वाले को भी अक्षय फल की प्राप्ति होती है।

अग्नि पुराण में गया तीर्थ के महात्म्य में कहा गया है कि ''गया तीर्थ में श्राद्ध के द्वारा जो ब्राह्मणों का सत्कार करेंगे, उनकी सौ पीढ़ियों के पितर नरक से स्वर्ग में चले जायेंगे और स्वर्ग में ही रहने वाले पितर परमपद को प्राप्त होंगे। वहीं कूर्म पुराण में भी गया तीर्थ के सम्बन्ध में इसी प्रकार की बातें कही गई हैं। इसके अनुसार ''पितर ऐसी कामना करते हैं कि शीलवान् और गुणवान् अनेक पुत्र होने चाहिये, क्योंकि उनमें से कोई एक भी किसी कारण से और किसी भी प्रकार से गया पहुँच जाय और यदि श्राद्ध कर दे तो उसके पितर तार (उत्तमोत्तम गति) दिये जाते हैं और वह भी अर्थात् श्राद्ध कर्ता भी परमगति को प्राप्त करता है।

कूर्म पुराण के अनुसार ही गया नामक परम गुह्य तीर्थ पितरों का अत्यन्त प्रिय है। वहाँ पिण्डदान करके मनुष्य का पुनः जन्म नहीं होता। जो एक बार भी गया जाकर पिण्डदान करता है तो उसके द्वारा तारे गये पितर परमगति को प्राप्त करते हैं। वहाँ संसार के कल्याण की कामना से भगवान् ने अपना चरण स्थापित किया है। वहाँ पर पितरों को पिण्डदान आदि द्वारा प्रसन्न किया जाना चाहिये। गया की यात्रा करने में समर्थ होने पर भी जो वहाँ नहीं जाता, उसके सम्बन्ध में पितर शोक किया करते हैं, उसके अन्य सभी परिश्रम व्यर्थ ही होते हैं। इसलिये सभी प्रयत्नों के द्वारा विशेष रुप से ब्राह्मणों को तो गया जाकर समाहित चित्त से विधिवत पिण्डदान करना चाहिये। वे मनुष्य धन्य हैं जो गया में जाकर पिण्डदान करते हैं। वे दोनों अर्थात् पिता और माता दोनों के कुल की सात पीढ़ियों का उद्धार करते हैं तथा स्वयं भी परमगति को प्राप्त करते हैं।

श्रीमद् देवीभागवत पुराण में कहा गया है कि जीवितावस्था में माता-पिता की आज्ञा का पालन करने, श्राद्ध में अधिक भोजन कराने और गया तीर्थ में पिण्डदान करने वाले पुत्र का पुत्रत्व सार्थक है। जो व्यक्ति गया जाने में समर्थ होते हुये भी नहीं जाता है, उसके पितर सोचते हैं कि उनका अर्थात् पितरों द्वारा पुत्रों का पालन-पोषण आदि सब परिश्रम व्यर्थ ही हैं। वायु पुराण के अनुसार पितर कहते हैं कि जो पुत्र गया यात्रा करेगा, वह हम सबको इस दुःख सागर से तार देगा। इतना ही नहीं, इस तीर्थ में अपने पैरों से भी जल का स्पर्श कर पुत्र हमें क्या नहीं दे देगा। अतः वे पितर पुत्र को गया में श्राद्ध करने की दृष्टि से आया जानकर प्रसन्न होकर उत्सव मनाते हैं।

अग्नि पुराण कहता है कि नरक के भय से भयभीत पितर पुत्र की अभिलाषा रखते हैं और सोचते हैं कि जो पुत्र गया में जायेगा, वह हमारा उद्धार कर देगा। पद्मपुराण कहता है कि मनुष्य को बहुत से पुत्रों की कामना करनी चाहिये कि उनमें से कोई एक भी गया आये अथवा अश्वमेध यज्ञ करे अथवा पितरों की सद्गति के नीले वर्ण के वृषभ का उत्सर्ग करें।

इस प्रकार से हम देखते हैं कि विभिन्न पुराणादि धर्म-ग्रन्थों में गया तीर्थ और वहाँ पर सम्पादित श्राद्ध, पिण्डदान आदि कर्मों का अत्यधिक महत्त्व बतलाया गया है। जिसके अनुसार प्रत्येक वैदिक धर्म के अनुयायी को गया जाकर अपने पूर्वजों (पितरों के मोक्ष या परमगति) तथा स्वयं के भी कल्याण के निमित्त पिण्डदान या श्राद्धादि कृत्यों का संपादन करना चाहिये। इससे सनातन परम्परा की रक्षा भी होगी और पूर्वजों के प्रति हमारी श्रद्धा बढ़ेगी, उनके प्रति हम अपने भावों को कृतज्ञ बनाकर अपने कल्याण के मार्ग को प्रशस्त कर सकते हैं।

गया और उसमें अन्तः स्थित तीर्थों का संक्षिप्त परिचय-

गया तीर्थ, पवित्र तीर्थों की भूमि भारत में मध्यपूर्व में स्थित एक ऐसा तीर्थ स्थल है, जिसकी महिमा का बखान प्रायः समस्त धर्म-ग्रन्थों, पुराणादिकों में किया गया है। पुराणों के अनुसार गया में अनेकानेक तीर्थ स्थान हैं, जहाँ श्राद्ध और पिण्डदान आदि का अत्यधिक महत्व है। पुराणों में ही प्रकारान्तर से कहा गया है कि गया में ऐसा कोई क्षेत्र या स्थान नहीं, जहाँ कोई तीर्थ न हों। अग्नि पुराण में गया के अनेक तीर्थ क्षेत्रों के नाम और उनके महात्म्य को बतलाया गया है, यथा-उत्तर मानस तीर्थ, दक्षिण मानस तीर्थ, मुण्डपृष्ठ, कनखल, फल्गु तीर्थ, धर्मारण्य तीर्थ, मतंग तीर्थ, ब्राह्म तीर्थ, गया शीर्ष तीर्थ, विष्णुपदी तीर्थ आदि। इनमें से प्रत्येक तीर्थ क्षेत्र का अपना महत्त्व है। श्राद्ध कर्ता अपनी समस्त श्रद्धा और कृतज्ञता के भाव से इन तीर्थों में श्राद्धादि कृत्यों का संपादन करके अपने पितरों तथा स्वयं अपना भी परम कल्याण करें।

◆

प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष, दर्शनशास्त्र विभाग,
अवधेश प्रसाद सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म०प्र०)

भारतीय जीवन में कर्मवाद और भाग्यवाद की अवधारणा

डॉ० वंशीधर लाल

हमारे देश में कर्म और भाग्य पर अनेकश: चचाएँ होती रही हैं। कोई कर्म की महत्ता का गुणगान करता है, तो कोई भाग्य को सर्वशक्तिमान बताता है। दोनों के अपने-अपने तर्क हैं। कर्मवादी की मान्यता है कि यही जीवन की उपलब्धियों का एकमात्र माध्यम है। कर्म ही पूजा है। यही व्यक्तित्व को प्रकाशित करता है। कर्म नैतिक उत्कर्ष का धोतक है-

'करम प्रधान विस्व करि राखा।' (रा०मा० 2/218/4) यह भी कहा गया है कि जीवन स्वयं ही अपने कर्मों का उत्तरदायी होता है। सुख-दुख, शुभ-अशुभ, हानि-लाभ, यश-उपयश, पाप-पुण्य सभी कर्म के अधीन होते हैं -

''जनम मरन सब दुख सुख भोगा।
हानि लाभ प्रिय मिलन बियोगा।।
काल करम बस होहिं गुसाईं।
बरबस रात दिवस की नाईं।।''(रा०मा० 2/149/5-6)

इसी बात को विक्टर ह्यूगो ने 'सूक्ति सागर'-10 में कुछ इस तरह से लिखा है- ''शुभ कर्म स्वर्ग के दरवाजे के अदृश्य कब्जा हैं। जो अच्छे कर्म करते हैं, उन्हें शुभ फल की प्राप्ति होती है और जो बुरे कर्म करते हैं वे अशुभ फल प्राप्त करते हैं। निस्सन्देह मनुष्य स्वयं अपने सत्-असत् कर्मों का भोक्ता होता है- ''करइ जो करम पाव फल सोई।

नियम नीति असि कहि सबु कोई।। (रा०मा० 2/91/3 'महाभारत' के 'अनुशासन पर्व' में लिखा है कि-

''अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्।
न काले क्षीयते कर्म जन्म कोटि शतैरपि।।

तात्पर्य यह कि यह संसार दुखभय है (सर्वं दुक्सं दुक्खमेव) इसलिए शुभ फल की प्राप्ति के लिए सत् कर्म ही करना चाहिए। ईश्वरवादियों के अनुसार कर्मफल देने वाला ईश्वर है। भारतीय दर्शन में पुनर्जन्म की अवधारणा प्रचलित है और यह पुनर्जन्म कर्मानुसार ही होता है। पुण्यात्माएँ स्वर्ग जाती हैं, पर वहाँ भी आत्मा को संयमित रहने की आवश्यकता होती है। यदि स्वर्ग के आकर्षक वातावरण में आत्मा डूब गयी तो जीवन के पुण्य-फल नष्ट हो जाते हैं। पुन: उसे मृत्युलोक की यातनाएँ झेलनी पड़ती है -

''ते तं भुक्त्वा स्वर्गलोकं विशालं क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोके विशन्ति।'' (गीता 9/21)

उपर्युक्त मान्यताओं के अनुसार यदि स्वयं जीव कर्मफल का कर्त्ता और भोक्ता है तो उसके एक योनि विशेष के कर्मों का फल उसी योनि तक भोगना चाहिए, पर ऐसा होता नहीं, इसलिए मानना पड़ता है कि ईश्वर ही सबका नियंता है और वही जीव के सुख-दुख का नियमन करता है।

''शुभ अरू असुभ करम अनुहारी।
ईसु देइ फल हृदय बिचारी।।''(रा०मा० 2/76 (7)

वह ईश्वर ही असत् कर्म करने वालों के लिए विष्णु से शिव के रूप में परिवर्त्तित हो जाता है। इसलिए बुद्धिमान व्यक्ति को 'सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं ब्रज' का अनुसरण करते हुए अपने समस्त कर्मों को ईश्वर के प्रति समर्पित कर देना चाहिए-

''अस बिचारि जे परम सयाने।

भजहिं मोहिं संसृत दुख जाने।।(रा०मा० 7/40/6)

(N.P. कर्म को देश शब्दों में 'करनी' और 'करतूत' भी कहा जाता है। लेकिन, ये दोनों कर्म से भिन्न हैं। लोक जीवन में जैसी करनी वैसी भर्ती' कहावत प्रचालित है। 'करनी' पूर्व निश्चित कर्म है। अत: इसके शुभ-अशुभ फलाफल का आभास सभी को होता है और इसकी आलोचना कर्म करने के पहले ही प्रारंभ हो जाती है। 'करनी' मांगलिक भी हो सकती है और अमांगलिक भी। राम की 'करनी' मंगलमय थी- ''समुझि परी मोहि उन्ह कै करनी।

रहित निसाचर करिहहिं धनरी।''(रा०मा० 3/21/4)

'करतूत' शब्द आदत का परिचायक है। अत: आदत या स्वभाव जन्म कर्म 'करतूत' कहलाते हैं। करतूत भी कर्म की भाँति सत्-असत् होते हैं। आदत और स्वभाव के निर्धारण के प्रसंग में 'करतूत' चरित्र का निर्माण करती है। सत् कार्यों में 'करतूत' प्रशंसनीय है। 'रामचरित मानस' में राम-भक्त पात्रों के कृत्यों को 'करतूति' कहा गया है- यथा-

''सोइ करतूति विभीषण केरी।'

अथवा- ''समुझि मोरि करतूति कुल प्रभु महिमा जियं जोइ।'' इस तरह 'करतूत' स्वाभाविक अभ्यास-जनित कर्म है, जो छल कपटादि से रहित सत् रूप होता है। कभी-कभी विपरीत परिणाम लोकनिन्दा का विषय बन जाता है।

इसी से मिलते-जुलते शब्द 'कुचाल' और 'सुचाल' भी प्रयुक्त होते हैं। कुचाल के पूर्व छल, कपट, स्वार्थ, पाखंड आदि प्रवृत्रियाँ काम करती हैं। 'मानस' में अनेक 'कुचाली' हैं- मंथरा, इंद्र, बालि आदि अनेक उदाहरण हैं।

'सुचाल''कुचाल' से विपरीत क्रिया है। इसके पीछे कर्त्ता का अभिप्राय प्राय: निश्चित रहता है। इसके पीछे कोई असत् प्रवृत्ति काम नहीं करती है।

इन शब्दों के सूक्ष्म अन्तर और उनके अनुप्रयोग के आधार पर हम कह सकते हैं कि हमारे जीवन में कर्म की प्रधानता है। श्री कृष्ण ने भी 'गीता' में कहा है- 'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन'। अत: कर्म की महत्ता सर्व प्रमुख है- ''उद्यमेन हि सिद्धयन्ति कार्याणि न मनोरथै:'' कर्म से ही कार्य की संप्राप्ति होती है, केवल इच्छा करने से नहीं।

कर्मवाद से भिन्न हमारे देश में 'भाग्य' और 'भाग्यवाद' की अवधारणा भी चलती है। इस भाग्यवाद को ज्यादातर ईश्वरवादी और भाग्यवादी लोग अधिक महत्त्व देते हैं। ईश्वर ने जन्म दिया है तो वह अवश्य हमारी आवश्कताओं की प्रतिपूर्त्ति भी कर देगा। हद तो तब हो गई, जब मलूक दास ने इस तर्क का सहारा लेकर अपनी बात कह दी-

''अजगर करै न चाकरी, पंछी करै न काम।

दास मलूका कहि गये, सब के दाता राम।।''

लेकिन, यह भी ध्यान रखना चाहिए कि– ''नहि सुप्रस्य सिंहस्य प्रविशन्ति मुखे मृगा:''। सोये हुए शेर के मुँह में स्वयमेव मृग प्रवेश नहीं करते, इसके लिए उसे आखेट करना पड़ता है। ईश्वर भी उसी की मदद करते हैं, जो अपनी सहायता अपने आप करता है। अर्थात् यहाँ भी कर्म की ही प्रधानता परिलक्षित होती है।

भाग्यवाद ईश्वर के प्रति अनन्य आस्था उत्पन्न करने वाला है। अपनी रूढ़ परम्पराओं एवं आर्थिक व्यवस्था के कारण भी भाग्यवाद को संबल मिला है। कहा जाता है कि भाग्य से परे किसी को कुछ नहीं मिलता। भाग्यवाद लोकसम्मत है, अत: अधिकांश लोग भाग्यवादी ही होते हैं। यह दीन–हीन मनुष्यों का सबसे बड़ा सम्बल है। ऐसे लोग लोकजीवन में 'लकीर के फकीर' कहे जाते हैं। इनका परम पौरूष ईश्वर पर अखंड विश्वास ही है। प्रभु की कृपा और इच्छा ही उनके लिए प्रधान है। जो कुछ संसार में घटित हो रहा है, वह ईश्वर की इच्छा से ही हो रहा है। कुतर्क तो यहाँ तक दिया जाता है कि जब हमारे भीतर ईश्वर का वास है, तो वही हमसे चोरी और हत्याओं जैसे जघन्य पाप का भी उत्तरदायी है। वही हमसे सब कुछ कराता है। इसलिए मनुष्य किसी प्रकार से दोषी नहीं है। दरअसल यह अवधारणा भावना पर टिकी है। ज्ञानी भाग्यवाद पर कम विश्वास करते हैं, कर्म पर अधिक भरोसा रखते हैं। भावुक लोग भाग्य पर ज्यादा विश्वास करते हैं ज्ञान पर कम। भाग्यवाद पर धार्मिक विश्वास की प्रतिच्छाया पड़ गयी है।

तुलसीदास ने भाग्यवाद को 'भवितव्यता' कहा है, जो कोहे भाग्यवादियों से भिन्न ईश्वरकृत कही जा सकती है। इस ईश्वरकृत भवितव्यता को ही भाग्य, सौभाग्य, करम, लेख, लिलार में लिखा, विधिगति, ईश अधीन, दैव आदि शब्दों से पुकारा जाता है। जन्म–मरण, हानि–लाभ सब कुछ ईश्वर के अधीन है–

''सुनहु भरत भावी प्रबल, विलखि कहेउ मुनि नाथ।

हानि–लाभ जीवन–मरन, जसज्अपजस विधि हाथ।''

(रा०मा० 2/171)

तुलसीदास के यहाँ कई पात्र ईश्वरकृत भाग्य के अधीन दिखाये गये हैं, यथा–कौशल्या, महेश, बसिष्ठ, भारद्वाज आदि। तो क्या तुलसीदास भाग्यवादी थे, कर्मवाद पर उनका भरोसा नहीं था ?क्या भवितव्यता के बल पर ही 'रामबोला' गोस्वामी तुलसीदास बन गया ?क्या अपने निर्माण में उनके कर्म की कोई भूमिका नहीं थी ?निश्चय ही इन प्रश्नों का उत्तर नकारात्मक होगा। 'चार चबेने' के लिए तरसते और 'मसीद' में सोने का ऐलान करने वाले तुलसीदास कोरे भाग्यवादी नहीं हो सकते।

मेरी अवधारणा है कि कर्म से प्राप्त बल में बहुत शक्ति होती है। इससे शरीर और आत्मा की शुद्धि होती है।

◆

पूर्व हिन्दी विभागध्यक्ष एवं संकायाध्यक्ष
मानविकी, मगध विश्वविद्यालय, बोधगया

गया पितृश्राद्ध की अवधारणा

श्री योगेश्वर शर्मा 'योगेश'

श्रद्धयत्यत् कियते तत् श्रद्धम् ''अर्थात् श्रद्धापूर्वक किया गया कार्य ही श्राद्ध है। प्रश्न यह भी है कि श्राद्ध किसके प्रति ?उत्तर खोजने के लिये भी कही दूर भटकने की आवश्यकता नहीं है। जिसके पार्थिव शरीर द्वारा हमारे पार्थिव शरीर की संरचना हुई है जिसने खुद भूखे रहकर भी हमारा पालन पोषण किया है। क्या उसके प्रति श्रद्धा जतलाना हमारा कर्त्तव्य नहीं बनता ? जिन पूर्वजों द्वारा हमे संस्कार दिया गया है सच्चाई, ईमानदारी आदि सद्गुणों की अमूल्य निधियाँ प्रदान की गयी है क्या उनके प्रति श्रद्धा भाव व्यक्त करना हमारा फर्ज नहीं बनता ? हिन्दू धर्म मृत्यु को अवसान नहीं बल्कि अर्द्धविराम मानता है, दूसरे नये जीवन में प्रवेश का द्वार मानता है। अर्थात् स्थूल को सूक्ष्म में तत्पश्चात सूक्ष्म को स्थूल में रूपान्तरित होने की प्रक्रिया मानता है। वास्तव में यह स्पष्ट रूप से दीखता तो नहीं है पर अनुभव किया जा सकता है। स्थूल शरीर को त्यागने के बाद पुनः स्थूल शरीर ग्रहण करने की अवधि तक मनुष्य की आत्मा प्रेत योनि में रहती है जिसकी आसक्ति पूर्व के स्थूल शरीर से बनी रहती है। तभी तो प्रेत योनि में नरक योग रहे पितरो की आत्मा अपने वंशज्ञों से शुभ कर्म की आकांक्षा करती है ताकि प्रेत योनि से उनकी मुक्ति हो सके– ''कांक्षति पितरः पुत्रान् न रका दव्य भीखः

गयां यास्मति यः पुत्रः स वस्त्राता भविष्यति'' उपरोक्त श्लोक में ऐसे शुभ कर्म करने का सर्वोतम स्थान ''गया धाम'' की चर्चा आयी है क्योंकि भाद्र पद शुक्ल पक्ष पूर्णिमा के दिन महालया में तीनों लोक के लय होने की चर्चा शास्त्रों में की गयी है। अतएव ऐसी सभी आत्माओं को गण असुर की आत्मा अपनी ओर आकर्षित कर गया धाम पहुँच जाती है। क्योंकि गण असुर की आत्मा को गयाधाम से अधिक लगाव है। मान्यता यह भी है कि मृत व्यक्ति की आत्मा अग्नि संस्कार के समय ही अग्नि की लपटों के माध्यम से पितृलोक पहुँच जाती है, जिसे चन्द्रलोक के पहले माना जाता है। शुभ–कर्म करने वाले सतोगुणी प्राणी की आत्मा ही केवल पितृलोक पहुँचती है अन्य सभी आत्माएँ प्रेत योनि में विचरण करते रहती है। पितरों की श्रेणी में केवल माता–पिता, दादा–दादी, नाना–नानी ही नहीं आते बल्कि गुरू तथा आचार्य की आत्मा की गणना भी इसमें की जाती है। तभी तो कहा गया है–

''मातृ देवे भव, पितृदेवे भव आचार्य देवो भवः'' वैसे तो भगवत गीता में भगवान श्री कृष्ण ने आत्मा को अमर अजर तथा शाश्वत बतलाते हुये कहा है–

''नजायते म्रियते वा कदाचित् नाऊयं भूत्वा भविता व न भूयः अजो नित्यः शाश्वतोडयं पुराणों न हन्यते हन्यमाने शरीरे'' अर्थात् आत्मा का कभी विनाश ही नहीं होता है विनाश तो प्राणी के स्थूल शरीर का होता है जो मिट्टी से बनता भी है और मिट्टी में ही समा हित भी हो जाता है। शास्त्र मं यह भी उल्लेख आया है कि पुम नामक नरक में वास कर रहे पूर्वज की आत्मा को मुक्त करने का अधिकारी केवल पुत्र होता है।

''पुम्नाम्नों न रकाद् यस्चात् पितरं त्रायते सुतः
तस्मात पुत्र इति प्रोक्तः पितून्यः पाति सर्वतः''

यही कारण है कि मनुष्य पुत्र पाने की कामना हेतु युवा होते ही विवाह बंधन में पड़ना भी सहर्ष स्वीकार कर लेता है भले ही उसे शेष जीवन में यातनाएँ क्यों न झोलना पड़े। इतना ही नहीं पुत्री पाते ही वह हताश

सादीखता है जबकि कई पुत्र पाने की आकांक्षा बनी रहती है क्योंकि- **''ऐष्टव्या वहनः पुत्रा गुण सन्तो न बहुश्रूताः तेषां वै समसेतानिामपि कश्चित् गयां व्रजेत''** विष्णु पुराण में पितृ श्राद्ध हेतु सर्व श्रेष्ठ स्थान गयाधाम को ठहराया गया है- **''गयाभुपेत्ययः श्राद्धं करोति पूथ्वी पते सफलं तस्य त जन्म जयते पितृ तूष्टिकम्''** कूर्मपुराण में भी गयाधाम की श्रेष्ठता का उल्लेख इस प्रकार आया है- **''गयातीर्थम् महातीर्थम् तीर्थम चैव महानदी नारयणं परम तीर्थम् वंपु तीर्थम मत्तमम''** अन्य तीर्थ स्थलो पर किया गया यज्ञ, दान का पुण्य फल केवल यज्ञकर्ता को मिलता है जबकि गयाधाम में किये गये शुभ कर्मों का फल यज्ञ कर्ता के पूर्वजों को भी मिलता है। अन्य तीर्थ स्थलो पर भगवान विष्णु को शेष शैय्या पर आराम करने की मुद्रा में दिखलाया गया है। जबकि गयाधाम में भगवान विष्णु को अपने भुंजाओ में शंख चक्र, गदा, पद्म धारण किये हुये खड़े मुद्रा में दिखलाया गया है। इसके अतिरिक्त गयाधाम अन्तः सलिला फल्गु नदी के तट पर बसा है जो भगवान विष्णु के दाये पैर के अंगूठे के निसृत मानी जाती है तथा इसके जल की महिमा गंगाजल से भी अधिक पूज्य मानी जाती है। यही कारण है कि गयाधाम पितृ श्राद्ध की गणना मुक्ति के साधनों में की गयी है-

''ब्रह्मज्ञानं गया श्राद्धं गो गृहे मरणं तथा
वासः पुंसा कुरूक्षेत्रे मुक्ति रेषा चतुर्विधा''

◆

संरक्षक-अखिल भारतीय विद्वत् परिषद
गया प्रमंडल शाखा, गया

नैतिक मूल्यों की प्रासंगिकता

डॉ० राधा मोहन तिवारी
एवं डॉ० अजय प्रसाद राय

नैतिक मूल्य शास्वत हैं, सार्वदेशिक हैं, सार्वकालिक हैं। इतिहास साक्षी है कि जब-जब नैतिक मूल्यों के महत्व को नकारा गया है, समाज व देश पतन की ओर अग्रतर हुए हैं। आज भी वहीं स्थिति है। आज की विषम जटिल वैयक्तितक, सामाजिक, राजनैतिक एवं अंतर्राष्ट्रीय परिस्थितियों ने मनुष्य का जीना दूभर कर दिया है, यहाँ तक की मानव अस्तित्व ही खतरे में पड़ गया है। स्वार्थ की भावना से मनुष्य इतना ग्रसित है कि व्यक्ति में चरित्र नहीं, समाज में व्यवस्था नहीं, देश में सही नेतृत्व नहीं, सभी ओर अनैतिकता पनप रही है। आज व्यक्ति के लिए पैसा ही सब कुछ हो गया है। वह येन-केन-प्रकारेण धन प्राप्त करना चाहता है। भौतिक सुख-सुविधाओं की होड़ में व्यक्ति अनैतिक कर्मों के गर्त में गिरता जा रहा है। देश में घोटालों की राजनीति पनप रही है।

मानव की बुद्धि के चर्मोत्कर्ष ने जहाँ उसे महानता के शिखर पर पहुँचा कर सम्पूर्ण प्रकृति को वश में करन की प्रेरणा दी है, वही उसकी बुद्धि का यह विकास उचित नैतिक मार्गदर्शन के अभाव में सम्पूर्ण मानव के विनाश कारण बनता जा रहा है। जहाँ एक ओर मानव अपेन सुकर्म द्वारा महामानव बन सकता है, वहीं दूसरी ओर अपने कुकर्म द्वारा दानव भी बन सकता है। सुख की खोज में भटकता मानव जिस डाल पर बैठा है, उसी को काट रहा है।

आज हमारा यह नैतिक दायित्व है कि हम विज्ञान को विध्वंसात्मकता की ओर बढ़ते कदमों को रोकें और उसे रचनात्मक कार्यों में लगायें। इसके लिए आवश्यक है कि हम नैतिक मूल्यों को पुनः स्थापित करने का प्रत्यन करें। यह चिन्तकों का दायित्व है कि वे समाज को सही दिशा दे और यह कार्य दर्शन को करना है। आज व्यक्ति के चारित्रिक पतन, समाज व देश के नैतिक पतन से सब क्षुब्ध है, क्रुद्ध है तथा इससे उबरना चाहते है पर कोई रास्ता दिखाई नहीं दे रहा। ऐसे में नीतिदर्शन को इस गम्भीर दायित्व का निर्वाह करना है। आज की अनैतिक परिस्थितियाँ एक ऐसे वैचारिक नेतृत्व का आह्वान कर रही हैं जो मानव को सही मार्ग दिखा सके, उसे अनैतिकता के गर्त से उबारे और यह कार्य नीतिदर्शन ही कर सकता है, नैतिक शिक्षा द्वारा।

आज की पीढ़ी नैतिक मूल्यों से प्रयाण कर चुकी है। नैतिकता में उसकी आस्था समाप्त हो गयी है। सर्वत्र अनैतिकता का बोलवाला है। कालाबाजार, भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी मनुष्य जीवन का अंग बन गई है। ऐसे में प्रबुद्ध वर्ग बहते पानी के साथ बहते रहने की नियति का निर्वाह करे या बहते पानी को दिशा परिवर्तन का बोझ उठाये, यह निर्णय लेना है। मनुष्य की क्षमता पर तो अविश्वास नहीं किया जा सकता, उसने असम्भव को भी संभव कर दिखाया है। प्रश्न है, सही दिशा–ज्ञान का और सही–दिशा ज्ञान दे सकता है– नैतिक अंतर्दृष्टि सम्पन्न चिन्तक। अगर नीट्शे की शिक्षा जर्मन जाति से दो प्रलयंकारी युद्ध करवा सकती है, तो महात्मा गाँधी की शिक्षा ने अहिंसा के आगे हिंसा को नतमस्तक कर दिया है।

हमें आज अपनी क्षमता को पहचानता है और समाज व देश के प्रति अपने कर्त्तव्यों के पालन में अपने आपको समर्पित करना है। आज देश में विघटनकारी शक्तियाँ सिर उठा रही हैं, धर्म के नाम पर खून की होली खेली जा रही है। आतंकवादी शक्तियाँ निर्दोष लोगों की हत्या कर भय के वातावरण का निर्माण कर रही है, लोगों को भ्रमित किया जा रहा है। ऐसी परिस्थिति में प्रबुद्ध हाथ पर हाथ रखकर नहीं बैठ सकता। प्रत्येक व्यक्ति के जैसे परिवार के प्रति कर्त्तव्य हैं, वैसे ही समाज व देश के प्रति भी तथा मानव मात्र और प्राणीमात्र के प्रति भी होने चाहिए। वह इन सबके प्रति प्रतिबुद्ध है। हमें आज की विषम परिस्थिति का कारण खोजना है और वह है– नैतिकता का ह्रास। आज हम देख रहे हैं कि लोगों में नैतिक मूल्यों के प्रति आस्था नहीं रही। इसलिए आज नैतिक शिक्षा के महत्व को समझने और समझाने की परम आवश्यकता है। नैतिक शिक्षा की प्रथम पाठशाला है परिवार, फिर विद्यालय और महाविद्यालय इत्यादि। पर आज न तो परिवार में बच्चों को नैतिक शिक्षा दी जा रही है और न शिक्षा के केन्द्रों में ही। शिक्षा के केन्द्र तो कोरी शिक्षा के केन्द्र बनकर रह गये हैं, जहाँ शिक्षा का आचरण से कोई सम्बन्ध नहीं। दुःख की बात यह है कि नैतिक शिक्षा देगा कौन ?जब शिक्षा देने वाला स्वयं अनैतिक आचरण में लिप्त हो, तो वह दूसरों को क्या शिक्षा दे सकता है।

नैतिक मूल्यों की पुनर्स्थापना की जानी चाहिए। समाज में सत्य–असत्य, पुण्य–पाप, उजाले और अंधेरे के समान हमेशा विद्यमान रहते हैं। हमारा यह प्रयास हो कि हम सत्य की असत्य पर, धर्म की अधर्म पर, नैतिकता की अनैतिकता पर विजय का प्रयास करते रहें और केवल शब्दों में नहीं, वरन् सच्चे मन से ''सत्यमेव जयते'' का उद्‌घोष करें। तभी हम ''वसुधैव कुटुम्बकम्'' तथा'' विश्वबन्धुत्व'' की भावना स्थापित कर सकते हैं। केवल मौखिक रूप से ''सत्यमेव जयते'' एवं ''विश्वशाँति'' की चर्चा करने से इन्हें स्थापित नहीं किया जा सकता। इन्हें वास्तविक रूप में पाने के लिए इन्हें इसके सच्चे अर्थों में आत्मसात् करना होगा और सही चिन्तन का प्रसार करना होगा। हमें यह समझना और समझाना होगा कि नीति का धर्म से अटूट सम्बन्ध है। कोई भी धर्म अनैतिक आचरण की शिक्षा नहीं देता, हिंसा की शिक्षा नहीं देता। जब सभी धर्म एक ही ईश्वर को

मानते हैं तो फिर धर्म के नाम पर यह ताण्डव क्यों ?आजकल धर्म को भी अपने हित का साधन बना लिया गया है। धर्म तो मानव मात्र को एकता के सूत्र में आबद्ध कर उस परम शक्ति का ज्ञान कराना है जो एक है, फिर भी कण-कण में व्याप्त है, निर्गुण है, निराकार है, फिर भी धर्म की रक्षा हेतु राम और कृष्ण के रूप में अवतरित होता है। वही राम है, वहीं अल्लाह है, वही गॉड है और वहीं अदृश्य परम शक्ति है। जब हम सब उसकी सन्तान हैं तो फिर भेद कैसा ?यही सही चिंतन है और जिस चिन्तन को हम धारण करते हैं, वहीं हमारा धर्म बन जाता है।

आज धर्म-अधर्म, नीति-अनीति, सत्य-असत्य का महाभारत छिड़ा हुआ है आज का अभिमन्यु बेरोजगारी, काला-बाजारी, रिश्वतखोरी, नशाखोरी के चक्रव्यूह में फँस गया है। उसे इस चक्रव्यूह से निकाल सकती है- नैतिक शिक्षा और केवल नैतिक शिक्षा ही। इस नैतिक शिक्षा को शिक्षा का आवश्यक अंग बनवाने का दायित्व निभाना है, प्रबुद्ध चिन्तकों को। यदि हम चाहते हैं कि हमारे अतीत की धरोहर सुरक्षित रहे, हमारा दर्शन, हमारी संस्कृति जिसपर हमें गर्व है अक्षुण्ण रहें, तो हमें नैतिक मूल्यों को अपने जीवन का आवश्यक अंग बनाना होगा। जिस प्रकार अंधकार से लड़ने के लिए एक दीपक ही पर्याप्त होता है, वैसे ही नैतिक अन्तर्दृष्टि का प्रकाश नि:सन्देह समाज व देश में व्याप्त अनैतिकता के अंधकार को दूर कर सकेगा। आवश्यकता है, केवल अपने कर्त्तव्य-बोध की और दृढ़ मनोबल की।

आज नैतिकता की बातें कोई सुनना भी नहीं चाहता। ऐसी स्थिति में नैतिक मूल्यों की पुनर्स्थापना का कार्य कठिन तो अवश्य है, पर असम्भव नहीं। नैतिक मूल्य शास्वत होते हैं, पर देश, काल, परिस्थिति के अनुसार उन्हें अपनाने में कठोरता का पालन न कर समयानुसार उन्हें अपनाना चाहिए। इसके लिए मध्यम मार्ग का पालन ही सदैव श्रेयस्कर माना गया है। नैतिक गुणों को अपनाने में भी हम मध्यम मार्ग का पालन करते हैं। अरस्तु ने सदगुण का मध्यम मार्ग चुनने की आदत माना है। कहा गया है- ''अति सर्वत्र वर्जयेत'' अति सदैव बुरी होती है। इसलिए बुद्धिमत्ता इसी में है कि मध्यम मार्ग चुना जाये। चुनाव की यह आदत ही सद्‌गुण कहलाती है। सद्‌गुणी व्यक्ति वह नहीं जो कायर है और न अति साहस के कारण खतरों को आमंत्रण देने वाला उद्‌दण्ड, वरन् सद्‌गुणी व्यक्ति वह है जो कठिनाईयों से घबराता नहीं, वरन् उनसे मुकाबला करने का सहस रखता हैं उसमें नैतिक साहस होता है। न तो अत्यधिक अपव्ययी होना सद्‌गुण है और न कंजूस होना, वरन् मितव्ययी और मिताचारी होना सद्‌गुण है नैतिक मूल्यों की प्राप्ति हेतु सद्‌गुणी होना आवश्यक है और नैतिक मूल्यों को प्राप्त करना मानव मात्र का कर्त्तव्य है।

आज सम्पूर्ण विश्व बारुदों के ढेर पर बैठकर विश्वबन्धुत्व व विश्वशांति की बात कर रहा है। हमारी सोच, हमारी वेश भूषा, हमारा आचार-व्यवहार सभी पाश्चात्य संस्कृति के रंग में रंग गए हैं। यही कारण है कि हमारी संस्कृति के अस्तित्व को खतरा पैदा हो गया है। हम उस खतरें को समझे तथा अपनी सभ्यता संस्कृति के गौरव को अक्षुण्ण रखें और जिसका संरक्षण हमारा नैतिक दायित्व है।

◆

पूर्व अध्यक्ष, संस्कृत विभाग
मगध विश्वविद्यालय, बोधगया

जल प्रबंधन और तर्पण

श्री अभिषेक शेखर

जल के बिना मानव जीवन संभव ही नहीं है। जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त हर कदम पर जल की आवश्यकता होती है, यहाँ तक कि मृत्यु के बाद होने वाले श्राद्ध कर्म व तर्पणादि कार्यों में जल की आवश्यकता होती है। इसके अलावा दैनिक कार्यों में जल का महत्वपूर्ण स्थान होता है। अत: जल प्रबंधन एवं जल संचयन हमारे जीवन का उद्देश्य होना चाहिए। हमें बाद के 1,500 अरब घन मीटर जल का इस प्रकार नियंत्रण करना चाहिए कि इसका इस्तेमाल सूखाग्रस्त क्षेत्रों तथा देश के अन्य इलाकों को पर्याप्त जल मौसम में उपलब्ध कराने में कर सकें। इसके लिए हमे नदियों को जोड़ने एवं पानी के समुचित भंडारण और वितरण के उपाय करने होंगे।

जल संचयन और इसके पुन: प्रयोग को सभी राज्यों में कानूनी तौर पर अनिवार्य बना दिया जाना चाहिए। जल स्तर में सुधार के लिए हमें चेक बाँध बनाने, जलाशय, नदियों और जल विभाजकों के विकास, तालाबों में पानी के आने-जाने के रास्ते को खुला रखने और कुओं के पानी की भरपाई की व्यवस्था करनी चाहिए। अगर ग्रामीण क्षेत्रों में जलाशयों को साफ और चालू रखा जाए तो कुँओं के पानी के भरपाई अपने आप होती रहेगी। इन गतिविधयों से रोजगार के अवसर बढ़ेगें। तमिलनाडु सरकार ने इस दिशा में अग्रणी कदम उठाए हैं और गाँवों सहित सभी परिवारों के लिए जल संचयन को कानूनी तौर पर अनिवार्य बना दिया है। इसके कारण वहाँ भू-जल स्तर में पर्याप्त सुधार हुआ है।

जल संचयन के अलावा होटलों, सार्वजनिक संस्थानों और उद्योगों जैसे बड़े उपभोक्तओं के लिए पानी को साफ करके उसका पुन: प्रयोग करना अत्यावश्यक है। फिर से साफ किए पानी का इस्तेमाल पीने के अलावा खेती सहित हर क्षेत्र में किया जाना चाहिए। इसके पानी की प्रतिव्यक्ति आवश्यकता मौजूदा खपत की तुलना में 25 प्रतिशत कम हो जायेगी। साथ ही जनसंख्या के काफी बड़े हिस्से को पानी और सफाई के लिए काफी पानी मिलने लगेगा।

जल एक सार्वजनिक सम्पदा है क्योंकि यह जीवन का पारिस्थितिकीय आधार है और इसकी उपलब्धता और साम्यिक आवंटन सामुदायिक सहयोग पर आधारित है। हालांकि समस्त मानव इतिहास की विभिन्न संस्कृतियों में जल-प्रबंधन सार्वजनिक है और हालांकि ज्यादातर समुदायों ने जल-संसाधनों का प्रबंधन संयुक्त सम्पदा की तरह किया या आज भी पानी तक पहुँच, सार्वजनिक सम्पदा की तरह है लेकिन जल संसाधनों के निजीकरण की माँग जोर पकड़ रही है।

अंग्रेजों के आने से पहले, दक्षिण भारत के समुदाय जल-व्यवस्था का संयुक्त प्रबंधन, कुडीमरामथ (स्वयं मरम्त) नामक प्रणाली के माध्यम से करते थे। 18वीं शताब्दी में ईस्ट-इंडिया कम्पनी के नियमित शासन के प्रादुर्भाव से पहले, एक किसान कमाए गए अन्न की अपनी 1000 इकाइयों में से 300 का भुगतान सार्वजनिक निधि को करता था और इनमें से 250 का सार्वजनिक सम्पदा और लोक निर्माण के रख-रखाव के लिए गाँव में इस्तेमाल होता था। 1830 तक, किसानों का भुगतान बढ़कर 650 इकाइयाँ हो गई जिनमें से 590 इकाइयाँ सीधे ईस्ट-इंडिया कम्पनी को चली जाती थी। बढ़े भुगतानों और रख-रखाव राजस्व के नुकसान से किसान और सार्वजनिक सम्पदा बर्बाद हो गई। फलत: भारत में सदियों पुराने 300000 तालाब और जल स्रोत नष्ट हो गए जिससे कृषि उत्पादन और आय प्रभावित हुई।

जल की सार्वजनिकता का विचार, पीढ़ी-दर-पीढ़ी चली जिससे कमी की दशा में, जल-प्रबंधन की दीर्घकालीन व्यवस्था विकसित हुई। संरक्षण और सामुदायिक निर्माण के लिए जल संसाधन में प्राथमिक निवेश, श्रमदान था। स्थानीय प्रबंधन पर आधारित जल प्रबंधन की व्यवस्था बहुत ही महत्वपूर्ण था, जो सूखे खेतों में पानी की कमी को पूरा करता था।

एक जमाने में, भारत में जलाशय के निर्माण और देख-रेख के लिए कृषक संगठनों की व्यवस्था बेहद विशाल थी। पोखर और तालाब एक से ज्यादा गाँव की सहायता करते थे और ऐसी स्थिति में प्रत्येक गाँव के प्रतिनिधि या कृषक संगठन लोकतांत्रिक नियंत्रण रखते थे।

विश्व प्रसिद्ध मोक्षधाम गया शहर में बने विभिन्न पोखर व तालाब सामुदायिक जल संचयन व प्रबंधन का ही रुप है। पितृपक्ष में इन तालाबों में अपने पित्तरों के मुक्ति हेतु पिण्डदान व तर्पण का कार्य किया जाता है। भारत के विभिन्न राज्यों और विदेशों से आए हुए लोग बड़ी ही श्रद्धा और विश्वास के साथ इन तालाबों में तर्पण किया करते है। इन तालाबों का धार्मिक महत्व तो है ही, साथ ही साथ इनमें जल संचयन व जल प्रबंधन भी किया जा सकता है। विष्णु धाम गया शहर में जल संकट रहा है। इसलिए भू-गर्भ जल संचयन हेतु ही पोखर और तालाबों का निर्माण कराया गया था। गया शहर में स्थित कतिपय पोखरों और तालाबों के नाम इस प्रकार है- रुक्मिणी तालाब, ब्रह्मसत् तालाब, दुर्गाकुण्ड, वैतरणी, घुँघरीटाँड़ पोखर, बिड़निया चुआँ, कपिलधारा, रामसागर तालाब, दिग्घी तालाब, विसार तालाब, बागेश्वरी तालाब, सरयू पोखर इत्यादि।

इन तालाबों को देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि यहाँ जल संचयन व प्रबंधन की समुचित व्यवस्था थी। भू-गर्भ जल स्तर नीचे नहीं जायें इस बात का पूरा ध्यान रखा गया था। आवश्यकता इस बात की है कि इन तालाबों की साफ-सफाई पर ध्यान दिया जाए। इन पोखरों व तालाब से एक दीर्घकालिक सामुदायिक योजना तैयार किया जाए जिसमें जिला प्रशासन व स्थानीय लोगों का भरपूर सहयोग रहे। साथ ही अन्तः सलिला फल्गू नदी पर बाँध बनाकर सिंचाई व बिजली उत्पादन के अलावा पेयजल की कमी को भी पूरा करने का उपाय किया जाए।

निष्कर्षतः हम कहना चाहेंगे कि सबको शुद्ध हवा, मिट्टी और जल उपलब्ध करना हमारा लक्ष्य होना चाहिए। शुद्ध हवा, मिट्टी और जल जीवन का आधार है। वनों और नदियों के बीच संबंध जोड़कर ही देश में प्रचुर पानी उपलब्ध कराया जा सकता है।

◆

अशोक नगर, ए०पी० कॉलोनी, गया

रहिमन पानी राखिये
बिन पानी सब सून।।
पानी गये न उबरहि
मोती मानुष चून ।।

गयावाल पंडों के उपाधिनाम

प्रो० डॉ० रामनिरंजन परिमलेन्दु

पुरातन पौराणिक मान्यता है कि गया क्षेत्र में मृत्यु होने पर ब्रह्मज्ञान के बिना भी मनुष्य को मुक्ति की तृप्ति होती है। गया तीर्थ सम्पन्न करने वाले मनुष्यों को अकाल मृत्यु होने पर भी प्रेतयोनि में निवास नहीं करना पड़ता है। इसीलिए भारत के सांस्कृतिक नगर पावन गया का माहात्म्य है। एक कोस में गयाशिर और पाँच कोस में गया क्षेत्र है। जिसके मध्य में सम्पूर्ण हिन्दू तीर्थ का वास है। इस गया नगर के गयावाल पंडों का विविधतापूर्ण इतिहास उतना ही प्राचीन है जितना गया क्षेत्र का रामायण काल में मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम ने स्वंय सपत्नीक गयाश्राद्ध कर गयावाल कल्पित बाह्मणों अर्थात् गयावाल पंडों को मर्यादा एवं महत्त्व प्रदान की थी, यह एक सर्व विदित सत्य है।

गयावाल पंडों के उपाधिनामों में विलक्षणता है। ऐसे उपाधिनाम अन्यत्र दुर्लभ ही है। उनके उपाधिनाम से उनके गयावाल बंशोद्भव होने का परिजात हो जाता है। उनके उपधिनाम के उद्भव के अनुसंधान-अनुशीलन की आवश्यकता है।

पण्डित कान्हुलाल गुरदा गयावाल समाज के रत्नस्वरूप ही थे। वे एक उत्कृष्ट साहित्यकार थे। 1905 ई० में लिखित 'वृहद् गया माहात्म्य' शीर्षक अपनी पुस्तक के 109 वें पृष्ठ पर उन्होंने धनाक्षरी और दोहा में गयावाल पंडों के उपाधिनामों का उल्लेख किया था। गुर्दा, गुप्त, गोलीवार, गोस्वामी, सानिकर, पाठक, पौहारी, सेन, भैया, टैया, देवनार, परबतिया, पांडे, पध्या, दुबे, झंगर, मिशिर, बड़ी धोकड़ी, धौकडेश्वर हंद, बुट्टी, कुट्टी, मऊआर, ठट, करी, कटरियार, भट्ट, जज्ज, ठेढी, हल्ल, राजा, नायक, बढ़िया, पौलाद, बारिक, बेलदार, चारयारी, चौधरी, अहिर, महतो, दुबहलिया, टाटक, खडखौका, मेहरवार, गायब, सिजुआर।।

ग्राईं लराह भोगता नकफोफा डिहुआर।

हाडा महथा कोलकट पंसेरा खंतियार।।

इसके अतिरिक्त भी अनेक उपाधिनामों के गयावाल थे। किन्तु विगत सवा सौ वर्षों से उपर्युक्त धनाक्षरी और दोहे में वर्णित गयावाल ही शेष रह गए।

पंडति कान्हूलाल गुरदा का इस संबंध में कथन है कि किसी व्यक्ति अथवा कुछ के पीछे पदवी इसलिए लगाई जाती है कि उसी देश के उसी जातिवाले में से किसी एक व्यक्ति का कुल को शीघ्र पहचान लेने में दिक्कत नहीं हो।

गयावालों की वंशानुगत व्यवसायिक उपाधियों का संक्षिप्त परिचय भी अत्यंत रोचक है जो हिन्दी वर्णमाला के अनुसार अधोलिखित है।

अग्निवार :- गयावाल कभी अन्नि की पूजा करनेवाले अग्निहोत्री ब्राह्मण भी थे। अगिनवार अग्निहोत्री का ही तद्भव रूप है। किन्तु मात्र अग्नि का ही पूजन करनेवाला गयावाल परिवार नाममात्र का ही है।

अहीर - इस उपाधि के गयावाल प्राचीन काल में सामान्यत: गोपालन का कार्य करते थे। इस उपाधि को धारण करने वाले गयावाल अतीत में मल्लयुद्ध में भी प्रवीण थे।

उपाध्याय - ब्राह्मणों की यह उपाधि वेदों के अध्ययन करने में प्रवीण गयावालों की थी।

कड़ी - कड़ी बुद्धि और बड़ी वृत्ति के गयावालों की यह उपाधि थी।

कटरियार - मुस्लिम आक्रमण काल में जिन गयावालों ने कटारी गाँव में आश्रय लिया वे कटरियार हो गए।

कान्हुलाल गुरदा के अनुसार, बड़े कट्टर होने से यारों ने यह पदवी दी।

कोहदौरी – यह उपाधि कोहदौरी गाँव से संबंधित है। मुसलमानों के आक्रमण के समय इस गाँव से पलायन कर जो गया आए, वे कोहदौरी के रूप में संबोधित किए जाने लगे।

कोलकट – कोल जनजाति को परास्त करने वाले गयावाल ब्राह्मण कोलकट कहलाए। किन्तु इस उपाधिनाम का गयावाल परिवार अब गया जी में नहीं है।

खरखौका – जो 'तृण' अथवा 'खार' से संबंध रखते थे, वे खरखौका हुए। किन्तु कान्हूलाल गुरदा के अनुसार खांड प्रिय होने से यारो ने यह पदवी दी। उन्नीसवीं शताब्दी के आरंभ में पण्डित मुन्नूलाल खरखौका 'साहित्य सरोवर' मासिक पद्यमयी पत्रिका के स्वत्वाधिकारी और संपादक थे। वे स्वयं कवि भी थे इस पत्रिका का प्रकाशन गया से किया जाता था– यह द्विभाषी पत्रिका थी, हिन्दी और संस्कृत में, पुर्णतया पद्यमयी और समस्यापूर्तियों को सर्वप्रमुखता प्रदान करनेवाली।

खुट्टी – खुट्टी अथवा झोपड़ी में रहनेवाले गयावाल खुट्टी उपाधिनाम के थे। अब यह उपाधिनाम गयावाल समाज से विलुप्तप्राय हो गया।

गायब – गुप्तभाव से रहनेवाले। जो छिपकर रहते थे, वे गायब उपाधिनाम के थे।

गोलावर – जो बंदूक अथवा गोली की लड़ाई में प्रवीण होते थे, वे गोलावर हुए। गोली कर वार अति उत्तम करने से यह उपाधि हुई।

गोसाईं अथवा गोस्वामी – गोसाईं गोस्वामी का अपभ्रंश रूप है। यह ब्राह्मणों की एक प्रचलित उपाधि है। ब्रजभूमि के ब्राह्मण गोस्वामी उपाधिनाम के बहुत हैं।

गुप्त – वैश्यों में गुप्ता होते हैं। गुप्ता का तद्भव रूप गुपुत ! कामादि शत्रुओं से रक्षित होने के फलस्वरूप 'गुप्त' उपाधि उनकी हुई। 'गुप्त' का मगही संस्कार गुपुत के रूप में कालक्रम से हो गया।

गुर्दा अथवा गुरदा – किसी राजा के दान मान में से बहुत बड़ा भाग प्राप्त करने से गुरदाय उपाधि हुई। यकार का लोप हो जाने से गुरदा शब्द प्रचलित हो गया।

चारयारी – चार गयावाल मित्रों ने सम्मिलित रूप से पुजारी की वृत्ति ग्रहण कर ली थी। मित्रता के नाम कर ये चारों परिवार चारयारी के रूप में प्रसिद्ध हुए और उनके वंशजों में यह उपाधिनाम प्रचलित हो गया। चारयारी शब्द चारियारी के रूप में भी प्रचलित है।

चौधरी – बाजार में जो प्रतिष्त है, वह चौधरी है। शब्द चतुर्धरी संस्कृत का हैं उसका देशीय रूप चौधरी हुआ। जो व्यापार कार्य में थे। वे चौधरी कहे जाते थे।

जज – स्वर्गीय लालजी गुप्ता अथवा गुपुत नामक गयावाल की विलक्षण ईमानदारी से प्रभावित होकर स्थानीय लोगों ने उन्हें जज की उपाधि प्रदान की थी।

झंगर अथवा झांगर – झिंगन पदवी पंजाब में ब्राह्मणों की होती है। पंजाब के यजमानों को विशेष वृत्ति होने के कारण झिंगन उपाधि हुई। कालांतर मं झिंगन झंगर होगया। पंजाबी यजमानों के विशेष संपर्क के कारण गयावालों का एक को अपने को झांगर कहना प्रारंभ कर दिया। झांगर ही झंगर है और झंगर झांगर।

टाटक – मगही भाषा में टाट पंचायत को कहते हैं। टाटक उपाधिधारी टाट सुव्यवस्थित संयोजित करने के प्रतिष्ठित अधिकारी माने जाते थे। गयावालों ने गयावाल समाज में पंचायत की व्यवस्था की थी। वे टाटक कहलाए। टाटक का परिवर्तित रूप टाटक है। टाटक का द्वितीय उपाधिनाम लालमोहरिया संतोषी पंडा भी है।

यह द्वितीय उपाधिनाम नेपाल के उनके यजमानों में उनकी प्रतिष्ठा का प्रतीक भी है।

टैया – मगही में टैया कुशल और बुद्धिमान को कहते है। मुसलमानों के आक्रमण काल में गयावाल समाज के जो लोग कुशलतापूर्वक कार्य सम्पन्न करते थे, वे टैया अथवा टैय्या कहे जाते थे।

डीहौर – डीह गाँव को कहते हैं, मुसलमानों के आक्रमण के समय जो गाँव की रक्षा में संलग्न रहते थे, वे डीहौर कहे जाने लगे।

टुमालिया – टुमालिया गाँव में मुस्लिम आक्रमण से आत्मरक्षार्थ जो गयावाल चले गए, आक्रमण समाप्त हो जाने और पुनः गया में सदा के लिए निवास करने के बावजूद वे टुमालिया कहलाए।

धौकेश्वरी अथवा धोकड़ेश्वर – धौकडी लोग इन्हें बड़ा मानते थे, इसीलिए यह उपाधि हुई। दूसरी मान्यता है कि तीर्थयात्रियों के ठहराव के लिए जिनके घर विशेष रूप से सुरक्षित और पवित्र माने जाते थे, वे धौकेश्वरी कहे जाते थे।

धोकड़ी – इनकी वृत्ति संबंधी धौकड़ी परती रहती थी, इससे यह उपाधि हुई। अर्थात् जिनकी धौकी कुछ दिनों के लिए खाली रह जाती थी, उन्हें धोकी कहते थे धौकी का तद्भव रूप धौकड़ी है।

नकफोफा – जिन्हें अपनी सम्पत्ति का अत्यधिक दर्प था, वे नाकफोफा अथवा नकफोफा कहे जाते थे। एक अन्य मान्यता के अनुसार नाग (सांप) का विकृत रूप नाक है। फोफा का तात्पर्य दर्प है। कहा जाता है कि मणिधर सर्प विशेष रूप से फुफकारता है। नाकफोफा का प्रचलित रूप नकफोफा है। इस विषय में अन्य मान्यता है कि नग (रत्न) को पास में रहने से फोंफा अर्थात् शेखी करते रहने से नगफोफा शब्द हुआ। नगफोफा शब्द का विकृत रूप नकफोफा हुआ।

नायक – जिनमें समाज को नेतृत्व प्रदान करने की अतिरिक्त और विशेष योग्यता और क्षमता थी, उन्हें नायक कहा जाता था। कालांतर में यह उनके परिवार के सभी सदस्यों के लिए यह उपाधिनाम हो गया।

पहाड़ी – पहाड़ के क्षेत्रों की विशेष यजमान वृत्ति करने और मुसलमानों के आक्रमण के कालखंड में पहाड़पुर नामक गाँव में अक्षय ग्रहण करने से यह उपाधिनाम गयावाल समाज में प्रचलित हुआ। पहाड़पुर गया जिला में स्थित है। मध्य भारत के पहाड़ी क्षेत्रों के तीर्थ–पुरोहित पहाड़ी कहलाए।

पसेरा – पाँच सेर भोजन करनेवाले वीर पुरुष पसेरा हुए। मान्यत यह भी है कि मल्लयुद्ध में प्रवीण एक गयावाल का भोजन पाँच सेर (एक पसेरी) था, अतः उनके उत्तराधिकारी वंशज पसेरा कहे जाने लगे।

पाण्डेय – ब्राह्मण की एक प्रचलित उपाधि।

परबतिया (पार्वतीयः) – करसिल्ली पर्वत पर रहने के कारण इनकी उपाधिनाम परबतिया हुआ। अब गया में यह घनी आबादी का मुहल्ला है।

पाठक – जो शास्त्रों और धार्मिक कर्मकांडों का अनुशीलन विशेष रूप से करते थे, वे पाठक हुए। पठन करनेवाले पाठक कहे जाते थे यह ब्राह्मणों की एक प्रचलित उपाधि है।

पौलाद – पौलाद के समान दृढ़ होने से वे पौलाद कहलाए।

बड़िहा – बड़ी डीह नामक गाँव से उनकी उपाधिनाम जुड़ा हुआ है। किसी मुसलमान बादशाह ने कभी गया पर आक्रमण किया था। उस समय कुछ गयावालों ने आत्मरक्षक पलायन कर बड़ी डीह नामक गाँव में आश्रम ग्रहण किया था। कालांतर में इन्हें वे और अच्छे वंशज बड़ि हो गए। इन्हें बढ़िया भी कहते हैं।

बीथल अथवा बिट्ठल – प्राचीन और परम्परागत शुद्ध सत्विक विचारों से युक्त विचार इस उपाधि से सुशोक्षित

हुए।

बम्टीक अथवा बारिक – मीन बुद्धि होनेवाले गहवाल करिच उपाधिनाम से अलंकृत किए गए। बुद्धि की सूक्ष्मता और विलक्षणता के लिए प्रख्ययात गयवाल बारिक कहलाए।

बेलदार बौधिया – बौधिया से तात्पर्य बुद्धिमान से है। बेलदार अर्थात् बेललता। इनके घरों पर बहुत सता लगध्न का शौक था। इसी हेतु वे बेलदार ब्रह्मण कहलाए।

भट्ट – अपनी विद्वता के लिए जो गयावाल परिवार प्रख्यात था, वह भट्ट हुआ। भट्ट का अर्थ विद्धान है। उद्भट विद्धान और वीर भट्ट कहे जाते थे।

भैया – राजभ्राता की उपाधि के लोग मध्य प्रदेश में भैया और भय्या साहब कहे जाते थे इस उपाधि के गयावाल लोगों को सहायक के रूप में प्रख्यात थे। पण्डित पन्नालाल भैया 'छैल' बीसवीं शताब्दी के आरंभिक काल में प्रख्यात कवि थे। उपन्यासकार भी थे। वे उपरडीह में रहते थे। 1932 ई० में उनका निधन हुआ। 'जमालमाला', 'कुंडलिया कुंडल' आदि आपकी काव्य-पुस्तकें थीं। उर्वशी उर्फ मोहनकुमारी उनका उपाधि है जो चार खंडों में लिखा गया था। छैल उनका कविनाम था।

भोगता – भोगता अर्थात् भोग करनेवाले। जो सदा विलासिता में लीन हो, वह भोगता था। इस उपाधि का परिवार अब कालचक्र की गति में विलीन हो गया।

भुटिया – यह किसी गाँव-विशेष से संबंधित है, जहाँ से आकर गया में कभी बस गए थे।

महत्ता – गयावालों ने यह उपाधि दक्षिण भारत के तीर्थयात्रियों से ग्रहण की थी। यह दक्षिण भारत की एक आदरणीय उपाधि मानी जाती है।

महतो – गाँव के मुखिया अथवा अत्यंत प्रतिष्ठित व्यक्ति को महतो कहते हैं। गयावालों के गाँव के मुखिया को महतो कहते थे। कालांतर में यह उपाधिनाम उसके परिवार जनों के लिए भी प्रचलित हो गया। मोहनलाल महतो वियोगी आधुनिक काल में बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न साहित्यकार थे। वे श्रेष्ठ कवि ही नहीं, उपन्यासकार और कहानीकार ही नहीं, गद्य की विभिन्न विधाओं में एक अविस्मरणीय रचनाकार और विचारक भी थे। वे गयावाल समाज के बहुमूल्य रत्न थे।

मेहरवार – तीर्थयात्रियों के प्रति अत्यधिक उदार गयावाल मेहरवार हुए। मेहरवार फारसी का शब्द है जिसका अर्थ अनुग्रहशील है। पण्डित कन्हैयालाल मेहरवार एक समधुर गीतकार है। पंडित अम्बिकादत्त व्यक्ति ने 1888 ई० में 'आश्चर्य वृत्तांत' नामक अपने उपन्यास में गयावाल मेहरवार जी के बैठकखाने का बड़ी ही सजीव वर्णन दिया था।

मउआर अथवा मौआर – बिहार में मीरा-मउआर मालिक शब्द का पर्यायवाची शब्द है।

मिसिर अथवा मिशिर – मिश्र वेद शास्त्र का अध्ययन करनेवालों को कहते हैं। मिश्र शब्द का अपभ्रंश 'मिशिर' अथवा मिसिर है।

राजा – जब गया में मुसलमानों का आक्रमण हुआ था, गयावालों के इस संवर्ग ने अन्य सभी गयावालों की रक्षा उनसे की थी।

सेन – सेना में रहने के कारण अथवा सेनानायक। विष्णुपद मंदिर के स्वर्णध्वज का निर्माण अपने ही व्यय से 1300 फसली अर्थात् 1893 ई० में इसी सेन उपाधिनामधारी लब्धप्रतिष्ठ गयावाल बालगोविन्द सेन ने करवाया था। अन्दर गया में उत्तरी द्वार के सन्निकट एक मंदिर का निर्माण भी उन्होंने कराया था जो सेनजी की ठाकुरबाड़ी के

नाम से आज भी प्रख्यात है। उनकी एकमात्र सुपुत्री श्रीमती सोनादाह सेन पं० कान्हूलाल गुरदा की धर्मपत्नी थी।

सिजुआर – श्री जुआर (बल) में सर्वदा अभिवृद्धि होते रहने के कारण श्री जुआर उपाधि हुई। उसी का अपभ्रंश रूप सिजुआर है। श्री जुआर का विकृत शब्द सिजुआर अथवा सिजवार है। इस शब्द का एक अर्थ यह भी है कि जो समयानुसार सम्पत्ति स्वीकार करे। श्री अर्थात् सम्पत्ति, जुआर अर्थत् संचय करना।

पण्डित गोपाल लाल सिजुआर का देहांत अभी हाल ही में हुआ है। वे बिहार में ब्रजभाषा के अंतिम रससिद्ध कवि थे। वे सज्जनता की मूर्ति ही थे। उनके सुपुत्र राजन अर्थात् राजेन्द्र कुमार सिजुआर एक श्रेष्ठ संगीतकार हैं।

हल अथवा हल्ल – कान्हूलाल गुरदा के अनुसार हल्ल कहकर बोलने की सखुनतकिया होने से यह उपाधि हुई। हल्ल मगही का शब्द है।

हाडा – हाड़ा राजपूतों के पुजारी–पुरोहित होने से यह उपाधिनाम हुआ।

हुंडा – कृपण व्यक्ति का यह उपाधिनाम था। इस प्रकार के मनुष्य धन हुंडा में सुरक्षित रखने के अभ्यस्त थे। किसी बड़े पात्र (बर्तन) को भी हुंडा कहते हैं। इस उपाधिनाम के गयावाल अब नहीं हैं।

इनके अतिरिक्त देवनार, बुही, ढ़ेढ़ी, दुबहलिया, गाईं आदि उपाधिनामों के गयावाल भी हैं। देवनार देवनाहर का अपभ्रंश है। भंगबूटी के प्रति आसक्त गयावालों को उनके मित्रों ने बुट्टी की नामोपाधि दे दी। ढूंढिय का गयाभ्रंश ढ़ेढत्री है। गया में जब मुसलमानों का आक्रमण हुआ था, गया की तबाही बहुत हुई थी। तब कुछ गयावाल इस नगर के निकट के दुबहल गाँव में रहते थे। अतएव वे दुबहलिया कहलाए। दुबहलिया को लोग अब दुभलिया भी कहते हैं। ग्राव पहाड़ को कहते हैं। उसमें बसनेवाले लोग ग्रांबी–अपभ्रंश ग्राईं अथवा गराईं हो गए।

गयावाल महिलाओं को दाई कहते हैं। देवी शब्द का तद्भव रूप देई है। देई कालांतर में दाई के रूप में परिवर्तित हो गया।

कुछ गयावालों के सहकारी उपाधिनाम भी होते हैं जैसे मुहल्ला उपइडीह, गया निवासी पंडा मेहरवार जी दाढ़ीवाला हो गए, मोहनलाल महतो वियोगी मूंछवाले पंडा थे और कोई पीतलकिवाड़ भी है।

गयावालों की व्यावसायिक वंश–उपाधियों का विभाजन अनेक वर्गों में किया जा सकता है–

(क) ब्राह्मणोतर जातियों के नाम अथवा उपाधि जैसे महतो, चौधरी गुपुत आदि। (ख) अन्य ब्राह्मण जातियों के नाम अथव उपाधि जैसे भट्ट, बिट्ठल, गोसाईं, पाठक, उपाध्याय, मिसिर आदि। (ग) स्थान के नाम पर ली गई पदवी जैसे कटरियार, दुभलिया, पहाड़ी, पर्वतिया आदि। (घ) सामाजिक और धार्मिक कारणों से ली गई उपाधि जैसे अगिनवार भैया (भईया), टाटक आदि। (ड़) व्यक्तिगत गुणों के आधार पर ली गई उपाधि जैसे बारीक, जज, मेहरवार, नकफोफा, पसेरा आदि।

गयावालों की उपाधियाँ अद्यतन काल में भी विभिन्न जाति–समूहों और गाँवों के नाम पर ही रखी जाती हैं। गयावालों की उत्पत्ति के रहस्योद्घाटन में यह तथ्य महत्त्वपूर्ण है। उनके उपाधिनामों की विलक्षणता प्रणम्य है।

◆

दक्षिण दरवाजा, गया
मो० 9470853118

विष्णु चरण मंदिर का दर्शन और पूर्वजों का श्रद्धा-भाव

डॉ० एस०एन०पी० सिन्हा

संयोग बस हमें परम् पुनीत मोक्ष नगरी एवं प्रसिद्ध विष्णु चरण मंदिर गया जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। यों तो कई बार वहाँ गया था, परन्तु इस बार का जाना कुछ विशेष रहा और अनुभूति भी विशेष रही। तुलसी दास ने कहा भी है- *''कार्य पुण्य विनु मिलहिन सन्ता''* इस संयोग को 'पुण्य पुंज' ही कहेंगे। शिक्षा पर विशेषज्ञों का सेमिनार हो रहा था, उसी में भाग लेने गया था। वहाँ सरकारी विश्रमागृह में ठहरा। दो लड़के भी हमारी सेवा में लगे थे। विशेष उत्साहित थे हम, चैती नवरात्र का षष्ठी दिन था, वहाँ माँ मंगलागौरी का मंदिर प्रसिद्ध है। नवरात्र के अवसर पर माँ का दर्शन करना है, हमें विशेष आनन्द हो रहा था। सेमिनार में दिन में भाग लिया, वहाँ मैं वक्ता था। रात में मंगलागौरी के दर्शन के लिए उन दोनों लड़कों के साथ चला। ज्योंहि गाड़ी बढ़ी, लड़के जिद करने लगे- ''अंकल! विष्णु मंदिर के पास से जा रहे हैं। दर्शन कर लीजिए।'' हमने भी जिद-ठानी वहाँ कई बार दर्शन किया हूँ- जाना है तो सिर्फ सिद्धपीठ मंगलागौरी मंदिर- अंकल दो मिनट समय नहीं दे सकते। मान गया- मंदिर गया, रात के आठ बजे थे। दर्जनों पंडित वहाँ सस्वर श्री विष्णु सहस्त्रनाम पाठ कर रहे थे। उन्हें काव्य याद रहने के कारण अपनी स्मरण शक्ति का उपयोग कर रहे थे। हम में ''विशेष अनुभूति हुई- ''शरीर-मस्तिष्क में कम्पन्न सा महसूस हुआ'' लगा- ''साक्षात् विष्णु चरण दर्शन दे रहे हैं।'' हमने कहा- ''प्रभु लोग आपके दरबार में पूर्वजों के अपने श्रद्धा-तर्पण के लिए आते हैं और कर्म-कांड की लम्बी प्रक्रिया करते हैं- यहाँ पण्डा लोग कभी-कभी उन्हें सही मार्ग दर्शन नहीं दे पाते- अत: मैं अपने पूर्वजों का भाव तर्पण करता हूँ- स्वीकार कीजिए प्रभु- हमें लगा- ''हमारी प्रार्थना स्वीकार हो गयी?'' पर मन में आशंका रही- ''क्या भगवान विष्णु दरबार में इस तरह श्रद्धा तर्पण करना शास्त्र सम्मत है।''- शास्त्रों में इसकी जानकारी लेनी शुरू की- हमें तो लगा हमारी प्रार्थना स्वीकार हो गयी है। जटिल कर्म काण्ड प्रक्रिया में जा नहीं सकते। शास्त्रों से जानकारी हासिल हुई। भाव शास्त्रों से जानकारी हासिल हुई। भाव श्रद्धा तर्पण सही है, जिससे हमें तुष्टि मिली थी। गीताप्रेस-गोरखपुर से प्रकाशित कल्याण का अंक (वर्ष 12, संख्या 8) हमारे पास था, उसमें पं० लाल बिहारी जी मिश्राजी का लेख ''श्राद्ध समीक्षा''- पढ़ा तुष्टि हुई- भावतर्पण के लिए ''श्राद्धकर्ता दोनों भुजाओं को उपर उठा कर प्रार्थना करे, मेरे पास आपके लिए श्रद्धा और भक्ति है मैं इन्हीं के द्वारा अपने पूर्वजों का तृप्त करना चाहता हूँ। आप तृप्त हो जायें।''

हमें तो लगा हमारी भाव-तर्पण विष्णु दरबार में स्वीकृत हो गयी। प्रतिदिन प्रात: भावतर्पण (स्मरण) करता हूँ हमें तुष्टि होती है। जो कर्मकाण्ड की लम्बी जटिल प्रक्रिया से बचना चाहते हैं और जिन्हें धन का अभाव है। तर्पण (भाव-तर्पण) करना चाहिए।

'नमामि विष्णु शिरसा चतुर्भुजम् ६ शान्ति:

1. हे अनन्त दया के सागर करूणा कर भगवान।, 2. हे नारायण चरण कमल की भक्ति दीजो।, 3. जिसने हरि दया है पाई की सदगति होई।, 4. विष्णु सहस्त्रनाम है प्रकट रूप भगवान।, 5. हरि दया से हृदय में सदा होए प्रकाश।, 6. जो जन सच्चे मन से हरि चरण शरण आएँ।, 7. हरि की परम् दया से सुख शान्ति पाएँ।, 8. अन्त काल जो हरि भजते, हरि में मिल जाएँ।, 9. चरण शरण दीजिए प्रभु- ताके भवसागर से तर जाए।

६ नमो नारायण, ६ शान्ति:, ६ शान्ति:, ६ शान्ति:।।

◆

पूर्व कुलपति, पटना विश्वविद्यालय, पटना
बी/12, पी.जी. कॉलोनी, लोहिया नगर, पटना-20

.... वन्दे श्रद्धा विश्वास रूपिणौ

डॉ० नलिनी राठौर

धर्म के अन्तर्गत वे सभी तत्त्व आते हैं जो मनुष्य की श्रेष्ठता का निर्धारण करते हैं। विद्वानों का मत है कि धर्म वह है, जो हमें आदर्श जीवन जीने की कला और मार्ग बताता है। भागवत पुराण के अनुसार धर्म के मार्ग के चार अंग है।- तप, शौच, दया तथा सत्यता। महार्षि याज्ञवल्क्य के अनुसार अहिंसा सत्यमस्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रहः।।

शौच अर्थात शुचिता, शुद्धता, पवित्रता और निर्मलता। शुचिता का तात्पर्य शरीर और मन की बाहरी एवं आंतरिक पवित्रता से है। सभी धर्मो में पवित्रता को विशेष महत्त्व दिया गया है। भगवान स्वामीनाथन ने भी कहा है कि तनु मन एवं वाणी की स्वच्छता ही धर्म है। जैसे तन की सफाई जल से होती है वैसे ही मन की सफाई निर्मल व सद्विचारों से होती है। सात्विक भोजन से अंतः करण में सतोगुणी वृतियाँ बढ़ती है। कहा भी गया है- ''जैसा खाओगे अन्न वैसा होगा मन''।

काम, क्रोध, लाभ, मोह एवं अहंकार को त्यागने से मन की शुद्धि होती है। ईर्ष्या, द्वेष, तृष्णा अभिमान आदि कुविचार छोड़ने से दया, क्षमा, नम्रता, स्नेह, मधुर भाषण एवं त्यांग का जन्म होता है। सात्विक विचारों से किये गये कार्यो में त्याग प्रेम, सेवाभाव, सर्वधर्म सम्भाव रहता है। जिस कार्य से अंत करण में उत्तम विचार जन्में तथा किसी का अहित न हो वही पूजा है। स्वामी विवेकानन्द के अनुसार यही सब उपासनाओं का सार है।

अंतः करण की स्वच्छता वैराग्य की प्रवृत्तियों को विकसित करती है। तथा संकल्प दृढ़ होता है। इसी पवित्रता ने गणिका मैनाबाई को योगिनी बना दिया और जब उन्होंने महाराजा अजीत सिंह के दरबार में भजन गाना शुरू किया हमरे प्रभु औगुन चित न घरों'' तो स्वामी विवेकानन्द चौंक पड़े कि मैनाबाई भी परमात्मा का अंश शुद्ध-बुद्ध आत्मा है।

धर्म का क्रियात्मक रुप आचार है। आचार की विशुद्धि के लिए विचार की शुद्धि अनिवार्य है। ब्रह्मा कुमारी प्रजापिता का भी मानना है कि पवित्रता की धारणा व धर्म को जीवन में लाने वाले ही महान आत्मा है।

हमारे धर्म का आधार है श्रद्धा। यही आस्तिक का प्राण है। अध्यात्म क्षेत्र में श्रद्धा की शक्ति सर्वोपरि है और आत्मिक क्षेत्र में श्रद्धा ही मूल है। गोस्वामी तुलसीदास जी के अनुसार भी '' श्रद्धा बिना धर्म नहीं होई।

श्रद्धा के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए गीताकार ने कहा है।

श्रद्धाभ्योऽयं पुरुषो यो यच्छ्रद्धः ख एव सः।

गीत 17/3

श्रद्धा का अविर्भाव सरलता और पवित्रता के संयोग से होता है। पर्थिव वस्तुओं से ऊपर उठने के लिए इन्हीं दो गुणों की अत्यंत आवश्यकता है। इच्छा में सरलता एवं प्रेम में पवित्रता का विकास जितना अधिक होगा उतनी ही अधिक श्रद्धा बलवान होगी। सरलता के द्वारा परमात्मा की भावानुति होती है। और पवित्र प्रेम के माध्यम से उसकी रसानुभूतिं। श्रद्धा दोनों का सम्मिलित स्वरुप है। सात्विक श्रद्धा की पूर्णता में अंतः करण स्वतः पवित्र हो उठता है। श्रद्धा सरल हृदय की ऐसी प्रतियुक्त भावना है जो श्रेयपक्ष की सिद्धि कराती है। श्रद्धा के साथ यदि हम ईश्वरोमुख होते हैं- तभी हमारी कामनायें-इच्छाएँ शान्त होती हैं। और हम स्वयं को अध्यात्म

की ओर मोड़ते हैं।

यह श्रद्धा ही है जो निर्जीव पाषाण में भी प्राण भर देती है। और उन्हें अलौकिक चमत्कारी क्षमता से संपन्न बना देती है। मीरा ने कृष्ण प्रतिमा को अपनी श्रद्धा के बल पर इतना सजीव बना लिया कि वह प्रत्यक्ष कृष्ण से भी अधिक प्राणवान प्रतीत होने लगी थी।

रामकृष्ण परमहंस की श्रद्धा ने पत्थर की देवी को माँ काली बना दिया। एकलव्य की वह श्रद्धा ही थी जिसने मिट्टी की एक मूर्ति को साक्षात् गुरु बना दिया था। श्रद्धा एवं विश्वास के संबंध में रामायण में भी प्रसंग है कि राम के प्रति श्रद्धा एवं विश्वास के कारण ही रीक्ष वानरों ने समुद्र में पत्थर तैरा दिये। यह शक्ति है उस श्रद्धा में जो अलौकिक समर्थ्य उत्पन्न करती है।

श्रद्धा और विश्वास के बिना भौतिक जीवन में भी गति नहीं। ईश्वर और आत्मा का अस्तित्व निश्चित रुप से श्रद्धा पर ही अवलांबित हैं। पितृपक्ष की अवधि में अपने पूर्वजों के लिए जो भी पितर-पूजा, श्राद्ध तर्पण आदि सम्पन्न किए जाते हैं, उसके मूल में श्रद्धा और विश्वास की अटूट धारणा ही विशेष रूप से हमें अनुप्राणित करती रहती है।

◆

अध्यक्ष, रसायनशास्त्र विभाग
गौतम बुद्ध महिला कॉलेज, गया

श्राद्ध बलि के लिए गयाधाम की यात्रा सबसे उपयुक्त

श्री कंचन

गया श्राद्ध के संबंध में सबसे पहला उल्लेख विष्णु सूत्र (अध्याय-85 के पेज नंबर 4,22 व 40) व वायु पुराण (अध्याय 105-12) में, जो इस्वी शताब्दी के पहले चरण का माना जाता है, में मिलता है। मनुस्मृति में भी भिन्न-भिन्न तरह के श्राद्ध तथा उनमें रखे जाने वाले नियमों का विशद वर्णन है। इनमें श्राद्ध अनुष्ठान का विशिष्ट वृतांत कहीं भी नहीं मिलता। देखा जाये तो श्राद्ध-बलिदान में भिन्न-भिन्न प्रांतों से आनेवाले भक्तों की रीति व आर्थिक अवस्था के अनुसार परिवर्त्तन भी होने लगा है। इस प्रकार के बलिदान के पीछे अनेक तरह की आशाएं व कामनाएं निहित रहती हैं। इनका विस्तार न कर, परंतु इनपर कुछ प्रकाश डालते हुए गया श्राद्ध के कुछ महत्वपूर्ण रुपों का वर्णन किया जा रहा है। पितर का कोई भी परिवार जिस दिन अपने घर से श्राद्ध बलि के लिए गयाधाम की यात्रा पर निकल पड़ता है, उस दिन से उसके आत्म संयम, स्वयंसुधार, निषेध अन्य बहुत से नियमों के उचित पालन की अवधि प्रारंभ हो जाती है। यह श्राद्ध बलिदान समाप्त होने तक लागू रहता है। कर्त्ता को किसी दूसरे के छुए भोजन नहीं करना है, रति कार्य से अलग रहना है। कोई काम जल्दीबाजी में नहीं करना है और ना ही आंसू ही बहाना है। क्रोध, अशुद्ध विचार आदि का भी त्याग कर पूरी तरह शुद्ध हो जाना है। गयाधाम आने के दूसरे दिन कर्ता विशुद्ध भाव से फल्गु में स्नान कर विधि पूर्वक पूजा का वस्त्र उजला जो कमर व कंधे पर पहना जाता है, धारण करता है। पूर्वजों का प्रतिनिधि मानकर वह गयावाल पंडा की पूजा करता है। उनके चरणों पर फल-फूल चढ़ाता है। श्राद्ध कार्य के लिए आज्ञा व आशीर्वाद लेता है। चरण पूजा की समाप्ति के बाद देवी-देवताओं, प्राचीन ऋषियों, यम, मृत्यु व पितरों के नाम से जल अर्पण (तर्पण) करता है। इसका

निरीक्षण व आचार्यत्व पंडा जी द्वारा दिये गये ब्राह्मण संपन्न कराते हैं। तर्पण लगभग पाँच घंटों तक होता है और उसके चार मुख्य भाग होते हैं। पहले भाग में देव तर्पण किया जाता है। जल को दाहिने हाथ में लेकर उसे खुली हुई अंगुलियों पर गिराना है। उसी समय ब्रह्मा, विष्णु, महेश व ब्रह्मांड के देवताओं के लिए (विश्व देव) विशेष श्लोक पढ़े जाते हैं। दूसरे भाग में मरीचि, अत्रि, अंगीरस, पुलस्य, रातू, पुलाइ, गौतम, काश्यप, वशिष्ठ, व विश्वामित्र नामक 10 ऋषियों के नाम तर्पण करते हैं। इनमें अंतिम तीन ऋषि काश्यप, वशिष्ठ व विश्वामित्र बाद मं जोड़े गये। ये परंपरा से आनेवाले सप्त ऋषियों के समूह में जो सात ताराओं के नाम से पुकारे जाते है, वे नहीं आते। ऋषि तर्पण में श्राद्ध बलि देनेवाला पूरब की ओर मुँह कर क्रिया कर्म करता है। यह विधि देव-तर्पण के समय भी की जाती है। जल केवल आगेवाली अंगुलियों से ही स्पर्श कर गिराया जाता है। तीसरे भाग में तर्पण यम तथा उसके गणक चित्रगुप्त को अर्पित किया जाता है। यम स्वर्ग और नरक का स्वामी है और चित्रगुप्त मरनेवालों के कामकाज का लेखा-जोखा रखते हैं। यम और चित्रगुप्त को तर्पण इसलिए किया जाता है कि मरे हुए पूर्वजों के साथ वह कुछ रियायत करें। अंतिम तर्पण सभी पितरों के नाम से दिया जाता है। यम तर्पण तथा पितृ तर्पण के समय बलि करनेवाला दक्षिण की ओर मुँह करता है और अंगूठे की दूसरी हथेली पर डाले हुए जल पर तिल और कुश रखता है। पितृ तर्पण में, सबसे पहले निकटतम पैतृक पूर्वजों जैसे पिता, दादा, परदादा आदि के नाम से एक-एक कर स्तुति की जाती है। इसके बाद पैतृक वंश की स्त्री रिश्तेदारों तथा माता के निकट संबंधियों की स्तुति की जाती है। दुर्घटना या आकस्मिक मृत्यु से मरे रिश्तेदारों को विशेष तर्पण दिया जाता है। पड़ोसियों या दूर के रिश्तेदार अथवा जाने-अनजाने व्यक्ति को भी श्राद्ध-तर्पण करने की विधि है, ताकि वह प्रेत बनकर परेशान न करे। उनकी शांति के लिए प्रेत योनि से मुक्ति के लिए श्राद्ध विधान है। इस विश्वास के साथ कि जल का अर्पण उनकी प्यास को बुझाएगा, उनके चित्त को शांत करेगा। दूसरे दिन जो विधि पूर्वक अनुष्ठान होता है, उसे पिंडदान कहते हैं। गया में पिंडदान कर्ता के समय के हिसाब से किया जाता है। कोई एक दिनी, कोई तीन दिनी, कोई पाँच तोई सात व 15 तथा 17 दिनी श्राद्ध का विधान है। यूं यहाँ की 365 पिंण्डवेदियों व तर्पण स्थलों पर सालोंभर रहकर पिंडदान व तर्पण करने का विधान था पर कई पिंडवेदियाँ सरोवर विलुप्त हो गये। अब शेष 54 पिंडवेदियों पर तर्पण स्थल पर ही श्राद्ध कार्य हो रहा है। पिंड साधारणत: चावल व जौ के आटे से बनाया जाता है। अंगरेज इसे केक की संज्ञा देते हैं। पिंडदान के अलावा कुछ धार्मिक केन्द्रों में पितरों को भात भी दिया जाता है। पिंडदान बड़ा धार्मिक अनुष्ठान है, जिसे कर्मकांड कहा जाता है। इसके लिए विष्णुपद मंदिर का परिक्षेत्र सबसे उपयुक्त बताया गया है।

◆

ब्यूरो चीफ, प्रभात खबर, गया

कबिरा संगति साधु की
जौं गंधी के वास।।
जो कछु गंधी दे नहीं
तो भी वास-सुवास।।

गया जी : एक सांस्कृतिक पहचान

श्री नवलेश बर्थवार

विन्ध्य श्रेणी की पर्वत घृंखलाओं व लीलाजन मोहाने के संगम से बना फल्गु नदी के तट पर बसा घृंग वैदिक काल का कीकट प्रदेश बाद का बिहार और वर्त्तमान का गया जी विश्व के मानचित्र पर एक सांस्कृतिक नगरी है। यहाँ का सांस्कृतिक महत्व अतुलनीय है। भौगोलिक दृष्टि से उत्तर में गंगा का समतल मैदान है तथा दक्षिण में छोटा नागपुर के पठार के मध्य सांस्कृतिक संक्रमणकी दृष्टि से यह एक महत्वपूर्ण स्थान है। इसके उत्तर तथा पूर्व में मगध का प्राचीन राज्य, जहाँ हिन्दू तथा बौद्ध धर्म का आधिपत्य था और है। इसके दक्षिण और दक्षिण–पश्चिम में शहर से केवल दस मील की दूरी पर से ही छोटा नागपुर का पठार आरंभ होता है। गंगा तटीय संस्कृति ने एक समय न केवल समस्त भारत को बल्कि रुस, चीन, पूर्व में कम्बोडिया, जापान, वियतनाम, चम्पा तक को अपने सांस्कृतिक प्रकाश से देदिप्यमान कर दिया था। फल्गु कोई अलग नदी नहीं मोहाने–लीलाजन के संगम से बनी यह नदी यहाँ की सभ्यता और संस्कृति का एहसास कराती है। विन्ध्य श्रेणी की पर्वत मालायें इस बात को भौगोलिक साक्ष्य जुटा रही कि यहाँ के पर्वत हिमालय से छह हजार वर्ष से अधिक पुराने हैं। धार्मिक मान्यता तो यह भी बतला रही कि कभी ब्रह्मा ने यहाँ बैठकर सृष्टि का निर्माण किया था। वह स्थान ब्रह्मयोनि कहलाया जो आज भी विद्यामान है। इस पर्वत की तराई में बना कपिल मुनि का आश्रम से सटे दृष्टिकूट पर्वत पर माँ मंगला का मंदिर इस पर्वत की तराई में स्थित मार्कण्डेय मंदिर जहाँ कभी बैठकर मार्कण्डेय ऋषि ने दुर्गा सप्तशती का प्रथम अध्याय लिखा है। वहीं कपिलवस्तु से चलकर सिद्धार्थ ने बुद्धत्व की प्राप्ति की और भगवान बुद्ध कहलाये। वह स्थान आज बोधगया के नाम से जाना जाता है। यहाँ बौद्ध और सनातन धर्म के समागम होने के साथ शैव व शाक्त मत का भी उदय हुआ। कभी समस्त देवगण ने सशरीर उपस्थित होकर गयासुर के शरीर पर यज्ञ किया था। जो आज पिण्डवेदी के रुप में उपास्य क्षेत्र है। यहाँ पूर्वजों की पूर्ण भक्ति की कामना की जाती है। त्रेता युग में मर्यादा पुरुषोत्तम राम, जगत जननी सीता, अनुज लक्ष्मण व धर्मराज युद्धिष्ठिर के आने के प्रमाण इस धरती पर सुलभ है। भारतीय संस्कृति के विकास में सिन्धु, सरस्वती, गंगा, यमुना आदि नदियों का योगदान भरा पड़ा है। गंगा नदी के अतिरिक्त सोनभद्र, पुनपुन, फल्गु, सकरी, दामोदर नदी का महत्व कुछ कम नहीं।

शासन सता के प्रमुख केन्द्र के रुप में मगध महान साम्राज्य था। पर गया सांस्कृतिक राजधानी के रुप में उन दिनों भी था और आज भी है। हालाँकि ऋग्वेद काल में इस सांस्कृतिक नगरी को कीकट प्रदेश के रुपमें जाना गया। कीकट शब्द अनार्यों के लिए माना गया है। पर ये अनार्य नहीं आर्य थे। पर नास्तिक भी। ब्रह्मा के श्राप के कारण यह मान्यता बनी रही।

सांस्कृतिक महत्ता की दृष्टि से गया शहर को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है। धार्मिक एवं लौकिक। धार्मिक क्षेत्र को गया के पंचकोसी तीर्थ क्षेत्र के रुप में माना गया है, जो बोधगया के धर्मारण्य से लेकर गया शहर के प्रेत शिला पर्वत तक विस्तृत है। इस क्षेत्र में अनेकों पौराणिक तीर्थस्थान है। पुरानी बाजार, गया के तीर्थ पुरोहित ब्राह्मण कर्मकांडियों और धार्मिक कार्यकलापों के बौद्ध विहार भी बनाया है। यह स्थान बौद्धों का तीर्थ–स्थान है। वहीं यह स्थल हिन्दुओं के लिए भी पूज्य है। यहाँ से दो किलोमीटर दूरी पर धर्मारण्य है जहाँ कभी धर्मराज युद्धिष्ठिर भी यहाँ आये थे और भगवान बुद्ध ने भी बुद्धत्व प्राप्ति के पूर्व यहाँ तपस्या की थी।

इस सांस्कृतिक नगरी में आने पर आपको हजारें प्रकार के देवी, देवताओं के दर्शन होंगे। दिवालों पर

बनायी गयी प्रतिमाओं मूर्तियों, नदियों, तालाबों, पेड़ों, पत्थरों, खुददाईयों तथा चित्रकारियों में लाक्षणिक रुप से व्यक्त है। वेद, पुराण तथा महाकाव्यों में वर्णित अनेक देवता उदाहरणार्थ, सूर्यदेव, विष्णु के विभिन्न अवतार राम, कृष्ण, हनुमान की मूर्तियाँ आदि पायी जाती है। इन मूर्तियों में उनके पौराणिक निरुपण व्यक्तिगत सजावट तथा वेषभूषा आदि दृष्टिगोचर होते हैं। देवी-देवताओं की प्रतिमाओं के द्वारा इस तरह दिग्दर्शन करना हिन्दू जगत की एक खासियत है। कुछ ऐसे भी देवता हैं जो गुप्त पूजा के निमित्त लाक्षणिक रुप से अभिव्यक्त किये गये हैं। काले पत्थर से लिंग द्वारा भगवान शिव का निरुपम। समस्त गया में एक स्थल को छोड़कर जहाँ शिव की प्रतिमा है, गुप्त रुप से मूर्त्ति किये गये हैं मंगलागौरी व शीतला देवी जैसे तीर्थ स्थान गोल पत्थरों द्वारा दिखलया गया है। स्थानीय पुरोहित लोग इसे पुरानों में वर्णित भगवान शिव की प्रथम पत्नी सती के दोनों स्तनों का चिन्ह बताते हैं। शीतला नामक तीर्थ स्थान में इस तरह के सात पत्थरों के लोंदा दिखलाये गये हैं जो देवी के सात बहन बतलाये जाते हैं।

यहीं पावन फल्गु नदी के पश्चिम में अवस्थित ब्रह्मयोनि नामक पर्वत है। इस पर्वत पर दो पर्वत शिलाओं की एक द्वार है, जिसमें अपने पापों से छुटकारा पाने के लिए पेट पीठ के बल से लोग प्रवेश करके बाहर निकलते हैं इसी का नाम गया शीर्ष है। भगवान बुद्ध का विरोधी देवदत्त ने बुद्ध के कई सौ शिष्यों को उनके संघ से तोड़कर अपने पक्ष में कर लिया था। उन्हें लेकर इसी ब्रह्मयोनि पर्वत पर चला आया था। बाद में सारीपुत्र और मौदगल्यापन जैसे ज्ञानी शिष्यों के प्रयास से वे सभी शिष्य बुद्ध के पास उनके संघ में चले गये। फल्गु तट के इस गया तीर्थ की महिमा महाभारत के वन पर्व के 84 व 95 अध्यायों में वर्णित है। उनसे पता चलता है कि ब्रह्मयोनि का नाम पवित्र कूट था। तीन अध्यायों में कहीं विष्णुपद, गदाघर तीर्थ और नरसिंह तीर्थ का नाम नहीं आया है। मगर इन तीथों की महिमा वायु पराण में मिलती है। महाभारत में भी गया पिण्डदान और तर्पण का महत्व प्रतिपादित है। इन तीर्थों में अक्षयवट, महानदी, ब्रह्मसर, धर्मारण्य, यज्ञ कूप, धेनूक तीर्थ, गृद्धवट, वृषभ ध्वज, उदयन्त, पर्वत, साक्ती पद, योनीद्वार, फल्गु तीर्थ, धर्म प्रस्थ, कुपोषक तीर्थ, मतंगाश्रम, धर्म तीर्थ, ब्रह्म स्थान, में सोलह तीर्थों की चर्चा मिलती है। इसमें सूर्यकुंड प्रेतशिला, रामशिला तीर्थों का वर्णन नहीं है। किन्तु वायु पुराण में विस्तार से चर्चा मिलता है। वायु पुराण के अनुसार फल्गु नदी के तट के गया नगर में ऐसा कोई स्थान नहीं है। जहाँ तीर्थ नहीं तीर्थ में जाय तो उसके लिए ब्रह्म ज्ञान, गौशाला में मृत्यु तथा कुरुक्षेत्र तीर्थ के बाद व्यर्थ है। इस पुराण के अनुसार गया नगर के मध्य त्रिलोक्य के सभी तीर्थ बसे हैं। यह गया तीर्थ पाँच मिल में गया क्षेत्र दस मिल में और गया शीर्ष क्षेत्र एक कोस में है। गया में जितनी भी प्रस्तर प्रतिमाएं भिन्न-भिन्न देवताओं के नाम से ख्यात है।

1. आदि गदाघर 2. मुण्ड पृष्ठा 3. रामशिला 4. उदन्त पर्वत 5. गीत नाद गिरी 6. भस्म कूट 7. गृध कूट 8. प्रेम कूट 9. आदि पाल 10 अरविन्दक 11. पंचलोक 12. सप्तलोक, बैकुण्ठ लोक 13. लौह दण्डक 14. क्रौंच पद 15. अक्षयवट 16. फल्गु तीर्थ 17. मधुश्रवा 18. दधि कुल्या 19. मधु कुल्या, देविका 20. इन्द्रपद 21. गायत्री पद 22. कार्तिकेय 23. दक्षिणार्क 26. सरस्वती 27. गयादित्य 28. उत्तरार्क 29. दक्षिणा 30. नोमिपतीर्थ 31. श्वेतार्क 32. गणनाथ 33. अष्टवसु, एकादश, सप्तर्षितीर्थ, सोमनाथ तीर्थ, सिद्धेश तीर्थ, ककपदीशी तीर्थ, विनायक तीर्थ, नारायण तीर्थ, महालक्ष्मी, ब्रह्म तीर्थ, पुरुषोत्तम तीर्थ, मार्कण्डेय, कोटीश तीर्थ, अगिरेश तीर्थ, पितामह तीर्थ, जनार्दन तीर्थ, मंगला गौरी, पुण्डरीकाक्ष का नाम शामिल है। इनमें कई तो विलुप्त हो चुके शेष बचे पर धार्मिक औपचारिकता पूरी की जाती।

बिहार की जन्म स्थली गया जी

गया शहर विश्व के प्राचीन शहरों में एक है। ऋग् वैदिक काल में इसे कीकट प्रदेश के रुप में जाना गया। 1757 से 2 अक्टूबर 1865 तक इसे बिहार के रूप में पहचान मिली। 1787 में नयी व्यवस्था के तहत बिहार को जिला का दर्जा दिया गया। जिसका मुख्यालय उन दिनों का बिहार अर्थात आज के गया जिला में बनाया गया। थॉमस लॉ को कलक्टर बनाया गया। बिहार को प्रतिनिधित्व करने का अवसर गया को मिला। उस बिहार में आज के सात जिलों को शामिल किया गया। उनमें शामिल है गया, औरंगाबाद, नवादा, जहानाबाद, अरवल, नालंदा, पटना। 1857 के विद्रोह इस जिले के वजीरगंज में बाबू खुशियाल सिंह के नेतृत्व में किसान राज्य की स्थापना के पश्चात् यहाँ के प्रशासनिक ढाँचा में बदलाव लाया गया। 3 अक्टूबर 1865 को बिहार का नाम बदलकर गया किया गया और इसे जिला का दर्जा मिला। 1825 में पटना को अलग जिला बनाया गया। विश्व में इस जिले की पहचान मोक्षधाम व ज्ञान भूमि के रुप में की जाने लगी। सनातन, बौद्ध, शैव व सिक्ख धर्म के संगम स्थल होने के साथ इस धरती पर पीर मंसूर का मजार भी अवस्थित है। सड़क, रेल व वायु मार्ग से जुड़ा रहने के कारण विश्व के कोने-कोने से लोगों का आना जाना लगा रहता है। विश्व का यह प्राचीन शहर राजनैतिक, राजधानी बनने की सारी शर्तों को पूरा कर रहा है। पर राजनैतिक तौर पर इसकी हकमारी की जा रही। आज यह पौराणिक व ऐतिहासिक शहर सुखाड़, अकाल से त्रस्त है। पेयजल व विद्युत संकट को झेल रहा है।

◆

सम्पादक, 'मगध-ध्वनि', गया

श्राद्ध : तर्पण और दान

डॉ० सरदार सुरेन्द्र सिंह

भारत की संस्कृतिक चेतना में श्राद्ध मात्र शास्त्रोक्त कर्मकण्डीय विधि का पर्याय नहीं है, अपितु यह लोक धर्म के रुप में प्रतिष्ठित हो गया है। लोक धर्म वैदिक धर्म का अनुगामी है। लोकधर्म उतना हीं महत्त्वपूर्ण श्रेयस्कर है, जितना वैदिक धर्म। पितरों का श्राद्ध अभ्युदय कल्याण तथा लोकमांगलिक चेतना को जन्म देता है। पितृपक्ष के अवसर पर जो व्यक्ति श्रद्धान्वित होकर पवित्र मन से आस्था के साथ सारे पितरों का श्राद्ध करता है, वह जीवन में अलम्ये ऐश्वर्य एवं वर्चस्व की अधिगम करता है।

श्राद्ध एवं पितृतर्पण एक यज्ञिक अनुष्ठान है और यह कार्य यदि श्रद्धा रहित होता है, तो उसे तामसयज्ञ की संज्ञा दी जाती है। अश्रद्धा पाप होती है और श्रद्धा पाप प्रमोचिनी। स्वयं योगेश्वर कृष्ण ने श्रद्धा के महत्व की चर्चा करते हुए कहा है कि हे पार्थ! बिना श्रद्धा के होम करना किसी को दान देना, तपस्या करना या कोई भी अनुष्ठान करना असत्कर्म होता है वह अनुष्ठान इस लोक या परलोक किसी के लिए कल्याणकारी नहीं है। महाभारत में यह कहा गया है कि जो देवी की अर्चना एवं पितरों का श्राद्ध तर्पण नहीं करते, वे मूढ़ होते हैं और कभी श्रेय का लाभ नहीं कर पाते।

श्राद्ध के अनेक भेद हैं जिसमें पार्वण श्राद्ध और एकोनिष्ठ श्राद्ध का महत्वपूर्ण स्थान है। तीन पुरुषों (पिता, पितामह तथा प्रति पितामह) के उद्देश्य से किये गये श्राद्ध को पार्वण श्राद्ध तथा एक पुरुष के उद्देश्य से किये गये श्राद्ध को ऐनिष्ठ श्राद्ध कहते हैं। इसके अलावा प्रतिदिन अन्न, जल, दूध, घृत, फल, मूल आदि से पितरों को तृप्त करने को नित्य श्राद्ध कहते है। नैतिक श्राद्ध किसी सद्ब्राह्मण की उपस्थिति में अमावस्या तिथि को किये गये श्राद्ध को कहते है। यह पुत्र जन्म आदि के अवसर पर भी किये जाते हैं। विभिन्न फलों की कामना से किये गये श्राद्ध को 'काम्य' कहते हैं।

विशिष्ट तिथियों में किये गये श्राद्ध का विशेष महत्त्व है। आश्विन कृष्ण पक्ष के प्रथम दिन से आनेवाला पितृपक्ष के अलावा कार्तिक मास के कृष्णपक्ष की अष्टमी को यदि अश्लेषा नक्षत्र का योग हो, तो पितरों के उद्देश्य से गुड़ मिश्रित अन्नदान से विशेष पुण्य की प्राप्ति होती है। कार्तिक पूर्णिमा तिथि भी श्राद्ध कार्य के लिए उत्तम माना जाता है। भाद्रपद के कृष्णपक्ष में माघ नक्षत्र के योग में 'गजच्छाया' नामक शुभ श्राद्धीय योग होता है। उस योग में दक्षिणामुख होकर अष्टम मुहूर्त में श्राद्ध करने से अक्षयत्व प्राप्त होता है। प्राय: प्रत्येक तिथि को श्राद्ध करने का विधान है। लेकिन अमावस्या के दिन श्राद्ध करने से सब मनोकामनाएं पूर्ण होती हैं। कृष्णपक्ष की चतुर्दशी को छोड़कर दशमी से लेकर अमाश्या तक पाँच तिथियों श्राद्ध के लिए शुभ दायक हाती है।

पुराणों में चर्चा है कि श्राद्ध में ब्राह्मण का वरण अनिवार्य है। ब्राह्मण एवं अग्निदेव की उपस्थिति में श्राद्ध को भी महत्त्वपूर्ण माना जाता है। ब्राह्मण ब्रह्मा के मुख से उत्पन्न माने गये हैं ओर अग्नि भी ब्रह्मा के मुख से उद्भूत है। लेकिन इसके लिए पंक्तिपावन ब्राह्मण सर्वोत्तम माने गये हैं। पितरों के उद्देश्य से पिण्डदान और तर्पण करने से पूर्व श्राद्धीय द्रव्यों का कुछ अंश उर्ध्वमुखी चेतना के प्रतीक अग्निदेव को अर्पित करना पड़ता है। इस क्रिया को अग्नौकरण कहते हैं। इस क्रिया के द्वारा ब्रह्मराक्षसों का विध्न निरस्त हो जाता है। इस तरह पंक्तिपावन ब्राह्मण और अग्निदेव के द्वारा मुक्त श्रद्धान्न पितरों को प्राप्त होता है।

श्राद्ध, पिण्डदान ओर तर्पण करने के पश्चात् दान करना आवश्यक माना गया है लेकिन कुछ नास्तिकों ने दान देना निरर्थक माना है। लेकिन उन्हें यह जानना चाहिए कि श्रद्धा पूर्वक पितरों के उद्देश्य से दिया गया दान अग्निदेव तथा पंक्तिपावन ब्राह्मणों के द्वारा परिमुक्त होकर उन्हें प्राप्त होता है। इन पुण्य कर्मों में भावनात्मक सम्बन्ध विद्यमान रहता है। दान श्राद्ध का महत्वपूर्ण अंग है। दान देने से पितरगण संतुष्ट एवं प्रसन्न होते हैं पितरगण उसे नहीं खाते हैं जिसे ब्राह्मण नहीं खाते ब्राह्मणों के संतुष्ट होने पर पितरगण भी संतुष्ट होते हैं–

न तस्याशर्न्त पितरों यरूय विप्रा न युज्जते।
ब्राह्मणेषु च तुष्टेषु प्रीथन्ते पितरः सदा। (महाभारत)

जैसे यादि में मंत्रों के द्वारा आहूत इन्द्रदिदेवगण शक्ति मात्र से यज्ञ स्थान में अर्विभूत होकर यजमान के द्वारा परित्यक्त द्रव्यदर्शन से तृप्त होकर यज्ञकर्ता के अभिष्ट फल का संपादन करते हैं। इसी प्रकार श्राद्ध में मंत्रों के द्वारा आहूत पितृरगण आकर पुत्रादि के द्वारा दिए द्रव्यभोग से तृप्त होकर विशिष्ट फलों को देने वाले होते हैं। पितृयज्ञ के पश्चात् ब्राह्मणों को आस्वाथ एवं सुभोज्य वस्तुओं से तृप्त कर दक्षिणा के रूप में दिये गये धन श्रद्धा के साथ देना चाहिए, क्योंकि अश्रद्धा के साथ दिया गया दान तिपरों को नहीं मिलता। मुक्ति के चार साधन बताए गए हैं– ब्रह्मज्ञान, गया श्राद्ध, गोगृह–मरण और कुरुक्षेत्र में निवास। लेकिन इसमें गया श्राद्ध सर्वेपरि है।

गया श्राद्ध इसलिए अपरिहार्य है। क्योंकि यह सम्पूर्ण ब्रह्मांड के नियामक सर्वव्यापी विष्णु के पवित्र चरण से वन्दित है। अध्यात्मिक साधना के क्षेत्र में चरण की आत्यन्तिक महत्ता है। तंत्र साधना में भी चरण-पीठिका की अर्चना भक्ति-भावना के साथ की जाती है। विष्णु-चरण अक्षर सत्ता का पर्याय है और विष्णुपद के पास पहुँचने पर दग्भ्रमित आत्माएं पुत्रों के द्वारा प्रदत्त श्राद्ध पाकर सद्गति प्राप्त कर लेती है। गया को गया धाम कहा गया है, क्योंकि विष्णु चरण से अन्वित है। गया में एक अक्षयवट वृक्ष है। जो पितरों को अनन्त तृप्ति ओर युक्तितोष का साक्षी है। यहाँ पिण्डदान एवं तर्पण के पश्चात् कोई श्राद्धीय कर्म शेष नहीं रह जाता है। जिनके अन्त:करण में आस्था विद्यमान है वही यहाँ आते हैं और विष्णु चरण की अभ्यर्थना कर तथा पितरों का श्राद्ध कर उन्हें परितृप्त और मुक्ति करने का प्रयत्न करते है। सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान एवं अक्षररसता के प्रतीक विष्णु चरण में श्रद्धा, विश्वास एवं अपूर्व आस्था तथा अनन्यनिष्ठा के साथ जो जाता है उसकी समस्त मनोकामनाएँ पूरी ही होती है। आस्था के बिना कोई भी यज्ञानुष्ठान पूर्ण नही होता है।

◆

अध्यक्ष
श्रमजीवी पत्रकार यूनियन, गया

बहुतेरे पुत्रों को समान अधिकार

आचार्य नवीन चन्द्र मिश्र 'वैदिक'

लोगों द्वारा प्रश्न उठाया जाता है कि माता-पिता का श्राद्ध कई भाइयों के बीच में केवल बड़े या छोटे भाई को ही करना चाहिए। क्या बताते है धर्म-शास्त्र। धर्मशास्त्र को भी पीछे छोड़ दिया समाज। गरुडपुराण में आया है कि अग्नि संस्कार से लेकर दसकर्म फिर एकादश फिर द्वादश पिण्डादि एक पुत्र करे। शय्यादान, वार्षिक श्राद्ध अलग-अलग करने का अधिकार आया है। समाज में जो कुछ हो धर्म-शास्त्र के जब मंथन करते हैं तक निष्कर्ष यह आता है कि पिता के सम्पत्ति पर सभी पुत्रों का समान अधिकर है और धन के लोभ से वर्जित होकर सभी पुत्रों को मृत्यु दिवस में अन्न-दान और गया श्राद्ध करनी चाहिए। देखे 'देवी भागवत' के सप्तम स्कन्ध के श्लोक-

स्वात्मज धन लोमेन पापाचार स दुर्भतिः।
एव्टव्या वहवः पुत्राः यद्येकोगिप गयाम् ब्रजेत।।

राजा हरिश्चन्द्र से विश्वामित्र मुनि बताते हैं कि हे राजन। पिता के धन से पापाचार दुर्गति है इसलिए बहुत से पुत्रों की कामना करनी चाहिए। इनमें से कोई तो गया जाएगा और गया श्राद्ध करेगा।

नश्रुतं गारुडं येन गया श्राद्ध च नो कृतम।
वृषोत्सर्ग कृतो नैव न च मासिक वार्षिके।।

गरुड पुराण का कहना है जिसने न गरुड पुराण सुना न गया श्राद्ध किया न मासिक वार्षिक श्राद्ध किया उसे पुत्र कैसे कहा जाएगा ? वह तीन ऋण से कैसे मुक्त होगा ?

राजा दशरथ का अग्नि संस्कार चार भाईयों के बीच में एक और सबसे छोटे भाई शत्रुधन जी की उपस्थिति में भरत जी ने किया था-

सरजु वीर रचि चिता बनाई। जनु सुरपुर सोपान सुहाई।।
एहि विधि दाह क्रिया सब किन्ही। विधिवत न्हाई तिलाज्जली दीन्ही।।
सोधि सुमृति सब वेद पुराना। कीन्ह भरत दसगात विधान।। (राम चरित मानस)

राजा भरत का राम गया में भरताश्रम वेदी है जो दर्शनीय वेदी है। राजा पाण्डु-कुंती के तीन पुत्रों में मध्य वाले पुत्र भीमसेन ने गया श्राद्ध कर के सिद्ध कर दिया कि बीच वाले भाई को भी गया श्राद्ध के अधिकार है। भीम द्वारा श्राद्ध स्थल मंगलागौरी रास्ते में नीम गया नाम से विख्यात है जहाँ पत्थर शिलापर जाँघ का चिन्ह जहाँ आज भी गया श्राद्ध किया जाता है।

क्यों है न! सभी पुत्रों का पिता के सम्पति पर समान अधिकार। लालन पालन समान तो माता-पिता के प्रति भी आपका समान अधिकार सब मिल कर कीजिए माता-पिता व पितरों का श्राद्ध पिंडदान।

◆

मखलौट गंज, के०पी० लेन, गया
मो०-9430071590

पुण्यश्लोका लोकमाता अहिल्याबाई होलकर

प्रो० डॉ० महेश कुमार शरण

भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पण्डित जवाहर लाल नेहरू ने कहा था - *''मध्यभारत में अहिल्याबाई का नाम काफी प्रसिद्ध हो चुका है जो अपने राज्य के शासन में बड़ी खूबी से सफल रही। उन्होंने युद्धों को टाला, शान्ति कायम रखी और अपने राज्य ऐसे समय में समृद्धिशाली बनाया जब कि भारत का ज्यादातर हिस्सा उथल-पुथल की हालत में था। इसलिए यह ताज्जुब की बात नहीं कि आज भी वह संत की तरह श्रद्धा की दृष्टि से देखी जाती हैं।'' (डॉ० गणेश शंकरराव मतकर रचित इन्दौर का होलकर राजवंश पृ० 16)*

भारतीय सांस्कृतिक पुनरूद्धार के सर्वश्रेष्ठ महिला प्रतिनिधि, महान् राष्ट्र निर्मात्री, पीड़ित मानवता के त्राती, अपूर्व समाज सुधारिका, धर्म सहिष्णु, उज्जवल चरित्र, कुशल राजनीतिज्ञ, उदात्त व्यवहारशीलता, निष्काम कर्तव्य परायणता, प्रजा वत्सलता तथा सतत साधना में लीन आदि कई गुणों से विभूषित और सम्पूर्ण भारतीय इतिहास में अद्वितीय स्थान प्राप्त महारानी अहिल्याबाई होलकर का जन्म महाराष्ट्र राज्य के औरंगाबाद जिले के चौउंडी नामक ग्राम में ज्येष्ठ शुदी शक संवत् 1680 = 31 मई 1725 ई० को हुआ था। इनके पिता का नाम आनन्दराव था जिन्हें मनकोजी शिन्दे भी कहा जाता था जो इसी गाँव के पाटिल भी थे। अहिल्याबाई की माता का नाम सुशीला देवी था। माता-पिता दोनों सात्विक विचार के थे। अत: शान्त सुसंस्कृत सात्विक गृहस्थ परिवार में जन्म लेने के कारण अहिल्याबाई में प्रारंभ से ही धर्म भावना निहित थी। पिता के द्वारा धार्मिक ग्रन्थों की भी शिक्षा दी गयी थी। इसलिए मन धार्मिक कार्यों में रत होने के कारण वह नियमित रुप से मन्दिर जाती थी और घर लौटने पर पूजा पाठ कर कथा भागवत सुनती रहती थी। साधु सन्तों के सत्संग में समय व्यतीत करती थी। इन्हें घर में बौद्धिक शिक्षा के अतिरिक्त शारीरिक तथा सामरिक शिक्षा जैसे घुड़सवारी, तलवार बाजी आदि के गुर भी सीखने को मिले थे।

अहिल्याबाई, भारत की उन ऐतिहासिक नारियों में हैं, जिन्होंने प्रजा पर नहीं बल्कि उनके हृदय पर एक महान् माता के समान ममतामयी होकर शासन किया। आधुनिक भारतीय इतिहास की सबसे निपुण महिला

शासिका थी जिनकी अच्छाई और धार्मिकता का डंका सर्वत्र बजता था। उनके जीवन में एक से बढ़कर एक संकट आये जिसका उन्होंने धैर्य तथा बहादुरी के साथ सामना किया। उनका जीवन सतत् संघर्ष का जीवन था पर अपनी प्रजा के प्रति दायित्वों से तनिक भी विमुख नहीं हुई। महारानी अहिल्याबाई उस समय अवतरित हुई थी जब भारत की राजनीतिक अवस्था दयनीय और डंबाडोल थी। एक तरफ मराठों का बढ़ता वर्चस्व तो दूसरी ओर अंग्रेजों और फ्रांसीसियों द्वारा भारत की दुरावस्था का लाभ उठाकर अपना-अपना स्वत्व स्थापित रखने का उद्देश्य। हम यह जानते हैं कि सत्रहवीं सदी का भारत छोटे बड़े सैकड़ों राज्यों में बँटा हुआ था। मुगल शासन पतनोन्मुख हो चुका था। दिल्ली में मुगल बादशाह मुहम्मद शाह नाम मात्र का शासक था। उसके खिलाफ सर्वत्र बगावत का बोलबाला था। ऐसे ही समय में बाजीराव पेशवा छत्रपति शिवाजी द्वारा स्थापित मराठा शक्ति की बागडोर संभाले हुए थे। पेशवा के विश्वस्त साथी सेनापति मल्हार राव होल्कर उनके दाहिने हाथ थे। सूबेदार मल्हार ने ही होलकर राज्य की स्थापना की। ऐसा कहा जाता है कि एक बार मल्हार राव पूना जा रहे थे। रास्ते में चौउंडी ग्राम पड़ता था जहाँ रात्रि में अहिल्याबाई को भगवान शिव की पूजा एवं आरती करते हुए मल्हार राव ने देखा। इस दृश्य को देखकर मल्हार राव ने इस कन्या को अपने इकलौते पुत्र खाण्डे राव से विवाह का प्रस्ताव रखा।

साधारण शिक्षित अहिल्याबाई 8 वर्ष की अल्पायु में ही सन् 1733 ई० में मराठा सरदार मल्हार राव होलकर के पुत्र खाण्डे राव से ब्याही गयी। अपनी कर्तव्य निष्ठा से अहिल्याबाई ने सास-श्वसुर, पति एवं अन्य सम्बन्धियों के हृदयों को जीत लिया। उन्होंने एक समर्पित पत्नी, एक कुशल गृहिणी, एक ममतामयी माँ तथा अपने सास-श्वसुर की एक प्रिय बहु के रूप में भूमिका निभाई। अत: हम देखते हैं कि अहिल्याबाई का गृहस्थ जीवन सुखपूर्वक बीत रहा था। सन् 1745 ई० में पुत्र माले राव का जन्म हुआ तथा 1748 ई० में बेटी मुला बाई का जन्म हुआ।

अहिल्याबाई के पति खाण्डे राव कुम्मेरी के युद्ध भूमि में सेना का संचालन करते हुए शत्रुओं की गोलियों के शिकार होकर वीरगति को प्राप्त हो गये। पति की मृत्यु की खबर से अहिल्याबाई सती होना चाह रही थी। मल्हार राव अपने इकलौते पुत्र की मृत्यु से टूट गये। उनकी अवस्था भी 73 वर्ष की हो गयी थी। सती होने की इच्छा व्यक्त करने पर मल्हार राव ने अहिल्याबाई से कहा-

''तू मुझपर क्यों आग बरसा रही है ? अहिल्या तो मर चुकी है, मेरा खण्डू तो तू ही-हो यह मुझे विश्वास है, मेरा सारा सौभाग्य कायम रखना अब केवल तेरे हाथ है, इसका अवश्य विचार कर।'' अपने श्वसुर की इस बात का उन पर बहुत प्रभाव पड़ा। स्वर्ग में जाने की इच्छा को त्याग कर लोक सेवा करना ही उन्होंने अच्छा समझकर सती होने का विचार छोड़ दिया।

अपना अन्त समय जानकर मल्हार राव ने अपने पौत्र माले राव को पास बुलाकर अन्तिम संदेश दिया-

''माले तू ही इस वंश का उत्तराधिकारी है। अपनी माता अहिल्याबाई की आज्ञा का पालन करते हुए राज काज संभालना।'' यह कहकर वीर प्रतापी मराठा सूबेदार 20 मई 1766 को 73 वर्ष की अवस्था में परलोक सिधार गये।

परम्परानुसार 23 अगस्त 1766 ई० को माले राव का राजतिलक हुआ पर वह अपने उत्तरदायित्वों के प्रति गंभीर नहीं था। 27 मार्च 1967 ई० को मात्र 22 वर्ष की अवस्था में माले राव का निधन हो गया। वह केवल 9 माह 18 दिन तक राजा था।

अहिल्याबाई के सम्मुख श्वसुर की इच्छा का पालन करना था। 22 वर्ष का पुत्र राजकुमार गद्दी पर बैठते ही अकाल मृत्यु को प्राप्त हो गया। बड़ी ही विषम परिस्थिति से घिरी हुयी अहिल्याबाई ने अपने मन को स्थिर करते हुए कहा -

''जिस वंश के लोगों ने इस राज्य पर शासन किया है, उनमें से एक की मैं पुत्रवधू हूँ, दूसरे की पत्नी हूँ और तीसरे की माता - इस नाते मेरा यह अधिकार ही नहीं कर्तव्य भी है कि शासन-व्यवस्था को अपने हाथों में लूँ जिससे प्रजा जन को कोई कष्ट न हो।'' प्रजा भी चाहती थी कि देवी ही राज काज संभाले। प्रजा की प्रबल इच्छा का सम्मान करते हुए अहिल्याबाई सन् 1767 ई० में सिंहासनारूढ़ हुई। इनका प्रजा के साथ माता और पुत्र का रिश्ता था। प्रत्येक व्यक्ति अपनी व्यथा इनसे कह सकता था। दोपहर से संध्या तक दरबार करती-संध्या होते ही भगवत भजन में तल्लीन हो जाती, भोजनोपरान्त दरबार में आती और रात ग्यारह बजे तब वहाँ रहती। समय-समय पर नये-नये कानून प्रजा हित में बनाती उनका विश्वास था कि कानून प्रजा के हित के लिए है।

अहिल्याबाई एक पतिव्रता पत्नी, वात्सल्यमयी माँ, कुशल प्रशासिका, संयमी, धर्मज्ञ जितने भी गुण एक महान् शासक के व्यक्तित्व के लिए होना अति आवश्यक है- उन सबों का समन्वित रूप हम अहिल्याबाई में पाते हैं जिन्होंने प्रजा पर ही नहीं बल्कि उनके हृदय पर एक महान् माता के समान वात्सल्यमयी शासन किया। उनके व्यक्तित्व से प्रमाणित होकर जनता उन्हें मातुश्री, माँ, सती माँ एवं मातेश्वरी कहना प्रारंभ कर दिया था। भावुकता विनम्रता एवं दृढ़ता, कोमलता एवं कठोरता, भोग एवं त्याग, लोक परलोक, भाग्य व पुरूषार्थ, शिव व सुन्दर, सत्य व कल्पना सारांशत: अनुभूति एवं अभिव्यक्ति के जितने भी पक्ष हैं उन सबों का जैसा समन्वय अहिल्या बाई में था वैसा अन्यत्र दुर्लभ है। अलौकिक तेज के कारण वे साक्षात् देवी स्वरूप दिखाई देती थीं।

जब हम महारानी अहिल्याबाई के पारिवारिक जीवन पर दृष्टिपात करते हैं तो हमें यह पता चलता है कि उनका पारिवारिक जीवन सुखयम तथा संतोषप्रद नहीं था। 29 वर्ष की अवस्था में ही इनके पति का देहान्त, श्वसुर मल्हार राव की मृत्यु 1766 ई० में, देखते-देखते पुत्र, नाती, दामाद, पुत्री का सती होना आदि आकस्मिक बज्रपातों से अहिल्याबाई विचलित तो हुई पर प्रजाहित में अपने को संभालते हुए, सफल दायित्व का वहन करते हुए 1795 ई० में नर्मदा के किनारे महेश्वर के किले में अपने इस नश्वर शरीर को छोड़कर परलोक सिधार गयीं। भगवान शिव के अनन्य अनुयायी होने के कारण इन्होंने हजारों की संख्या में मन्दिर, धर्मशालाएँ तथा अतिथिशालाएँ, तालाबों तथा गंगा, नर्मदा आदि पवित्र नदियों में यात्रियों के लिए घाटों का निर्माण करवाया। उत्तर भारत में आक्रान्ताओं द्वारा तोड़े गये अनेक मन्दिरों का इन्होंने जीर्णोद्धार किया।

गया का वर्तमान विष्णुपद मन्दिर फल्गु नदी के पश्चिमी तट पर अहिल्याबाई की ही देन हैं। निर्माण शैली की दृष्टि से यह मन्दिर अत्यन्त मनोरम और आकर्षक है। प्रत्येक सनातन धर्मावलम्बियों के लिए यह प्रसिद्ध तीर्थस्थल है। मन्दिर के गर्भगृह में भगवान विष्णु के चरण चिह्न विद्यमान है। गया में श्राद्ध-कर्म तथा पिण्डदान का जो विधान है उसके लिए विष्णुपद का यह स्थल एक मुख्य वेदी के रूप में है। इस मन्दिर का निर्माण 1766 ई० में महारानी ने कराया था जहाँ पूर्वजों के लिए पिण्डदान कर समस्त हिन्दू जगत सुख एवं शान्ति की अनुभूति प्राप्त करता है। विष्णुपद मन्दिर के अतिरिक्त अहिल्याबाई ने फल्गु नदी के किनारे घाट तथा धर्मशाला का निर्माण भी करवाया। धर्मशाला का जीर्णोद्धार सन् 1992 ई० में संवास सदन समिति द्वारा करवाया गया जिसका नाम अहिल्याबाई भवन है। संवास सदन समिति द्वारा प्रत्येक वर्ष इस भवन में उनकी पुण्य तिथि समारोह पूर्वक जिला प्रशासन द्वारा मनाया जाता है। विष्णुपद मन्दिर परिसर में प्रवेश द्वार के पास महारानी की संगमरमर की एक मूर्ति की भी स्थापना कराई गई है जो कृतज्ञ गयावासियों की देन के रूप में है।

पुण्यश्लोका, प्रात: स्मरणीय, गंगाजल निर्मल मातोश्री, लोकमाता देवी के नामाभिमान से सालंकृत भारतीय जनमानस के हृदय पटल पर सात्विक भाव प्रकट करने वाला महान् व्यक्तित्व है श्री अहिल्याबाई होलकर। अपने अलौकिक कर्तव्य द्वारा विश्व की श्रेष्ठतम नारी रत्न बनी। भारत में तत्कालीन अंग्रेज पौलिटिकल एजेंट सर जान माल्कन अर्नद विश्व-विख्यात् साहित्यकार थे जिन्होंने अहिल्याबाई को प्रत्यक्ष देखा था। उनके शब्दों में एक गेहुँए रंग की, साधारण रूपसी, बिल्कुल सादे वस्त्र पहनने वाली, तपस्विनी

समान सात्विक जीवन से संस्कारित मराठी, हिन्दी एवं संस्कृत भाषा का भी साधारण ज्ञान जिन्हें था ऐसी यह अहिल्याबाई थीं।

श्री किशोर वर्मा ने 'इन्दौर इन्दु' में महारानी के प्रति अपनी श्रद्धा सुमन इन शब्दों में व्यक्त की है–

जन्म लिया साधारण कुल में,
निर्झर की झर अजर हुई,
आत्म ज्योति से कर ज्योति जग
दिव्य गुणो में सुधार हुई।
दया भाव से प्रेरित होकर
खुद दया के काम किए
आजीवन सर्वस्व लुटाकर
स्वर्णाक्षरों में अमर हुई
जीवित ही स्वर्ग सीमा छू ली
देवि अहिल्या नमो नमो।।

दीन–दरिद्र जनों का दुख दूर करने वाली अहिल्याबाई लक्ष्मी थी। कुशल जन उनके कौशल पर मुग्ध थे, विद्वानों को वह सरस्वती प्रतीत होती थी, अपराधियों के लिए वह क्रुद्ध थी, श्वसुर मल्हार राव की सेवा वह दासी की भाँति करती थी। याचकों के लिए कल्प लता थी। प्रजा जनों का वह साक्षात् माता की भाँति पालन करती थी। मंत्रियों के बीच वह स्वयं मंत्र सिद्ध थी और नारियों के बीच पतिव्रता अरून्धती थी। अहिल्याबाई में चमेली फूल की कोमलता थी पर शत्रुओं के शरीरों को छेदने के लिए वह कटार थी। भूखे लोगों के लिए उनके हृदय में दया और चोरों के लिए क्रूरता थी। श्री सियाराम शास्त्री भागवत रचित संस्कृत काव्य ग्रंथ श्रीमद् अहिल्या चरित्रय में कवि ने महारानी के प्रति अपनी भावना निम्न शब्दार्थ व्यक्त की है–

शुद्ध–रंग परिमण्डितान्तरे
सुन्दरे–स्वकुल देव–मन्दिरे।
शुभ्र–वस्त्र परिधान–कारिणी
शुद्ध–सत्वगुण–मानसा सनी।।
पूर्ण चन्द्र किरणानिव जेतु
शुद्ध रंग–परिरम्भिकायम्।।
सा तदा शिवपदं प्रति नेतुं
शंकर किम् समर्चयति स्म।।

(निर्मल पूर्ण चन्द्रमा की किरणों के समान श्वेत वस्त्र–पहने हुए। सात्विक अन्तः करण वाली अहिल्याबाई सुन्दर रंगों से सजे हुए मन्दिर में बैठकर शिवार्चन किया करती थी मानों वे शिव धाम में प्रवेश कर रही हों।)

◆

'अपराजिता'
26 आर, बैंक कॉलोनी
पादरी बाजार, गोरखपुर (उ०प्र०)
मो०–09452778554

शिखरस्थ साहित्य-साधक 'वियोगी' जी

डॉ० राजदेव शर्मा

पं० मोहनलाल महतो 'वियोगी' (1891-1990) एक ही साथ कवि, अनुसंधाता, कहानीकार, उपन्यासकार, नाटककार, निबंधकार, व्यंग्य-चित्रकार आदि सब कुछ थे। विश्वविश्रुत विष्णुपद मन्दिर के बगल में स्थित घर में रहकर उन्होंने जो साहित्य एवं दर्शन की अनुपम साधना की, वह यज्ञ की होमशिखा के समान पूत-पवित्र और भास्वर थी। वे भावथित्री और कारथित्री दोनों ही संपदाओं के धनी थे। विद्वानों की सम्मति है कि उनकी बहुआयामी रचनाधर्मिता में कवि-कर्म सर्वाधिक ज्योतिर्मय था। वस्तुतः उनका कवि ऋषियों द्वारा अवधारित अर्थ का समवर्ती था। वैदिक ऋषियों के अनुसार 'कवि' शब्द से 'ऋषि' का भी बोध होता है। ऋषि को कवि भी कहा जाता है। ऋषियों की तरह कवि वे द्रष्टा है जो दिव्य सत्य का श्रवण करते हैं-

कवयः सत्यश्रुताः

(ऋग्वेद 5/57/8)

कवि सद्वस्तु को सुनता है और जो सद्वस्तु सुनाई पड़ती है, वह साक्षात अनुभूति का विषय बनती है। यही अनुभूति शब्दों में ढलकर सच्ची कविता का रूप लेती है। अतः कवि सत्य का संधान करता है, संघटन करता है। सत्य शब्द का दो अर्थों में ग्रहण किया जाता है। पहला, ब्रह्माण्डीय व्यवस्था एवं समस्त धर्मों का आधार और दूसरा सत्य स्वरूप परमात्मा का प्रकाशक। वियोगी जी की काव्य साधना में सत्य के इन दोनों रूपों का समाहार लक्षित होता है। कवि सृष्टिकार की ब्रह्माण्डीय व्यवस्था को न केवल देखता है वरन सुनता भी है। यथा -

गायक! तुम भी सुनो ध्यान देकर,
अब गाना है बेकार!
गूंज रही है मुक्त गगन में,
कैसी वीणा की झंकार ।।
रवि, शशि जिसकी वीणा की,
स्वर-लहरी पर थिरक रहे।
स्वर के स्रोत प्रखर में जाते हैं-
यह तीनों लोक बहे।

(चुप रहो-निर्माल्य)

कवि ने सत्य को परमात्म तत्व का ज्ञापक स्वीकार करते हुए लिखा है-

तेरे चरणों का आश्रय ले आदिकाल से ऋषि, विद्वान-
युगपरिवर्तक बल संचय कर करते हैं जग का कल्याण।
हे जगतार्क-तप्त जन के शीतलकर्ता सुधांशु एकान्त।
तेरे शान्त अंक में आये हैं हम होकर श्रान्त अशान्त।।

(एकान्त, एकतारा)

वियोगी जी छायाबाद (1920-36) के उन्मेष-काल से ही उसका सक्रिय सम्पादन कर रहे थे। सच

तो यह है कि कवि के काव्य संग्रह 'निर्माल्य' (1925), 'एकतारा' और 'कल्पना' (1935) छायावादी प्रवृत्ति के अप्रतिम दृष्टान्त हैं। इन रचनाओं में छायावादी लाक्षणिकता, कथ्य की सूक्ष्मता, प्रतीक विधान, मानवीकरण अनन्त के प्रति आकुल लालसा आदि तत्व स्पष्ट रूप में देखे जा सकते हैं। उन्होंने 'आर्यावर्त' जैसा महाकात्य लिखा, जिसमें खड़ी बोली के मानक रूप का प्रयोग है। आर्यावर्त की निम्नांकित पंक्तियाँ उनकी कल्पना की ऊँची उड़ान को अभिव्यंजित करती है –

रात ने न देखा कभी रवि को न रवि ने–
रात को निहारा भूल के भी आँख भर के,
किन्तु निशा रोती है, अधीरा बनी रात को
रवि के वियोग में, इधर रवि दिन में
हाय! तपते हैं निशा रानी के विरह में
कैसी यह प्रीति है, वियोग यह कैसा है।।

(आर्यावर्त, प्रथम सर्ग)

उपर्युक्त पंक्तियों में अन्वित कला और कल्पना का अपूर्व संगम देखकर पं० रामदहिन मिश्र लिखते हैं– ''इनमें न तो वाच्यार्थ का चमत्कार है और न लक्षण का। अलंकार का भी आभास नहीं मिलता, तथापि यह जो कुछ भी है, अपूर्व है। कला और कल्पना का एक सुन्दर दिग्दर्शन है।''

वियोगी जी की साधना का फलक अत्यन्त विस्तृत है। उन्होंने 'महामानव', 'आदमखोर', 'शेषदान' जैसे उपन्यास लिखे। 'धोखा', 'तथास्तु' और 'कसाई' जैसे नाटक लिखे। सप्तसुमन, आरती के दीप, धुंधले चित्त जैसा संस्मरण लिखे। भूखी धरती, गधे की लाश, रजकण, सलिला जैसे कहानी संग्रह लिखे, उनका आलोचनात्मक साहित्य– 'कलाविवेचन', 'विचार धारा' और 'साहित्यसमन्वय' अपनी गरिमा रखता है। उन्होंने सुदूर इतिहास के अन्धकार से आच्छन्न गहनरों में पैठकर जीवन के अमृतत्व की खोज की है और 'जातककालीन भारतीय संस्कृति (1955) और आदर्श जीवनदर्शन (1957) जैसी अमूल्य कृतियाँ दी। उन्होंने गयातीर्थ सम्बन्धी तीन पुस्तकें लिखीं– 'गया–परिचय', 'गया दर्शन' और 'गया–श्राद्ध–क्यों और कैसे'। इस प्रकार हम देखते हैं कि वियोगी जी ने हिन्दी संसार को अकूत और अनमोल संपदाएँ दी हैं।

वियोगी की समग्र रचनाओं के वर्ण्य–विषयों की विस्तृति का आकलन सहज–सुगम नहीं है। उनमें गधे से लेकर परमात्म तत्व तक तथा विराट प्रकृति से लेकर विराट् परमेश्वर तक के रूप–स्वरूप के दर्शन होते हैं। पशु–पक्षी, धर्म–अध्यात्म, लोक–परलोक, समाज–राष्ट्र आदि के साथ मानव जीवन के विविध रंगों एवं पक्षों की सच्ची झाँकी सर्वत्र दिखलाई पड़ती है। विराट् प्रकृति के विविध रूपों की पहचान और तदनुसार अभिव्यंजन का एक दृष्टान्त निम्नवत् है–

रात शेष हो गयी उमंग भरे मन में,
आयी उषा नाचती लुटाती कोष सोना का।
चाँदी रम्य चन्द्रमा लुटाता चला हँसता
और निशारानी मोदपूरिता मनोहर,
सीपज लुटाती चली अंजली में भर के।

विविध समीर आया सौरभ विखेरता
पक्षियों ने गीत और गीतों ने मधुरिमा-
अपनी लुटायी धन्य-धन्य किया निज को,
और निजमहिमा लुटाके तम लज्जा से
भाग छिपा कायरों के मन में हताश हो।।

(आर्यावर्त, सर्ग 7)

प्रकृति देवी का श्रृंगार सूर्योदय अथवा उषा काल के वर्णन के बिना अधूरा ही रह जाता है। प्राय: सभी कवियों ने उषा काल का वर्णन किया है परन्तु वियोगी जी ने जो इसका वर्णन उपमा, रूपक और काव्यलिंग-इन तीन अलंकारों का आश्रय लेकर किया है, वह सर्वथा नवीन है अनुपम है। कवि की निम्नलिखित पंक्तियाँ उषारानी को मोहक चित्र उरेहती हैं-

अंधकार-गज भागा गहन विपिन में,
दिनपति प्रकटा सरोष मृगराज-सा,
केसर-सी किरणे विकीर्ण हुई नभ में।
भाग के मृगांक छिपा अस्ताचल ओट में,
भय था कि मृग-चिह्न देख कहीं केसरी-
टूटे मत, भाग गयी रजनी किरात-सी,
आँचल में भरकर नखत-गुंजा भय से।

(आर्यावर्त, सर्ग 3)

वियोगी जी की वर्णन-पद्धति उनकी निजता से परिगत था अवेष्टित है। प्राय: सभी रचनाएँ प्रसाद गुण सम्पन्न ओर श्रृंगार और वीररस से परिपुष्ट हैं। यह कहना अनपेक्षित नहीं है कि कवि की कृतियाँ उत्प्रेक्षा अलंकारों से पूर्णत: सज्जित हैं। उत्प्रेक्षा अलंकार का सिद्धहस्त प्रयोग एक ओर जहाँ अप्रस्तुत को प्रस्तुत कर अर्थ को बोधगम्य बनाता है तो दूसरी ओर नवीन उद्‌भावनाओं को परिरक्षित करता है। उत्प्रेक्षा अलंकार की छटा निम्नांकित पंक्तियों में द्रष्टव्य है-

उषा गयी, नभ-गंगा को भर लाली से,
मानो खेल होली रातभर धनश्याम से,
भोर होते धोकर अबीर निज मुख का-
रविनन्दिनी में बृषभभानुन्दिनी गयी।

(आर्यावर्त सर्ग-12)

'आर्यावर्त' एक ऐतिहासिक महाकाव्य है, जिसमें भाषा की प्रौढ़ता और वस्तुनिष्ठता के दर्शन होते हैं। कवि की पहली काव्य- कृति 'निर्माल्य' में यत्र-तत्र व्रजभाषा की शब्दावलियाँ दिखाई पड़ती हैं। निर्माल्य के बाद 'कल्पना' और 'एकतारा' का प्रकाशन हुआ, जिनमें कवि खड़ी बोली की ओर अग्रसर होते हुए दिखलाई पड़ते हैं। इनमें काव्य-सौष्ठब और प्रांजल भाव-प्रकाश सधन हो उठे हैं। ये दोनों रचनाएँ कवि को छायावाद-रहस्यवाद के कवि चतुष्टय (प्रसाद, पंत, निराला एवं महादेवी) के समकक्ष कवि पंचक के रुप में

प्रतिष्ठित करती हैं। इन दो रचनाओं में कुछ ऐसी बातें भी हैं, जो कवि को रहस्यवादी कवियों से पृथक् करती हैं और वे हैं प्रसाद-गुण का आधिक्य। 'एकतारा' में तथ्यात्मकता एवं वस्तुपरकता के भी दर्शन होते हैं, जो रहस्यवादी कविताओं से पृथक् धरातल का निर्माण करती हैं। इनमें भी अन्य अलंकारों के साथ उत्प्रेक्षा का प्रयोग मिलता है। 'कल्पना' की कुछ पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं-

ये दौड़ रहे हैं बादल
मानो पानी से धोकर,
रूई से पोछ रहा हो-
उस जल को कोई जी भर।
मानो धन रूपी पति से
मिलने का अवसर आया
वसुधा का हँसकर सिन्दूर
संध्या ने आज लगाया।

(कल्पना, उज्ज्वल मोती)

वस्तुत: वियोगी जी के सम्बन्ध में रामवृक्ष बनीपुरी, जगन्नाथ प्रसाद द्विवेदी, रामदहिन मिश्र आदि विद्वानों ने बहुत कुछ कहा है, फिर भी अभी बहुत कुछ शेष है। कवि ने अपनी विराट् साहित्य-साधना से जीवन के बहुविध स्वरूप को उद्घाटित किया है। सन् 1977 में वियोगी नागरिक अभिनन्दन समिति, गया की ओर से उनका अभिनंदन किया गया था। इस समारोह के अवसर पर आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा- ''वियोगी जी ने लगभग पचास वर्षो से हिन्दी साहित्य की अमूल्य सेवा की है। उनकी रचनाएँ कई पीढ़ियों को प्रेरणा देती रहेंगी।''

कवि को मेरा शत-शत प्रणाम।

◆

लक्ष्मी नारायण मंदिर
लखीबाग, मानपुर, गया

पर हित सरिस धर्म नहि भाई।
पर पीड़ा सम नहि अधमाई ।।
- गोस्वामी तुलसीदास

गया माहात्म्य

श्री सुमन्त

सर्वतीर्थानां गयातीर्थम् ततो वरम्

गयाजी के संबंध में वायुपुराण में कहा गया है–

गयायां नहि तत् स्थानं यत्र तीर्थ ने विद्यते।
सांनिध्यं सर्वतीर्थानां गयातीर्थम् ततो वरम्।।

अर्थात गयाजी में ऐसा कोई स्थान नहीं है, जो तीर्थ न हो। यहाँ सभी तार्थों का सानिध्य है। अत: गया तीर्थ सर्वश्रेष्ठ है। लोगों का ऐसा विश्वास भी है, तभी तो इस विज्ञान के युग में देश–विदेश से लाखो पिण्डदानी अपने पुरखों की आत्मा की शांति हेतु पितृपक्ष में प्रत्येक वर्ष गयाजी आते हैं। यह परम्परा कब से चली आ रही है– कहना कठिन है। भगवान विष्णु स्वयं गयाजी आये, यह कथा सर्व विदित है। गयाजी के मुख्य मंदिर विष्णुपद में भगवान विष्णु के चरण की ही पूजा होती है। विष्णु के चरण कैसे पड़े, कथा सभी को मालूम है। भगवान श्री राम अपने अनुज लक्ष्मण एवं माता सीता के साथ अपने पिता के पिण्डदान हेतु गयाजी आये थे। जिसका प्रमाण विष्णुपद मंदिर के ठीक सामने अंत: सलिला फल्गु के दूसरे तट पर सीता कुण्ड है, जहाँ आज भी पिण्डदानी पिण्डदान करने को जाते हैं महाभारत काल में युद्धिष्ठिर पिण्डदान को आये, जिसका प्रमाण बोधगया में है। प्राचीन काल से लेकर आजतक गयाजी में आये पिण्डदानियों की लम्बी लिस्ट है। गयाजी के चारो दिशाओं में कई पिण्ड वेदियाँ इस बात का पोख्ता प्रमाण है कि गयाजी सर्वश्रेष्ठ तीर्थ है। आज की तारीख में भले ही पिण्ड वेदियों की संख्या सिमट कर 40–45 के बीच रह गई हों, लेकिन प्राचीन काल में पिण्ड वेदियों की संख्या 360 थीं जो उतर में प्रेतशिला से लेकर दक्षिण में बोधगया के बीच अवस्थित थी। तब गयाजी का क्षेत्रफल शायद इतना बड़ा नहीं होगा। आज शहरीकरण के दौर में गयाजी का क्षेत्र काफी बड़ा हो गया है, बावजूद इसके आज भी सर्वत्र धार्मिक स्थल मौजूद हैं। कुछ पुराने धर्मस्थल विलुप्त हुए हैं तो उनके स्थान पर नये धर्मस्थलों का भी निर्माण हुआ है। लेकिन, जहाँ तक पिण्ड वेदियों का सवाल है, ज्यादातर पिण्ड वेदियाँ अतिक्रमण की शिकार हुई हैं। आज भी कई पिण्ड वेदियाँ विलुप्त होने के कगार पर हैं।

मान्यता के अनुसार गयाजी 4000 ईस्वी पूर्व भी फल्गु के मनोरम तट पर पल्लवित–पुष्पित था। लेकिन इतिहास के पन्नों पर गयाजी का इतिहास छठी सदी पूर्व से उपलब्ध है। विदेशी यात्री फाहियान चौथी सदी में इस बात का उल्लेख किया है कि गया नगर की जनसंख्या कम है, जहाँ वैष्णव और बौद्ध साथ–साथ रहते हैं वहीं सातवीं सदी में ह्वेनसांग ने गयाजी के बारे में लिखा हैं इतिहासकार मानते हैं कि बौद्ध धर्म के कारण बीच के कुछ वर्ष में गयाजी पर बौद्धों का अधिकार रहा होगा, जिस कारण पिण्डदान का कार्य कुछ वर्षों के लिए बाधित रहा होगा ?अंग्रेजी हुकुमत ने गयाजी का विकास सुनियोजित तरीके से किया। गयाजी की समानान्तर सड़कें, जमीन के अंदर की नाली, तालाब इसके प्रमाण हैं। प्राचीन काल में सचमुच गयाजी का कोई स्थान ऐसा नहीं होगा, जिसे तीर्थ की तरह तीर्थयात्री न पूजते होंगे। आज एक ओर जहाँ गयाजी का विस्तार इतना अधिक हो गया है, वहीं दूसरी ओर पिण्ड वेदियों की संख्या इतनी कम हो गई हैं, इसके बाबजूद पितृपक्ष में पूरा का पूरा गयाजी पिण्डदानियों से अटापटा रहता है और यहाँ का कण–कण तीर्थ की तरह हो जाता है।

दूसरे प्रदेशों के लोग गयाजी के आम निवासियों को भी पवित्र दृष्टि से देखते हैं ओर यह जान कर कि गयाजी मृत आत्माओं को भी शांति प्रदान करती है, उनके सामने नतमस्तक हो जाते हैं। यह बात निर्विवाद सत्य है। गयाववाल पण्डों की संख्या आज भी उतनी नहीं है जितनी संख्या में पिण्डदानी यहाँ आते हैं। दूसरे प्रदेशों के पिण्डदानियों के घर प्राय: गयावाल पण्डे स्वयं नहीं जाते हैं। वे लोग अपनी जगह गयाजी के दूसरे लोगों को ही

भेजते हैं। दूसरे प्रदेशों के पिण्डदानी इनकी खातीरदारी गयावाल पण्डों की ही तरह करते हैं। तात्पर्य यह कि न केवल गयाजी का पूरा क्षेत्र तीर्थ के रुप में पूज्य है, अपितु गयाजी के लोग भी पूज्यनीय हैं, भले इस बात की चर्चा वायुपुराण में न हो। ऐसे में हम गयावासियों का भी कर्तव्य बनता है कि हम गयाजी आनेवाले पिण्डदानियों को हर संभव सहायता प्रदान करें, साथ ही उनकी सुख और सुविधा का भी सदा ख्याल रखें।

◆

सम्पादक-टोला-टाटी, गयाजी

सीताकुंड में सीता ने किया था पिंडदान

श्री गणेश प्रसाद

त्रिपाक्षिक श्राद्ध के दसवें दिन पिंडदानी सीता कुण्ड पर बालू के तीन पिंड तथा रामगया में श्राद्ध करते है। इन तीर्थों पर श्राद्ध करने से पितरों को अक्षयलोक की होती है प्राप्ति। सीता कुण्ड पर सुहाग की पिटारी दान करने से स्त्रिया वैधव्य नहीं होता हैं।

सीता कुण्ड और राम गया दोनों तीर्थ विष्णुपद मंदिर के सामने फल्गु नदी के पूर्वी तट पर अवस्थित हैं। धार्मिक ग्रंथों में चर्चा है कि त्रेता युग में मर्यादा पुरूषोत्तम भगवान श्रीराम के पिता राज दशरथ जी ने स्वयं उपस्थित होकर अपनी पुत्रवधू जनक नन्दनी सीता से बालू का पिण्ड प्राप्त किया था। आज भी यहाँ दशरथ जी का हाथ का प्रतिरुप जमीन से निकला हुआ है जहाँ तीर्थ यात्रियों द्वारा पिण्डदान किया जाता है।

इस सम्बन्ध में आनन्द रामायण एवं गया महात्म्य में कथा है कि त्रेता युग में भगवान राम वनवास की अवधि पूरी कर अयोध्या लौटने के बाद गया श्राद्ध करने के लिए गयाधाम आये थे। पितर स्वयं गया धाम पहुँचकर अपने-अपने स्वजनों के हाथ से पिण्ड ग्रहण कर अपने वंशजों को आशीर्वाद देते हैं। इसी परम्परा में जब भगवान राम अपने अनुज लक्ष्मण के साथ गया श्राद्ध के लिए सामग्री लाने के लिए बाजार गये और सीता अकेली फल्गु तट पर दोनों के आने के इन्तजार करने लगी। उसी समय राजा दशरथ का हाथ फल्गु नदी के बालू से निकला और वे पिण्ड लेने के लिए तड़पने लगे। सीता ने कहा कि स्वामी आ जाते हैं तब वही पिण्डदान करेंगे।

किन्तु राजा दशरथ तड़प उठे और कहा कि मैं और प्रतीक्षा नहीं कर सकता। समय निकला जा रहा है, इसलिए बालू का पिण्ड दो। मैं तृप्त हो जाऊँगा। इसी पर माँ सीता फल्गु नदी गयी, और केतकी पुष्प, वटवृक्ष को साक्षी रखकर अपने ससुर राजा दशरथ को बालू का पिण्डदान कर दिया। भगवान राम के लौटने के बाद सीता ने पूरी घटना से उन्हें अवगत कराया और सभी साक्ष्यों को प्रस्तुत किया। किन्तु इनमें फल्गु, गो तथा केतकी पुष्प द्वारा स्पष्ट रूप से इनकार किये जाने पर क्रोधित सीता ने फल्गु के अंत: सलिला हाने, गौ को विष्टा भक्षण करने तथा केतकी पुष्प को शुभ कार्यों से वंचित होने का श्राप दे दिया। जबकि वट वृक्ष द्वारा सत्य की साक्षी होने पर प्रसन्न होकर सीता ने कभी नष्ट नहीं होने (अक्षयवट) का आशीर्वाद दिया। तभी से वहाँ बालू का पिंड देने की परम्परा प्रारम्भ हुई है जो आज तक अनवरत चल रही है।

◆

पत्रकार, दैनिक हिन्दुस्तान, गया

अन्तः सलिला फल्गु के तट पर बसे धार्मिक स्थल

श्री राम नरेश सिंह 'पयोद'

भारत की सभी छोटी-बड़ी नदियों के उद्‌गम एवं बहाव क्षेत्र में आज हजारों धार्मिक स्थल हैं, जिनकी स्थापना इनके उद्‌गम काल और बाद में क्रमशः लोगों ने अपनी धार्मिक आस्था को स्थायी रुप प्रदान करने में अग्रणी भूमिका का निर्वाह किया है। इनमें इनके धार्मिक गुरूओं का स्थान अग्रगण्य है। उदाहरण स्वरूप बड़ी और पवित्र नदी गंगा के तट पर बसे हरिद्वार, काशी प्रयाग, पटना, सुलतानगंज आदि धार्मिक स्थल हैं। यहाँ देश-विदेश के लाखों लोग प्रतिवर्ष गंगा में स्नान कर इन मन्दिरों में स्थापित देवी-देवताओं की मूर्तियों का पूजन कर अपनी आत्मा का तृप्त करते हैं। इसी तरह यमुना सरयू, गंडक कृष्ण-कावेदी इत्यादि नदियों के किनारे बसे अनेक देव स्थल हैं, जहाँ लाखों-देशी विदेशी लोग इन नदियों में स्नान कर इन मन्दिरों में पूजा कर आत्मतृप्ति प्राप्त करते हैं। इसी कथा के क्रम में देश की प्रसिद्ध अन्तः सलिला फल्गु नदी का भी नाम आता है, जिसके किनारे बसे अनेक छोटे-बड़े धर्म स्थलों में फल्गु स्नान के बाद पूजा कर लोग आत्मतृप्ति प्राप्त करते हैं।

फल्गु नदी की उत्पति गया से छः कि०मी० दक्षिण गया बोधगया पथ से पूरब मोहाने एवं निरंजना के चौड़े पाट से मनकोसी गाँव के निकट से हुई है। यहीं इन दोनों नदियों की धारा भी एक होकर फल्गु नाम पड़ा। इसी फल्गु तट पर गयासुर के शरीर पर बसा गया शहर है, जो बनारस, प्रयाग, दिल्ली, मद्रास और पटना से भी पुराना है। तभी तो यहाँ त्रेतायुग में भगवान राम ने अपनी पत्नी सीता एवं अनुज लक्ष्मण के साथ फल्गु जल से तर्पण कर अपने पिता दशरथ की आत्मा को शांति प्रदान की थी। इसी नदी के पश्चिमी तट पर ब्रह्मयोनि पहाड़ी के निचले भाग में विश्व प्रसिद्ध विष्णुपद मन्दिर है, जिसका निर्माण आज से ढाई सौ वर्ष पूर्व इन्दौर की विदुषी एवं धार्मिक विचार धारा की महारानी अहिल्याबाई होल्कर ने गया से बीस कि०मी० उत्तर पूरव में पत्थर कट्टी गाँव में स्थित काले पत्थर की छोटी पहाड़ी के सुन्दर पत्थर से जयपुर के कारीगरों को बुलाकर कई वर्षों तक गया में रह अपनी देख-रेख में करवाया था, जो मन्दिर निर्माण के बाद कुछ कारीगर यहीं बस गए और इनमें से कुछ आज भी इस पत्थर से सुन्दर मूर्ति बनाकर अपनी जीविका चला रहे हैं,

शंकराचार्य ने जब बौद्ध धर्म के आक्रमण से हिन्दू धर्म को बचाने के प्रयास में बिलुप्त होते हिन्दू के देवी-देवताओं की मूर्त्तियों को मन्दिर में प्रतिष्ठित करने का अभियान चलाया तो उसी काल में ब्रह्मयोनि पर्वत की निचली सतह पर शक्तिपीठ मंगालागौरी, गदाधर, नृसिंह के मन्दिरों का निर्माण किया गया तथा बाद में ठाकुर वाड़ी एवं अन्य मन्दिरों का निर्माण हुआ। वायु युराण में गया के मन्दिरों की विस्तृत जानकारी मिलती है।

भावार्थ- गया में जितनी प्रस्तर प्रतिमाएँ भिन्न देवताओं के नाम से मौजूद है, ये सब गया सुर के शरीर को स्थिर रखने के लिए साक्षात देवता के रूप में उसके शरीर पर बैठी हुई हैं, इनमें बासठ प्रमुख प्रतिमाओं का वर्णन है। पिण्डदान तथा तर्पण के लिए फल्गु के ब्रह्ममसरोवर से उत्तर मानस का क्षेत्र काफी महत्वपूर्ण है। परन्तु विष्णुपद मन्दिर के दक्षिण से उत्तर तट का दो वर्ग कि०मी० में फैले क्षेत्र, में लोग पिण्डदान कर अपने पितरों को शान्ति प्रदान करते हैं। प्रसिद्ध पवित्र पर्वत ब्रह्मयोनि की उपत्यका में प्राचीन सिंगरामठ है, जिसका निर्माण काल 1560 ई० के लगभग है। यहाँ प्रतिवर्ष सावन में सोमवार को भक्त लोग शिवलिंग की पूजा कर पुण्य जाप करते हैं, विष्णुपद मन्दिर की बगल में प्रसिद्ध सूर्यकुण्ड है, जिसमें स्नानकर छठ के दिनों में छठव्रती भगवान भास्कर को अर्ध दे कर पुण्य लाभ करते हैं।

विष्णुपद मन्दिर से तीन किमी० उत्तर फल्गु के आने पर इसकी बायी ओर राम शिला पर्वत है, जिस पर बनी काकवलि की वेदी पर पिण्डदानी पिण्ड दे पितरों की आत्मा को शांति प्रदान करते है। अट्ठारहवीं सदी में कोलकाता के एक धर्मप्रिय व्यक्ति कृष्ण बसु ने इस राम शिला पर्वत पर सीढ़ियाँ बनवा दी थी। जीर्ण-शीर्ण

हालत में आज भी पर्वत शिखर पर जाने का एकमात्र साधन की पहली सीढ़ी है। इस पर्वत की शिखा पर कई देवी देवताओं की मूर्तियाँ हैं, जिनकी पूजा आज भी हो रही है। पौराणिक मान्यता के अनुसार भरत जी अपने पिता के श्राद्ध के क्रम में पर्वत शिखर पर राम, लक्ष्मण, सीता और अन्य देवी-देवताओं की मूर्तियाँ स्थापित की थीं, तथा पर्वत का नामकरण बड़े भाई के नाम पर रामशिला रखा, जो आज भी कायम है।

फल्गु के दस कि०मी० उत्तर जाने पर इसके पश्चिमी तट पर बानावर की पहाड़ी है, जिसकी चोटी पर बाणासुर नामक राक्षस ने शिव लिंग की स्थापना की थी। आज इस का नाम बराबर की पहाड़ी है।

पहाड़ के ऊपर शिवलिंग के दक्षिण में थोड़ी दूरी पर एक जल कुण्ड है, जो ग्रेनाइट के चिकने पत्थरों से धिरा है। यह एक प्राकृतिक कुण्ड है, जो कभी नहीं सूखता। क्यों कि पहाड़ के नीचे के अदृश्य जल स्त्रोतों से इसमें निरन्तर जल संग्रहित होते रहता है। इसके दक्षिण पूर्व भाग का कुण्ड पाताल गंगा कहलाता है। बराबर पहाड़ी के दक्षिणी कोने में ग्रेनाइट पत्थर का एक सानु शिखर है, जो 500 फीट लम्बा तथा 100 से 120 फीट मोटा एवं 30 से 35 फीट उंचा है। इसमें कड़ी चद्धानों को काटकर कुछ गुफायें बनाई गई है, इसमें से एक गुफा का नाम कर्णचउपर है, जिसे स्थानीय लोग कर्णझोपड़ी कहते हैं, गुफा की भीतरी दीवारें बहुत चिकनी हैं, जिन्हें बज्रलेप के द्वारा चिकनी किया गया। इस लेप के निर्माण की विधि आधुनिक वैज्ञानिकों के लिए अज्ञात है, इसके लिए विशेष शोधकी आवश्कता है। इसकी चिकनाई पर छेनी की प्रोगधार भी फिसल जाती है। यहाँ एक शिलालेख से रात होता है कि राजा प्रियदर्शनीय अपने राज्याभिषेक के बारह वर्ष में यह गुफा बनवाकर आजीविकों साधुओं को तपस्या करने के लिए प्रदान किया था कर्णचउपर गुफा के विपरीत भाग में सुदामा गुफा है, जिसमें दो की कोठरियाँ हैं, जा परस्पर जुड़ी है। पहली कोठरी गोलाकार है, जिसकी छत एवं दीवारें बज्रलेप से पुती हैं। दूसरी कोठरी छोटी और लेपरहित है। इसके निकट स्थापित शिला लेख' से ज्ञात होता है। चौथी गुफा घाटी के पूर्वी भाग में हैं, जो ग्रेनाइट के काले पत्थरों से बनी है। इस गुफा के दो भाग हैं, जिन्हें विश्वामित्र की झोपड़ी के नाम से जाना जाता है। इसकी कोठरियों के कुछ भाग लेप से लैस है, तथा कुछ भाग उवड़-खाबड़। इसके बाहरी भाग को लेप से लैस किया गया है। उपरोक्त चारों गुफाओं में कुल सात कोठरियाँ हैं, जिस कारण लोग इसे सतघरवा कहते हैं। इस पर्वत की दक्षिणी घृंखला में और तीन गुफायें बनी हैं। इनमें एक का नाम बहिचक और दूसरी का बाधिका है। तीसरी गुफा इन दोनों गुफाओं से बड़ी है, जिसका नाम गोपी गुफा है। इनके आगे मुसलमानों की ईदगाह है, जो गुफा की दीवार से घिरी है। इन गुफाओं का निर्माण राजा अशोक के पौत्र ने करवाकर साधुओं को दान किया था। बराबर की पहाड़ियों में स्थित इन गुफाओं के रहस्य का उद्‌भेदन बाबू देवकी नन्दन खत्री ने अपने चर्चित उपन्यास ''भूतनाथ'' में अच्छी तरह किया है कि बौद्ध हीनयान के साधु किस तरह अपनी तान्त्रिका ..... का कमाल इन गुफाओं में दिखलाया है। बहुत काल तक ये गुफायें बौद्ध तांत्रिकों के रहस्य का केन्द्र रहे हैं।

बराबर की पहाड़ी के शिखर पर स्थित बाबा सिद्धनाथ महादेव की शिवलिंग की स्थापना त्रेतायुग में शक्तिशाली राक्षस राजा वाणासुर बापासुर ने किया था जिसका वर्णन कुछ धार्मिक ग्रन्थों में किया गया है। वाणासुर की राजधानी यहाँ से छः कि०मी० पश्चिम बेला टेकारी रोड पर स्थित) रामपुर नामक स्थान में जमुने नदी के किनारे थी, जहाँ खुदाई में दूसके किले के कुछ अवशेष आज भी देखे जा सकते हैं यहीं से नित्य पैदल चलकर पातलगां में स्थान कर वाणासुर बाबा सिद्धनाथ परजल चढ़ारता था। आज इस स्थान पर बिहार सरकार के पर्यटन विभाग ने पर्यटकों को आकार्षित करने के लिए कुछ धर्मशालायें एवं अन्य सुविधायें उपलब्ध करवाये हैं, तथा पुलिस चौकी का भी निर्माण हुआ है, जिसके पर्यटकों की संख्या बढ़ी है। परन्तु बहुत समय से श्राद्ध मास की शुक्ल चतुर्दशी अनन्त पूजा के दिन यहाँ काफी संख्या में लोग कष्टकर बाबा पर जलाभिषेक कर पुण्यलाभ करते चले आ रहे हैं।

◆

डालमिया कम्पाउन्ड, रोड नं० 1
बुनियादगंज, मानपुर, गया - 3

जीवन में कर्म-योग की भूमिका

डॉ० संकेत नारायण सिंह

मानव-जीवन में कर्म की प्रधानता अक्षुण्ण है। इसी कारण गुसाईजी ने भी कहा है- कर्म प्रधान विश्व करि राखा जो जस करहि, सो तस फल चाखा। किन्तु कर्म करने से प्रेरणा मनुष्य को उसके आन्तरिक वृतियों के अनुसार ही मिलती है। साथ ही पहली सत्य है कि हम कर्म-सम्पादन में अपनी कौन सी वृत्तियों से प्रोत्साहित होते हैं। यहाँ पर यह ध्यान देने की बात है कि मनुष्य आन्तरिक रूप से श्रद्धा तथा मृदुता तथा पवित्रता जैसे गुणों के अनुसार ही अपने कर्तव्य-कर्मों को संचालित करते हैं। पितृपक्ष की अवधि में हम श्रद्धापूर्वक अपने पूर्वजों को स्मरण करते हैं और उनके लिए विभिन्न प्रकार के आध्यात्मिक अनुष्ठानों को सम्पादित करते हैं। यह भी सही है कि हमारा अस्तित्व ही कर्म पर निर्भर है। बिना कर्म के मनुष्य का कोई अस्तित्व नहीं है। जो कर्म किए बिना जीता है वह अपना अस्तित्व खो बैठता है। जो कर्म की अवमानना करता है वह जीवन देवता का अपमान करता है। व्यक्ति के कर्म उनके भीतर वासनाओं के अनुरुप ही होते हैं। वासनाओं को कई भागो में बांटा जा सकता है- सात्विक, राजसिक और तामसिक सत, रज, तम इन तीनों प्रकार के गुणों की भी उत्पत्ति हमारे भीतर की प्रकृति से होती है। हम किस स्थिति में कर्म न करना चाहें तो भी हमारी अंतर्निहित वासनाएं हमें कर्म करने के लिए विवश कर देंगी। हम कभी निष्क्रिय रह नहीं सकते। जीवन सदैव सक्रियता से भरा और सकारात्मक स्वरूप लिए होता है। कर्मों के रुप में जीवन वस्तुत: गतिशीलता की ही अभिव्यक्ति है। जीवित रहते हुए मनुष्य एक क्षण के लिए भी कर्म किए बिना नहीं रह सकता। जब सभी कर्म समाप्त हो जाते। तब मनुष्य मर जाता है। जो अकर्मण्य होता है, वह जीवित ही मृतक के समान है। कर्म से भागने का अर्थ है- जीवन से भागना। गीता का संदेश बड़ा स्पष्ट है। कभी भी कर्म किए बिना न रहो। समाजसेवा करो, राष्ट्र का गौरव बढ़ाओ, मानव मात्र के कष्टों की निवृति हेतु तपो। यही संपूर्ण जीवन है। धन देना, धर्म का काम करना, हड़ताल करना, भाग खड़े होना, कर्तव्य त्याग देना, अनुपस्थित रहना- ये सर्व उपाय जीवन का क्षरण कर डालते है। जीवन समर में सभी प्रकार की उथल-पुथल का सामना करते हुए जीना, सक्रिय हो उद्यमी बने रहना ही मनुष्य को शोभा देता है। कर्म करो, सक्रिय होकर जियो एवं निर्भय होकर रहो। परिश्रम से मत डरो। निराशाओं का सामना करने से भागो मत। जब तक जीवित हो, वास्तव में जीवन का एक-एक पल जियो। कर्मों द्वारा ऊपर उठो, कर्मों द्वारा ही उन्नति करो, कर्मों से ही अपना विस्तार करो। गीता का जीने का संदेश स्वयं में एक प्रमाण है कि गीता संन्यास की पाठय-पुस्तक नहीं है। गीता जीवन जीने की कला सिखाती है। वह *कुलनैह कर्माणि जिवीवे छतंसमा:* की उपनिषदकार की उक्ति अनुसार कर्म करते हुए ही सौ वर्षों तक जीते रहने की इच्छा सदा बनाए रखने की बात करती है।

पितृपक्ष की अवधि में अपने पूर्वजों की आत्मा की चिरशांति के लिए जो पितर-पूजा की जाती है। उसके अन्तर्गत कर्म की ही सात्विक भावना निहित रहती है। हम अपने संगी अथवा जीवित अपने पराये के प्रति ही केवल संवेदनशील न रहें, वरन् हम दिवंगत आत्माओं को भी अपने आत्मीय के रुप में ग्रहण करें। 'स्व' से ऊपर उठकर 'पर' भूमिका में प्रेम और सौहार्द्र के आदान-प्रदान की दिशा में यह एक सात्विक अभियान ही कहा जायगा। हमारी भारतीय संस्कृति यहीं तक नहीं रुक जाती है वह सनातन धर्मावलंबियों के हृदय में अपने-पराये तक जीवित प्राणियों के अतिरिक्त पेड़-पौधे नदी-पहाड़ों के प्रति भी मानवीय दृष्टि को अपनाने की भूमिका अंगीकृत करती है। हम नदियों की पूजा करते हैं। पहाड़ों की पूजा करते हैं। पेड़-पौधों की पूजा करते हैं। इन सब के पीछे कर्म के सात्विक संवेदना शीलता निहित है। पितृपक्ष की अवधि में जड़-चेतन सम्पूर्ण सृष्टि के प्रत्येक अवयवों के प्रति हम हृदय के प्रभामृत के छिड़काव की दिशा में अवस्थित हो जाते हैं। कर्म की अवधारणा को भारतीय संस्कृति का अनुपम अवदान समझना चाहिए।

◆

चर्म रोग विशेषज्ञ, सह-समर्पण संस्थापक, गया

जोग, लगन, ग्रह, बार, तिथि, सकल भए अनुकूल

डॉ० राधानन्द सिंह

श्री रामचरितमानस एक ऐसा दिव्य ग्रंथ है, जिसमें श्रुतियोंका सार सिद्धान्त अधिष्ठित है। श्रुति षडाङ्गयुक्त है। अर्थात, इनके छः अङ्ग माने गए हैं- शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द और ज्योतिष। ज्योतिष शास्त्र वेदका नेत्र है। काल निरूपण की दृष्टि से यह भारतीय प्रज्ञा और मनीषा का शीर्षणय शास्त्र है।

गोस्वामी तुलसीदास ने मानस में रामकथा निरूपण में यथास्थान ज्योतिष को दर्शाया है। उन्होंने मानस के अवतार-प्रसंगमें ज्योतिष का विनियोग करते हुए कहा है-

जोग लगन ग्रह बार तिथि सकल भए अनुकूल।
चर अरु अचर हर्षजुत राम जनम सुखमूल।।
नौमीतिथि मधु मास पुनीता।
सुकल पच्छ अभिजित हरिप्रीता।। (मानस 1/1.30 दोहा 1-91/1)

अर्थात् योग, लग्न, ग्रह, दिन और तिथि सभी अनुकूल हो गये। जड़ और चेतन (चराचरमात्र) हर्ष से भर गये। उस समय नवमी तिथि थी, पवित्र चैत्र मास था और पवित्र शुक्लपक्ष था और हरि को प्रिय अभिजित् (मुहूर्त) था। ज्योतिषमें तिथि, वार, नक्षत्र, योग और करण, ये पाँच मिलकर पंचांग होता है। यहाँ 'करण' और 'नक्षत्र' को 'सकल' शब्दमें समाहित कर दिया गया है।

आदिकवि वाल्मीकि ने जन्मकाल की स्थिति को और स्पष्ट करते हुए कहा है -

ततो यज्ञे समाप्ते तु ऋतुनां षट् समत्ययुः।
ततश्च द्वादशे मासे चैत्रे नवमिके तिथौ।।
नक्षत्रेऽदितिं दैवव्यै स्वोश्च संस्थेषु पञ्चसु।
प्रोधमाने जगन्नाथं सर्वलोकनमस्कृतम्।
कौसल्याजनयद् रामं दिव्य लक्षणसंयुतम्।।2।।

(वाल्मीकीय रामायण 1/18/8-10)

अर्थात् यज्ञ-समाप्ति के पश्चात् जब छह ऋतुएँ बीत गयीं, तव बारहवें मास में चैत्रके शुक्लपक्षकी नवमी तिथि को पुनर्वसु नक्षत्र एवं कर्क लग्नमें कौसल्यादेवी ने दिव्य लक्षणों से युक्त, सर्वलोकवन्दित जगदीश्वर श्रीरामको जन्म दिया। उस समय (सूर्य, मङ्गल, शनि, गुरु और शुक्र-ये) पाँच ग्रह अपने उच्च स्थान में विद्यमान थे तथा लग्नमें चन्द्रमा के साथ वृहस्पति विराजमान थे।

इन पाँच ग्रहोंके उच्च स्थान में विद्यमान होने संबंधी ज्योतिषीय मान्यता यह है कि राजसत्ता के स्वामी सूर्य मेषके, शौर्य के स्वामी मंगल मकरके, विवेकके स्वामी गुरू कर्कराशिके, राजश्रीके स्वामी शुक्र मीनके और स्थिरताके स्वामी शनि तुलाके थे। जिसका एक ग्रह उच्च स्थान में हो उसके सभी अरिष्टों का नाश होता है। जिनके दो ग्रह उच्च हों वह सामन्त, तीन उच्च ग्रहोंवाला महीपति, चार ग्रहोंवाला सम्राट् और जिसके पाँचों ग्रह उच्च हों वह त्रैलोक्यनायक होता है। सूर्यके उच्च होने से मनुष्य सेनापति होता है, मङ्गल उच्च होने से वन में राजा, गुरु उच्च होनेसे धनी और राज्याधिपति, शुक्र के उच्च होनेसे राजश्रीको प्राप्त और शनिके उच्च होनेसे राजा के तुल्य होता है। अभिजित मुहूर्तमें जन्म होनेसे मनुष्य राजा होता है- जातोर्त्रभिजित राजा स्यात्। चैत्रमासमें दिनमान और रात्रिमान सम समान होता है जिससे मध्याह्न कालमें अभिजित मुहूर्तका योग बनता है।

वाल्मीकीय और अध्यात्म आदि रामायणों के अनुसार श्री रामावतार सदा पुनर्वसु नक्षत्र में ही होता है। मधुमास, शुक्लपक्ष, नवमी तिथि, मध्याह्न काल और अभिजित मुहूर्त ये सब हरिको प्रिय है- 'हरिप्रीता'। शास्त्रानुसार जब-जब श्री रामवतार होता है तब-तब यही योग रहता है। अत: उक्त दशा शास्त्रीय, पारम्परिक और प्रामाणिक है।

सामान्यत: नवमी तिथि, पुनर्वसु नक्षत्र और मेषके सूर्य कभी एकत्र नहीं होते, परन्तु मानस की उद्घोषणा है- 'सकल भए अनुकूल।' तात्पर्य यह है कि जो ग्रह नक्षत्रादि प्रतिकूल अवस्था में थे वे भी उस समय अनुकूल दिशा में गतिमान हो गये, क्योंकि-'राम जन्म सुखमूल'। गोस्वामी तुलसीदास ने दिव्य राम जन्म का वर्णन करते हुए कहा है कि ब्रहमादि देवता तो गतिशील हो गए परन्तु परब्रह्म श्रीराम के दिव्य आविर्भाव को देखकर अपने कुलको धन्य मानकर अवधपुरी के ऊपर सूर्य एक मासतक ठहर गये। अपनी गति भूल गये। आश्चर्य तो यह कि यह किसी को पता नहीं चला। गोस्वामीजी ने दोबारा लिखा-मास दिवस कर दिवस भा मरम न जानइ कोइ। मानस दोहा 'यह रहस्य काहूँ नहिं जाना।' (मानस 1/1-67)

शिवजीको भी इतना ही ज्ञात हुआ- 'मास दिवस कर दिवस'। कैसे और किस प्रकार हुआ ?वे नहीं जान सके। तब आज के ज्योतिषियों के लिए श्रीराम जन्म के ग्रह-नक्षत्रादिका विश्लेषण कहाँ तक संभव है। गोस्वामी जी ने तो केवल एक सूर्य ग्रह की स्थिति का वर्णन किया है जो मूलकाल निर्धारक है अन्य की गति का क्या कहना ?

महर्षि भृगुने रामावतार के फलादेश को स्पष्ट करते हुए कहा है-कर्कके चन्द्र और गुरु, कन्याके राहु, तुलाके शनि, मकर के मंगलु वृषके बुध, मेषके सूर्य, मीनके शुक्र और केतु-यह वेदसागार योग है। हे भार्गव। वेदसागर में उत्पन्न होनेवाला, पूर्वजन्म में पूर्णब्रहम, स्वयंकर्ता, स्वयं प्रकाश, निरंजन, निर्गुण, निर्विकल्प, निरीह, सच्चिदात्मा, गिराज्ञानगोऽतीत, इच्छानुकूल स्वरूप धारण करनेवाला था। बिना घ्राणके सूँघता था, बिना पैरके चलता था।.....वह महाकालके भी काल हैं।

(मानस पीयूष, बालकाण्ड, खण्ड-3 पृ0 24
के अन्तर्गत मानस 1/1-67/1 के भाष्य से उद्धत)

मानसके श्रीराम उपर्युक्त सभी विशेषणों से युक्त परब्रहमपरमात्मा है। इन सभी विशेषणों का उल्लेख मानस में हुआ है। जिनमें कुछ अधोलिखित है :-

व्यापक ब्रह्म निरंजन निर्गुन बिगत बिनोद
से आज प्रेम भगति बस कौसल्या कें गोद। (मानस 1/198 दोहा)
बिनु पद चलइ सुनइ बिनु काना मानस (1/118/5 दोहा)
ग्रहइ घ्रान बिनु बास असेषा मानस (1/118/7 दोहा)
भुवनेश्वर कालहु कर काला (मानस 5/39 दोहा)

अत: अखिल ब्रह्माण्ड नायक परात्पर परब्रह्म श्रीराम की अवतरण लीलाका ज्योतिषीय विश्लेषण इन्हीं तथ्योंके आधारपर ही किया जाना चाहिए, क्योंकि ज्योतिष कालविधायक शास्त्र है। कालातीत भगवानही कालके रूप में व्यक्त होते हैं। वह अव्यक्त, निर्गुण, निराकार अनन्त ब्रह्म महाकाल के रूप में विश्व को उत्पन्न करता है, पालन करता है तथा अन्त में समस्त प्रपंचको अपने में लीन कर लेता है।

कालका दूसरा रूप पल, विपल, घटी, दिन, रात, पक्ष, मास, ऋतु, अयन, संवत्सर, युग, मन्वन्तर तथा कल्प आदिके रूपमें विभाजित होकर अभिव्यक्त होता है।

गोस्वामी तुलसीदास कालरूप भगवान के दोनों स्वरूपों को समंजित करते हुए लङ्काकाण्ड के

मङ्गलाचरणमें कहते हैं–

लव निमेष परमानु जुग बरष कलप सर चंड।

भजसि न मन तेहि राम को कालु जासु को दंड।। मानस छ मं० दोहा

अर्थात् लव, निमेष, परमाणु, युग, वर्ष और कल्प ही जिनके प्रचंड बाण हैं और काल जिनका धनुष है, उन श्रीरामजी को रेमना! तू क्यों नहीं भजता ?

इस दोहेसे स्पष्ट है कि कालका दूसरा रूप जो कलनात्मक है– लव, निमेष, परमाणु, युग आदि श्रीराम इसके संचालक और नियामक हैं। यहाँ काल को दंड है। अर्थात् श्रीराम कालके धारक और संचालक हैं। कालको कोदण्ड समानगुणों के कारण कहा गया है। धनुष और बाण दोनों कालरूप ही हैं। अन्तर यह है कि एक अचल रहकर दूसरे को संचालित कर देता है। यही गतिशीलता, परिवर्तनशीलता जगतका शाश्वत नियम है।

इस ब्रह्माण्ड में ब्रह्मा, मनुष्य और सूक्ष्म जंतुओं की आयु क्रमशः युग और कल्पसे, दिन, महीना और वर्ष से तथा लव निमेषसे गिनी जाती है। इसीमें सूर्य चन्द्रमा नक्षत्रादिका उदय अस्त होता रहता है। असंख्य वैज्ञानिकों ज्योतिर्विदों के काल विश्लेषण पर गवेषणात्मक निष्कर्षों के पश्चात् भी यह आजतक एक अबूझ पहेली है।

संपूर्ण ज्योतिष शास्त्र कालपर है। यहाँ काल सर्वप्रमुख है। सूर्य सिद्धान्तमें आया है काल लोकों का अन्त करनेवाला है। परन्तु गोस्वामी तुलसीदास ने मानस के लङ्काकाण्डके मङ्गलाचरणमें श्रीरामको कालरूप मतवाले हाथीकेलिए सिंहके सदृश बताया है– कालमतेभ सिंहं। अर्थात् यहाँ श्रीराम को कालके संहारक के रूपमें स्मरण किया गया है।

गोस्वमीजी ने इसका यथार्थ रूप रावण वध में प्रकट किया:–

खैंचि सरासन श्रवण लगि छाड़े सर एकतीस। रघुनायक सायक चले मानहुँ काल मानस 6/102

अर्थात् कानों तक धनुषको खींचकर श्रीरधुनाथजीने इकतीस बाणछोड़े। वे श्री राम चन्द्र जी के बाण ऐसे चले मानों कालसर्प हों।

श्रीराम चरितमानसमें अन्यत्र भी श्रीरामका इस रूपमें वर्णन मिलता है :–

काल व्याल कर भच्छक जोई। सपनेहुँ समर कि जीतिअ सोई।। (मानस 6/56/8)

जाकें डर अति काल डेराई। जो सुर असुर चराचर खाई।। (मानस 5/22/9)

उमा काल मर जाकीं ईछा। सो प्रभु जन कर प्रीति परीछा।। (मानस 6/102/6)

अतः मानसमें श्रीराम कालके नियंता हैं। मृत्युका ग्रास बन जाता है। वहीं श्रीरामके अनन्य पदकमल सेवक कोग (णिंड) भुशुंडिजीके बारे में गरूड़ी कहते हैं :–

नाथ सुना मैं अस सिव पाहीं। महा प्रलयहुँ नास तक नहीं।।

ज्योतिषीय काल गणनाकी दृष्टिसे ब्रहमाके एकदिन बीतनेपर प्रलयहोता है और ब्रहमाकी सौ वर्षकी आयु बीतने पर जो प्रलय होता है, उसका नाम महाप्रलय है। इस महाप्रलयमें भी भुशुण्डिजी नीलगिरिपर निवास करते हैं। क्योंकि कालके भी महाकाल भगवान श्रीराम का वरदान था :–

कबहूँ काल न व्यपिहि तोही। सुमिरेसु भजेसु निरंतर मोही।।

(मानस 0/88 क/1)

अतः गीतामें उल्लिखित गणनाकरने वालों (ज्योतिषियों) में काल मैं हूँ – कालः कलयतामहम (गीता 10/30) तथा अहमेवाक्षयः कालः (गीता 10/33) मैं अक्षयकाल अर्थात् कालका भी महाकाल हूँ। इन दोनों

रूपोंका समन्वितरूप मानस में वर्णित है।

दूसरी ओर काल प्रभावका वर्णन करते हुए गोस्वामी जी कहते हैं :-

अग जग जीवन नाग नर देवा। नाथ सकल जगु काल कलेवा।।

अंड कयह अमित लय कारी। कालु सदा दुरतिक्रम भारी।।

(मानस 6/ 67 क)

अर्थात् काल असंख्य ब्रहमाण्डों को अनायास ही भक्षण कर लेता है। निष्कर्षत: जीवन इसी कालचक्रमें जन्म-जन्मांतर और कल्प-कल्पांतर भ्रमित होता रहता है। अत: न केवल ज्योतिषीय ग्रह-नक्षत्र दोषादिके शमनार्थ वरन युग- युगान्तर और लोक-लोकान्तर के पाप-ताप-संतापसे विमुक्ति हेतु करूणानिधान भगवान श्रीरामके दिव्य नामकेसाथ उनके चरणारविन्दोंका पावन स्मरण (भजन) ही एकमात्र भक्त्यात्मकसन्निधान है।

◆

महामंत्री, गया जिला हिन्दी साहित्य सम्मेलन, गया

विभिन्न तिथियों, नक्षत्रों एवं दिनों में श्राद्ध फल

प्रो० राधे मोहन प्रसाद

सुक्ष्म शरीर होने के कारण पितरों की शक्ति अत्यन्त विशाल बन जाती है, वे शक्ति और सिद्धि के निश्चित स्वरूप बन जाते हैं। उत्तम होने के चलते स्वास्थ्य, वायु, गर्भ आदि के नियंत्रक बन जाते हैं। वे अपनी शक्ति से आने वाली घटनाओं को स्पष्ट रूप से देख सकते हैं। यदि उनकी पूर्ण कृपा रहती है, तो वे अपनी संतानों को ऐसा रास्ता दिखा सकती हैं जिसमें कम से कम बाधाएँ हो। ऐसा कार्य करने की प्रेरणा दे सकते हैं जिससे सम्पूर्ण उन्नति परिवार की हो, व्यक्तित्व में तेज उत्पन्न होती है, जीवन में रस, माधुर्य, और सौन्दर्य घोल सकते हैं। उनके लिए कोई भी कार्य असम्भव नहीं रहता है। आवश्यकता केवल इस बात की है कि पितृगण पूर्ण रूप से प्रसन्न हों और उनकी पूजा, साधना, ध्यान नियमित रूप से किये जायें।

पितृदोष से व्यक्ति, आधि, व्याधि और उपाधि तीनों प्रकार की पीड़ाओं से कष्ट उठाता है। उनके प्रत्येक कार्य में अड़चन आती है। कोई भी कार्य सामान्य रूप से निर्विध्न सम्पन्न नहीं होता। दूसरों की नजर में व्यक्ति सुखी दिखाई पड़ता है पर वह आंतरिक रूप से दुखी होता है। जीवन में कष्ट कम होने का आसार नहीं दिखता। धन-दौलत से भरपूर व्यक्ति भी सन्तान सुख से वंचित रहता है, समय पर लड़की की शादी नहीं हो पाती, ऐसे-ऐसे रोगों से पीड़ित हो जाता है जिसका निदान सम्भव नहीं हो पाता। पितृदोष लगने के कारण जीवन उलझनों और कठिनाइयों से भर जाता है। इसलिए जिस तरह देवताओं को प्रसन कर सब कुछ प्राप्त किया जा सकता है उसी तरह यदि हम अपने मृतजनों को प्रसन्न कर पायें, उनको तृप्त कर पाये, तो उनकी कृपा से हम सभी कुछ पा सकते हैं और यह सब सम्भव है गया श्राद्ध से। पितरों के तारण करने के उद्देश्य से विधिपूर्वक कर्म जो श्रद्धा से किया जाता है उसे श्राद्ध कहते हैं।

'श्रद्धया पितून् उद्दिश्य विधिना क्रियतेयत्कर्म तत्श्राद्धम्।

देशे काले च पात्रे च विधिना हविष च चत्।
तिलैर्दमैश्चय मन्त्रैश्च श्राद्धं स्वाच्छद्धया युतम।।

वैसे तो सम्पूर्ण श्राद्ध तीन पक्षों में पूरा होता है लेकिन जो इसे किसी कारणवश नहीं कर सकते तो वे एक दिन, तीन, दिन या पाँच दिनों में ही तीन वेदी–पाँच वेदी तक श्राद्ध कर सकते हैं। हमारे प्राचीन धर्मग्रन्थों अग्नि स्मृति, कात्यायन स्मृति, वृहस्पति स्मृति, महाभारत, रामायण, वाराह, अग्नि, गरूड़ तथा वायु पुराणादि में गया के महत्व का विस्तार से वर्णन करते हुए कहा गया है कि स्वर्गीय स्त्री–पुरुषों के लिए जो व्यक्ति गया श्राद्ध करता है उसे तो मुक्ति मिलती है करनेवालों को भी अपार सुख सम्पदा की प्राप्ति होती है। जिसका कोई नहीं है उसका गया श्राद्ध करा देने से या स्वयं कर देने से भी बहुत पुण्य मिलता है। यही कारण है कि अपने पूर्वजों की आत्मा की शांति के लिए पिण्डदान, तर्पण आदि करते हैं। वैसे तो गया में श्राद्ध का काम बारहों मास अनवरत चलते ही रहता है, पर विष्णु पुराण के अनुसार आश्विन पितृपक्ष का श्राद्ध अतिश्रेष्ठ एवं उत्तम फल देने वाला होता है, जिसमें पितृगण स्वयं श्राद्ध या तर्पण ग्रहण करने गया आ जाते हैं।

ब्रह्मपुराण ने विभिन्न तिथियों के अन्तर्गत किये जाने वाले श्राद्ध के अलग–अलग फलों का वर्णन किया है। प्रतिपदा तिथि को श्राद्ध करने से घर में अच्छे पुत्र की प्राप्ति होती है। द्वितीया के श्राद्ध से काया, तृतीया में वन्दीजनों से मुक्ति, चतुर्थी में शूद्र, पशु की मुक्ति तथा पंचमी तिथि को श्राद्ध करने से व्यापार में सदा लाभ होता है। नवमी एवं दशमी का श्राद्ध पशुओं की प्राप्ति करवाता है। एकादशी को रजत पदार्थ तथा श्रेष्ठ पुत्रों की प्राप्ति होती है जबकि द्वादशी में सोना–चाँदी एवं त्रयोदशी को कुल श्रेष्ठता प्राप्त होती है। चतुर्दशी को श्राद्ध करने से श्रेष्ठजनों की मित्रता मिलती है। पूर्णिमा तथा अमावस्या को श्राद्ध करनेवाला मनुष्य सभी कामनाओं को प्राप्त करता है।

विभिन्न नक्षत्रों के अन्तर्गत किये जानेवाले श्राद्ध के भी अलग–अलग फल प्राप्त होते हैं। जहाँ कृत्रिका नक्षत्र में श्राद्ध करनेवाला स्वर्ग प्राप्त करता है, वहाँ रोहणी नक्षत्र में संतान तथा मार्गदर्शिका में ब्रह्मतेज की प्राप्ति होती है। आद्रा नक्षत्र में श्राद्ध करनेवाला कार्यों की सिद्धि और सौर्य को प्राप्त करता है। पुनर्वसु नक्षत्र में भूमि तथा पुण्य में लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। श्लेषा नक्षत्र में श्राद्ध करने से सभी तरह की कामनाओं की प्राप्ति और पूर्व फाल्गुनी में पाप का नाश होता है। हस्त नक्षत्र में किये गये श्राद्ध से अपने कुल में श्रेष्ठता तथा चित्रा में बहुत से पुत्रों की प्राप्ति होती है। स्वाति नक्षत्र में व्यापार की सिद्धि तथा विशाखा में बहुमूल्य धातुओं की प्राप्ति होती है। अनुराधा नक्षत्र में श्राद्ध करनेवाले को जहाँ बहुत से लोगों की मित्रता प्राप्त होती है वही मूल नक्षत्र में मुक्ति और पूर्वाषाढ़ में समुद्र तक की सफल यात्रा होती हैं उतराषाढ़ में सभी कामनाओं को सिद्धि जबकि श्रवण नक्षत्र में श्राद्ध करने वे श्रेष्ठता प्राप्त होती है। घनिष्ठा में सभी कामनाओं तथा शतभिषा में परमबल की प्राप्ति होती है। पूर्व भाद्रपद नक्षत्र में श्राद्ध करने से धातुओं और उतराषाड में शुभ ग्रह प्राप्त होता हैं। रेवती नक्षत्र में किये जानेवाले श्राद्ध से बहुत सी गायें तथा अश्विनी में घोड़ों की प्राप्ति होती है। भरणी नक्षत्र में किये गये श्राद्ध से आयु की प्राप्ति होती है।

कूर्मपुराण के अन्तर्गत विभिन्न दिनों में किये जाने वाले श्राद्ध के फलों का भी अलग–अलग फल दिया हुआ है। रविवार के दिन श्राद्ध करने से आरोग्यता, सोमवार को सौभाग्य, मंगलवार को सभी जगह विजय, बुधवार को श्राद्ध करने से सभी कामनाओं की सिद्धि होती है। गुरुवार को श्राद्ध करने से अभीष्ट सिद्धि, शुक्रवार को धन तथा शनिवार से आय की प्राप्ति होती है।

◆

अर्थशास्त्र विभाग, जगजीवन महाविद्यालय, गया

गया के गौरववर्द्धन में चीनी यात्रियों का योगदान

डॉ० राकेश कुमार सिन्हा 'रवि'

पितरेश्वरों की विश्वविश्रुत नगरी गया के इतिहास-निर्माण के सशक्त साक्ष्यों में एक है विदेशी यात्रियों के यात्रा-वृतान्त और उनका विवरण। आदि अनादि काल से भ्रमणशील संस्कृति का मूर्धन्य केन्द्र गया में विविध देशों के परिभ्रमणकारियों का आगमन बना रहा है, जिनमें पड़ोसी देश चीन के यात्री प्रथमासीन है। यह सौभाग्य की बात है कि विभिन्न काल खण्ड में आए विद्वान चीनी यात्रीगणोंने न सिर्फ यहाँ का दर्शन-भ्रमण किया, वरन् यहाँ के उद्धहरणों का चीनी इतिहास-प्रस्तुति के क्रम में उल्लेख भी किया है।

यह तथ्य निर्विवाद सत्य है कि गया विषयक इतिहास का सर्वाधिक उल्लेख धर्मग्रन्थों में है। इतिहास व पुरातत्व से समृद्ध गया की धरती मगध का श्री केन्द्र है और युगों युगों से चीन से सूत्र सम्बन्ध है। भारतीयों ने जिस वृहत्तर भारत की स्थापना की थी उसमें मगध वासियों का महती योगदान था, उसका प्रधान सेतु यही चीन था, जहाँ कुषाण काल तक आते आते एक नहीं, दो मार्गों से जाना सहज हो गया था।

अभी नवशोध व अनुसंधान स्पष्ट कर रहे हैं कि फाह्यान से पूर्व भी विद्वानों की एक जमात चीन से भारत आई थी, पर अधिकारिक रूप से फाह्यान को ही प्रथम चीनी यात्री स्वीकारा जाता है। जिसने 409 ई० में गया की घरती पर अपना कदम रखा। फासान अर्थात् धर्म का आचार्य..... विश्वास किया जाता है कि तथागत के जीवन वृत्त, साधनामय जीवन ओर बौद्ध स्थलों की सटीक व रूही जानकारी प्राप्त करने के उद्देश्य से ही फाह्यान गांधार, तक्षशिला, पुरूषपुर, मथुरा, कान्यकुब्ज, श्रावस्ती, कपिलवस्तु, वैशाली पाटलिपुत्र व राजगृह होते गया आए। ज्ञातव्य है कि तथागत के निर्वाणोपरान्त बोधगया में कितने ही लोग आए पर यहाँ की वास्तु स्थिति का प्रथम अध्येता फाह्यान ही था जिसके यात्रा-वृतान्त स्पष्ट करते हैं कि ठहरे हुए स्थान से चार योजन चलकर गया आए, जहाँ नगर के भीतर कोई ज्यादा चहल-पहल नहीं है। गया में फल्गु के किनारे-किनारे चलते हुए फाहसान का आगमन बोधगया में हुआ। महाबोधि, बोधिद्रुम व विशेषकर मुचलिन्द सरोवर के दर्शनोपरांत पुनः फाह्यान गया आकर मृगदाव (सारनाथ) की ओर प्रस्थान कर गए। फाह्यान तन-मन से पूर्णतयाः बौद्ध होने इस कारण गया की हिन्दूवादी संस्कृति का उल्लेख अपेक्षाकृत कम ही किया।

'यात्रियों का राजकुमार' और 'नीति का पंडित' नाम से इतिहास चर्चित चीनी यात्री हन्वेनसांग ने शीलभद्र संघाराम से चालीस ली की दूरी तय करके करीब 637 ई० में गया बोधगया आया। विवरण है कि कविलवस्तु, कुशीनगर, वाराणसी और सारनाथ भ्रमण दर्शन के बाद ह्वेनसांग का मगध की सीमा में आगमन हुआ था। हवेनसांग के विवरण स्पष्ट करते हैं कि गया नगर एक दुर्भेध स्थान पर था जहाँ केवल हजार से कुछ अधिक ब्राह्मण परिवार बसे हुए थे। ये सभी ऋषियों के वंशज थे और राजा के शासनाधीन नहीं होने पर भी समाज में सम्मान के पात्र थे। हवेनसांग ने गया से तीस ली दूर एक पवित्र व स्वच्छ झरना देखा, जहाँ के स्नान व जल पान से समस्त पापों से मुक्त होकर मनुष्य कांतिमय हो जाता था। हवेनसांग ने अपने विवरण में गयाशिर का रोचक वर्णन किया है। गया शिर जहाँ खड़ा था वहाँ ऊंची-ऊंची सीधी चट्टाने थी, जहाँ से अनवरत झरने गिरते रहते थे। भारत के विभिन्न राज्यों में परम्परा के अनुसार गयाशिर आलौकिक पर्वत कहलाता था प्राचीन काल से ही यह परम्परा रही थी कि राजा महाराजा जब राज्यारोहण के उपरांत दूर-दूर तक सुशासन-व्यवस्था स्थापित कर लेते थे और पूववर्ती राजवंशों में अधिक शुभ कार्य कर लेते थे तब वे गयाशिर का आरोहण ईश्वर

की पूजा करते हुए अपनी उपलब्धियों की घोषणा करते थे। गयाशिर की चोटी पर दिव्य शक्तियाँ सन्निहित थी तभी तो राजा अशोक का भी यहाँ पदार्पण हुआ है।

ध्यान देने की बात है कि गया की तीर्थ परम्परा की विशेषताओं का इस जमाने तक रेखांकन होने से यहाँ की तीर्थवृत्ति का प्रसार प्रसार पूरे देश में हुआ जिसमें ह्वेनसांग के यात्रा विवरण स्वर्णिम अतीत के यौन गवाह हैं।

गया आने वाले चीनी यात्री द्वय फाह्यान ओर ह्वेनसांग की चर्चा पूर्ववर्ती इतिहासकारों व लेखकों ने भी किया है। पर यह कटु सत्य है कि गया की सरजमीं पर चीनी यात्री इत्सिंग का भी कदम पड़ा है, जिसका उल्लेख अपेक्षा कृत कम हुआ है। चीनी यात्री इत्सिंग का आगमन 675 ई से 695 ई के मध्य पश्चिमोत्तर भारत में हुआ। पर इन्होंने मगध की पर्याप्त यात्रा की। इत्सिंग अपने विवरण में गया–बोधगया को धर्म–भूमि के रूप में रेखांकित किया है और नालन्दा में संस्कृत अध्ययन के दौरान कम से कम तीन बार गया–बोधगया की यात्रा की। इत्सिंग के जमाने में गया का पितृ महोत्सव का नाम पूरे देश क्या बाहर–बाहर भी था। सातवीं शताब्दी के अंत में एक चीनी यात्री मा–त्वने– लिन की चर्चा मिलती है जिसने पूर्वी भारत में नालन्दा–बोधगया का दर्शन किया पर गया विषयक उल्लेख का सर्वथा अभाव है।

बाद के समय में भी गया–बोधगया के दर्शनार्थ चीनी यात्रियों का गया आगमन का क्रम बना रहा और नए जमाने में खासकर अंग्रेजों के जमाने में एक नई दिशा मिली। गया का बौद्धकालीन महातीर्थ बोधगया में महाबोधि विहार के पास ही 1945 में बना चीनी बौद्ध मंदिर (महाबोधि चाइनिज टेम्पुल) इण्डो–चीनी शैली का उत्कृष्ट उदाहरण है, जो पैगोड़ाशैली में ऊँचे प्लेटफार्म पर निर्मित है और जहाँ गर्भगृह के विशाल पाठपीठ पर तीन–तीन मुद्रा में तथागत के विग्रह दर्शनीय हैं। इस मंदिर की मूर्ति चीन से आई है। 1972 में इसका नवघृंगार हुआ। यहाँ के प्रथम प्रधान Master Wugain और वर्तमान प्रधान Master Rizhao है। यहाँ के कार्यालय से मिली सूचना से स्पष्ट होता है कि आज भी चीनी पर्यटकों की पहली पसन्द बोधगया है जहाँ वर्ष भर में दस हजार से अधिक चीनी यात्रियों का आगमन होता है।

अस्तु! भारत चीन संबंध के पुरातन स्थलों में एक है गया, जो मागधी सभ्यता संस्कृति का मुख्य केन्द्र है। तभी तो चीनी जन जीवन व सभ्यता संस्कृति में मागधी संस्कृति के कुछ–कुछ का दर्शन आज भी होता है।

◆

'आखिलेशायन', गोदावरी (भैरोस्थान) गया
मो० – 09934463552

गया तीर्थ का अंधकार युग

डॉ० शत्रुध्न दांगी

हिन्दुओं के प्रसिद्ध तीन तीर्थ गया, काशी और प्रयाग में गया तीर्थ का प्रथम स्थान आता है। यह तीर्थ मुख्य रूप से गया गदाघर और विशाल सूर्य प्रतिमा के दर्शन तथा प्राणिमात्र के आवागमन से मोक्ष दिलाने के लिए 382 वेदियों की परिक्रमा, दान, तर्पण व श्राद्ध कर्म करने के लिए प्रसिद्ध था। इस तीर्थ की अपनी एक विशेषता भी थी कि यह तीर्थ अर्द्ध चन्द्राकार आकृति में शोभित था। पश्चिम में प्राचीन नदी सोन से लेकर पूरब में राजगृह और दक्षिण में कोल्ह गिरि कोलाहल पर्वत (कौलेश्वरी पहाड़) से लेकर उत्तर में पुनपुन नदी तक फैला परिक्रमा क्षेत्र था।

इस तीर्थ को प्राचीन ऋषियों में लोमस, व्यास, परासर, दुर्वासा, श्रृंगी, च्यवन और वाल्मीकि के अलावा भगवान महावीर, गौतम बुद्ध, महाप्रभु चैतन्य, रामकृष्ण परमहंस जैसे महापुरूषों ने भी अपने ज्ञान-ज्योति से आलोकित किया है।

ई०पू० 6ठीं शताब्दी में कपिलवस्तु के राजा शुद्धोदन के पुत्र सिद्धार्थ जब गृह त्याग कर बुद्धगया में अश्वत्यवृक्ष के नीचे ज्ञान की प्राप्ति की तक वे ''बुद्ध'' कहलाये और अश्वत्थवृक्ष बोधिवृक्ष तथा यह स्थल बुद्ध गया कहलाया। तब से इस स्थल की महिमा विश्व स्तर पर शान्ति मार्ग के अग्रदूत रूप में ख्यात हुआ। करीब एक हजार वर्षो तक यह स्थल शान्ति और बौद्ध धर्म के रूप में फलता-फूलता रहा। यहाँ विश्व का एकमात्र पिरामिडनुमा गुप्त कालीन मंदिर निर्माण कला का श्रेष्ठ नमूना के रूप में 170 फुट ऊँचा महाबोधि मन्दिर विद्यमान है। यह स्थल विश्व में समस्त बौद्ध धर्मावलम्बियों का सर्वाधिक पूजित, आस्था एवं श्रद्धा का केन्द्र माना जाता हैं। बौद्ध विहारों का यहाँ बाहुल्य होने के कारण ही प्राचीन जमाने में किकट और व्रात्य कहा जाने वाला यह प्रदेश आज 'बिहार' कहलाया किन्तु आठवीं नवमी शताब्दी में आचार्य कुमारिल भट्ट और आद्य शंकराचार्य ने बौद्ध धर्म को नास्तिकवाद की संज्ञा देते हुए भारत से बौद्ध धर्म को विदा करने में सफल रहे। महाविहारों की जगह मठों का निर्माण करवाया। परन्तु भगवान बुद्ध चूँकि जन-जन के पूजित देवता थे, अतएव उन्हें छह बुद्धों के बाद सप्तम बुद्ध के रूप में हिन्दुओं का देवता मानकर उनके बोधगया स्थित अश्वथ (पीपल) वृक्ष को गया-श्राद्ध महात्म्य में शामिल कर भक्तिपूर्वक पूजा, दर्शन एवं पिंडदान का विधान बनाया।

किन्तु यह सिलसिला अधिक दिनों तक नहीं चली। भारत में मुसलमानों का आक्रमण हुआ। 10-11 वीं शताब्दी में महमूद गजनवी से लेकर मुहम्मद गोरी तक ने अनेक आक्रमण कर अंततः दिल्ली में मुसलमानों का राज्य स्थापित कर लिया। इसके पूर्व शक, हूण, यूनानी आदि ने भी आक्रमण किये किन्तु उन दिनों भारतीय शासकों में एकता एवं वीरता के सामने वे या तो पराजित होकर वापस चले गये अथवा वे भारत में ही भारतीयों के बीच रच-बस कर विलीन हो गए।

इस बीच गयापालों के बीच के ही सीताराम चौधरी के पुत्र चौधरी शहरचन्द जिन्हें कोई संतान नहीं थी, वे अपनी कला और बुद्धिमता से औरंगजेब की फारस की शाहजादी दिलराज बानो बेगम को प्रभावित कर औरंगजेब द्वारा स्वयं मुस्लिम धर्म स्वीकार कर आलमगीरपुर (मुस्लिम जमाने का गया) से चार हजार बीधे की जागीर इनाम में ले ली। तत्कालीन शाही प्रशासन ने बादशाह औरंगजेब का फरमान पाकर उन्हें जागीर कब्जा करवा दिया। इसकी सीमा दक्षिण में घुघरीटांड़, वैतरणी और ब्रह्म सरोवर उत्तर में मुरारपुर पश्चिम में चिरैयांटांड़ और पूरब में फल्गु नदी का क्षेत्र आता है।

वर्तमान गया का इतिहास यहीं से प्रारंभ होता है। पूर्व में मात्र यह जो तीर्थ स्थल था, जहाँ गया गदाधर, सूर्य तथा कृष्ण द्वारका के दर्शन, पूजन और प्रणाम निवेदित करने यात्री आते थे, उनका कोई यहाँ वास स्थल नहीं था। यह देवताओं की नगरी मानी जाती थी। यहाँ कोई ऐसा स्थल नहीं जहाँ तीर्थ न हों- ''गयायां न हि तत्स्थानं यत्र तीर्थ न विधते।'' यहाँ के सभी कृत्य सूर्य की उपस्थिति में ही होते हैं। सूर्यास्त के पश्चात् भगवान विष्णु को प्रणाम निवेदित कर उन्हें विधिवत् शयन करा देने का विधान है।

◆

निदेशक, सांस्कृतिक अनुसंधान केन्द्र
दाँगीनगर (लाव), टिकारी (गया)
मो०-9430607530

श्राद्ध का अधिकार महिलाओं को भी ?

श्री अनिल सक्सेना

श्राद्ध करने के लिए मनुस्मृति और ब्रह्मवैवर्तपुराण जैसे सभी प्रमुख शास्त्रों में यही बताया गया है कि दिवंगत पितरों के परिवार में या तो ज्येष्ठ पुत्र या कनिष्ठ पुत्र और अगर पुत्र न हो तो धेवता (नाती), भतीजा, भांजा या शिष्य ही तिलांजलि और पिंडदान देने के पात्र होते हैं। कई ऐसे पितर भी होते हैं, जिनके पुत्र संतान नहीं होती है या फिर जो संतान हीन होते हैं। ऐसे पितरों के प्रति आदर पूर्वक अगर उनके भाई, भतीजे, भांजे या अन्य चाचा (ताऊ) के परिवार के पुरूष सदस्य पितृपक्ष में श्रद्धापूर्वक व्रत रखकर पिंडदान, अन्नदान और वस्त्रदान करके ब्राह्मणों से विधिपूर्वक श्राद्ध कराते है तो पीड़ित आत्मा को मोक्ष मिलता है।

एक और अहम सवाल है कि आम तौर पर आजकल के विछिन्न पारिवारिक परिस्थितियों में क्या महिलाएं भी श्राद्ध कर सकती है या नहीं इस प्रश्र को भी उठाया जाता रहा है। परिवार के पुरूष सदस्य या पुत्र पौत्र, नहीं होने पर कई बार कन्या या धर्मपत्नी को भी मृतक के अन्तिम संस्कार करते या मरने के बाद एसी श्राद्ध करते देखा गया है। परिस्थितियों के अनुसार यह एक अन्तिम विकल्प ही है, जो अब धीरे-धीरे चलन में आने लगा है। इस मामले में धर्मसिन्धु सहित मनुस्मृति और गरूड़ पुराण भी आदि ग्रन्थ भी महिलाओं को पिण्डदान आदि करने का अधिकार प्रदान करती है। अतीत के समय में शंकराचार्यों ने भी इस प्रकार की व्यवस्थाओं को तर्क संगत बताया है कि श्राद्ध करने की परंपरा जीवित रहे और लोग अपने पितरों को नहीं भूलें। अन्तिम संस्कार में भी महिला अपने परिवार/पितर को मुखाग्नि दे सकती है।

महाराष्ट्र सहित कई उत्तरी राज्यों में अब पुत्र/पौत्र नहीं होने पर पत्नी, बेटी, बहिन या नातिन ने भी सभी मृतक संस्कार करने आरंभ कर दिये। काशी आदि के कुछ गुरूकुल आदि की संस्कृत वेद पाठशालाओं में तो कन्याओं पांडित्य कर्म और वेद पठन की ट्रेनिंग भी दी जा रही है। इसमें महिलाओं को श्राद्ध करने कराने का प्रशिक्षण भी शामिल है।

वैदिक परंपरा के अनुसार महिलाएं यज्ञ अनुष्ठान, संकल्प और व्रत आदि तो रख सकती है, लेकिन श्राद्ध की विधि को स्वयं नहीं कर सकती है। विधवा स्त्री अगर संतानहीन हो तो अपने पति के नाम श्राद्ध का संकल्प रखकर ब्राह्मण या पुरोहित परिवार के पुरूष सदस्य से ही पिंडदान आदि का विधान पूरा करवा सकती है। इसी प्रकार जिन पितरों के कन्याएं ही वंश परंपरा में हैं तो उन्हें पितरों के नाम व्रत रखकर उसके दामाद या धेवते, (नाती) आदि ब्राह्मण को बुलाकर श्राद्धकर्म की निवृत्ति करा सकते हैं। साधु सन्तों के शिष्य गण या शिष्य विशेष श्राद्ध कर सकते हैं।

क्या कहते हैं प्राचीन शास्त्र, पुराण ओर स्मृतिग्रन्थ :-

किसी भी मृतक के अन्तिम संस्कार और श्राद्धकर्म की व्यवस्था के लिए प्राचीन वैदिक ग्रन्थ गरूडपुराण में कौन-कौन से सदस्य पुत्र के नहीं होने पर श्राद्ध कर सकते है, उल्लेख अध्याय 11 के श्लोक संख्या 11,12,13 और 14 में विस्तार से किया गया है जैसे:.....

पुत्राभावे वधु कूर्यात..... भार्याभावे च सोदनः!
शिष्यो वा ब्राह्मणः सपिण्डो वा समाचरेत!!
ज्येष्ठस्य वा कनिष्ठस्य भातृःपुत्र : पौत्रके!
श्राध्यामात्रदिकम कार्य पुत्रहीनेत खगः!!

अर्थात ज्येष्ठ पुत्र या कनिष्ठ पुत्र के अभाव में बहू पत्नी को श्राद्ध करने का अधिकार है। इसमें ज्येष्ठ पुत्री या एकमात्र पुत्री भी शामिल है। अगर पत्नी भी जीवित न हो तो सगा भाई अथवा भतीजा भांजा नाती पोता आदि कोई भी यह कर सकता है। इन सबके अभाव में शिष्य, मित्र, कोई भी रिश्तेदार अथवा कुलपुरोहित मृतक का श्राद्ध कर सकता है। इस प्रकार परिवार के पुरूष सदस्य के अभाव में कोई भी महिला सदस्य व्रत लेकर पितरों का श्राद्ध तर्पण और तिलांजलि देकर मोक्ष कामना कर सकती है।

जब सीता ने किया पिण्डदान

वाल्मीकि रामायण में सीता द्वारा पिंडदान देकर दशरथ की आत्मा को मोक्ष मिलने का संदर्भ आता है। वनवास के दौरान भगवान राम लक्ष्मण ओर सीता पितृपक्ष के दौरान श्राद्ध करने के लिए गया धाम पहुँचे। वहाँ श्राद्ध कर्म के लिए आवश्यक सामग्री जुटाने हेतु राम और लक्ष्मण नगर की ओर चल दिए। उधर दोपहर हो गई थी पिंडदान का समय निकलता जा रहा था और सीता जी की व्यपता बढ़ती जा रही थी। अपराह्न में तभी दशरथ की आत्मा ने पिंडदान की मांग कर दी। गया जी के आगे फल्गु नदी पर अकेली सीता जी असमंजस में पड़ गई। उन्होंने फल्गु नदी के साथ वटवृक्ष, केतकी के फूल और गाय को साक्ष मानकर बालू का पिंड बनाकर स्वर्गीय राजा दशरथ के निमित्त पिंडदान दे दिया। थोड़ी देर में भगवान राम और लक्ष्मण लौटे तो उन्होंने कहा कि समय निकल जाने के कारण मैंने स्वयं पिंडदान कर दिया। बिना सामग्री के पिंडदान कैसे हो सकता है, इसके लिए राम ने सीता से प्रमाण मांगा। तब सीता जी ने कहा कि यह फल्गु नदी की रेत, केतकी के फूल, गाय और वटवृक्ष मेरे द्वारा किए गए श्राद्धकर्म की गवाही दे सकते हैं। इतने में फल्गु नदी, गाय और केतकी के फूल तीनों इस बात से मुकर गए। सिर्फ वटवृक्ष ने सही बात कही। तब सीता जी ने दशरथ का ध्यान करके उनसे ही गवाही देने की प्रार्थना की। दशरथ जी ने सीता जी की प्रार्थना स्वीकार कर घोषणा की ऐन वक्त पर सीता ने ही मुझे पिंडदान दिया। इस पर राम आश्वस्त हुए लेकिन तीनों गवाहों द्वारा झूठ बोलने पर सीता जी ने उनको क्रोधित होकर श्राप दिया कि फल्गु नदी–जा तू सिर्फ नाम की नदी रहेगी, तुझमें पानी नहीं रहेगा। इस कारण फल्गु नदी आज भी गया में सूखी रहती है। गाय को श्राप दिया कि तू पूज्य होकर भी लोगों का जूठा खाएगी और केतकी के फूल को श्राप दिया कि तुझे पूजा में कभी नहीं चढ़ाया जाएगा। वटवृक्ष को सीता जी का आशीर्वाद मिला कि उसे लंबी आयु प्राप्त होगी और वह दूसरों को छाया प्रदान करेगा तथा पतिव्रता स्त्री तेरा स्मरण करके अपने पति की दीर्घायु की कामना करेगी।

◆

सेवानिवृत शाखा प्रबन्धक, भारतीय स्टेट बैंक
श्री राधा सदन, 273, अनुग्रहपुरी कॉलोनी, गया

दुर्लभ कितने हैं

सिंहन के लहँड़े नहीं, हंसन की नहिं पाँत।
लालन की नहिं बोरियाँ, साधु न चले जमात।।

पितृपक्ष एक पर्व है

श्री राम वचन सिंह

पितृपक्ष के नियमों के अनुकूल या प्रतिकूल किसी भी परिस्थिति में प्रकृति के सभी रचनाओं में अनुशासन को एक सूत्र में बाँधने की क्रिया को धर्म-स्वरूप बनाया गया है। पितृपक्ष एक धार्मिक अनुष्ठान है, जो पूरे समाज एवं देश में धर्म के प्रति आस्था का संचार करती है। धर्म में तर्क नहीं होता लेकिन, मार्गदर्शन के लिए तर्क का उपयोग होता है।

माता-पिता के मोक्ष की कामना करते हुए श्राद्ध की प्रक्रिया को धर्म के साथ जोड़ा गया और यह पूर्णरूपेण आस्था पर आधारित है पितृपक्ष के बाद मातृपक्ष आता है। जिसे हमलोग दशहरा के रूप में मनाते हैं इस समुद्र रूपी संसार में बिना पिता और माता के न कुछ हो सकता है और न इसके परे कोई परिकल्पना की जा सकती है। अत: इस संसार में चलने के लिए माता पिता का होना अनिवार्य है, क्योंकि संस्कारो का निर्माण इन्हीं के द्वारा होता है। गीता को लिखते समय श्री वेदव्यास मुनि ने पहली पंक्ति में, ''त्वमेव माता च पिता त्वमेव'' लिखा है। क्योंकि इस समुद्र रूपी संसार में रहने, चलने और सभी कर्मो में उनकी उपस्थिति या स्मरण से उत्पन्न भाव ही मार्ग निर्देशन करती है एवं कोई भी गलती सुधारने का प्रयास होता है। इसलिए वेदव्यास ने उपरोक्त पंक्ति को लिखा। इतना ही नहीं रामायण काल में भी पिता एवं माता की प्रधानता की व्याख्या स्थान-स्थान पर की गई है। अत: आज के कलियुग में उपेक्षा के भाव को अपेक्षा में बदलना होगा तभी पितृपक्ष के श्राद्ध में किया हुआ कर्म फलीभूत होगा। साथ ही देश, समाज, व्यक्ति, धर्म आस्था एवं संस्कार से पूरिपूर्ण होकर सुन्दर महसूस करेंगे। शेक्सपीयर ने भी माता-पिता के प्रति श्राद्ध की व्याख्या करते हुए कहा है कि ''पिता अगर पुत्र को कुछ देता है तो पुत्र हँसता है। और पुत्र अगर पिता को कुछ देता है तो दोनों रोते हैं''। इसका तात्पर्य है कि पिता के द्वारा दिया हुआ कोई भी क्रिया उसके संस्कार के निर्माण में सहायक होती है। और जब पुत्र उसका अनुसरण करते हुए अपने पिता को दिखाता है तो दोनों के आँखों से खुशी की बूंदे टपक पड़ती है। आगे भी बहुत सी कथाओं की जानकारी जानने पर यह महसूस होता है कि दुरात्मा पिता को भी अपने धर्म, आस्था, संस्कारों के द्वारा ईश्वर के हाथों में पिता को सौंप देता है। और साक्षात् ईश्वर के द्वारा प्राप्त मृत्यु मोक्ष कहलाता है। जैसे - प्रहलाद और हिरण्यकथ्यप की कथा जानने पर पुत्र की इस क्रिया का बोध होता है। दूसरी ओर पिता भी इसी धर्म आस्था संस्कारों के लिए अन्यायी दुराचारी रावण के अंत के लिए प्राण का त्याग करते हुए अपनी पुत्र राम को बनवास जाने की आज्ञा देते हैं। ये दोनों बातें पिता एवं पुत्र के धर्म आस्था एवं संस्कारों को कर्तव्य में बाधता है। इस प्रक्रिया में पुत्री भी उतना ही महत्व रखती है जितना कि पुत्र, क्योंकि सीता जी ने ही राम को अनुपस्थित रहने पर दशरथ जी को पिण्डदान किया। अत: हमारे पूर्वजों ने एवं ऋषि मुनियों ने भी पितृपक्ष पर्व का निर्माण किया ताकि समाज, देश, व्यक्ति सभी कर्तव्य बने रहे और सभ्य समाज चलता रहे। यही पितृपक्ष का उद्देश्य एवं महता है। हर व्यक्ति को जीवन काल से ही माता-पिता के प्रति श्रद्धा पूर्वक उनकी महता एवं सामर्थ्य के अनुसार सेवा भाव रखना ही आगे चलकर श्राद्ध के रूप में बदल जाता है।

◆

खरहरी कोठी, मानपुर, गया

सनातन धर्म में श्राद्ध की महत्ता

श्री मनीष कुमार

अपौरुष्य त्रिकालसत्य, सनातन वेद तथा वेदानुगामी सद्शास्त्रों के द्वारा प्रवर्त्तित धर्म, सनातन धर्म शब्द से अभिहित हुआ है, जिसमें कर्म, ज्ञान तथा उपासना का मानव कल्याणार्थ सांगोपांग वर्णन मिलता है। लेकिन सामान्यजन मानस में वेद वर्णित कर्मकाण्ड ही अनुक्षण व्याप्त है। अर्थात आत्मकल्याणार्थ मानवशारीरधारी विद्वान कर्मकाण्ड का ही अधिकाधिक समाश्रयण करते हैं। वेद प्रवर्त्तित सनातन धर्म का सांगोपांग स्वस्थचित्त तथा निष्पक्ष भाव से विचार करने पर अधिगत होता है कि यह (सनातन धर्म) कृतज्ञता धर्म है, इसमें वर्णित विधि-प्रविधियों पर दृष्टिपात करें, तो सहज ही अवगत होंगे कि जिनसे हमारा उपकार हुआ है, उनके प्रति कृतज्ञता स्वरुप मानसिक-वाचिक-तथा क्रियात्मक रूप से अपनायी गई शास्त्रीय विधियाँ सनातन धर्म की प्रायौगिक स्वरुप हैं-

''कृतेषु प्रतिकर्त्तव्यम् एवं धर्मः सनातनः'' वाल्मीकि सुन्दरकाण्ड की यह श्रीहनुमद् उक्ति उपर्युक्त तथ्यों को प्रमाणित करती है। सनातन धर्मावलंबियों का अटूट विश्वास है कि मनुष्य के ऊपर मातृगर्भ में अवस्थिति काल से ही देव-ऋषि तथा पितृ ये तीन ऋण हुआ करते हैं। मनुष्यों की इस अधमता की निवृत्ति हेतु मानसिक-वाचिक तथा कायिक समस्त प्रयास ही सनातन धर्म की प्रवृत्तिया कही जा सकती हैं। अर्थात् उपर्युक्त देव-ऋणि तथा पितृऋण से निवृत्ति के लिए मनुष्य वेदों तथा तन्मूलक शास्त्रों के द्वारा प्रतिपादित आत्मकल्याणार्थ यज्ञदानादि विधियों का सम्पादन करता है। देवताओं तथा ऋषियों की तरह पितरों का भी मनुष्यों की लौकिक अपुन्नति तथा पारलौकिक पथ की पुष्टि में महत्त्वपूर्ण योगदान है।

अत: देव तथा ऋषिऋण की तरह पितृऋण का भी मनुष्य आजन्मऋणी है।

उपर्युक्त ऋणों से निवृत्ति हेतु ही करुणावश परम पिता परमेश्वर के शब्दमय स्वरुप वेदों तथा सद्ग्रन्थों में इनके निमित्त श्राद्ध का विधान किया गया है।

पितरों तथा अन्यान्य बन्धु-बाधवों सगे-सम्बन्धियों के लिए पुत्रादि पारिवारिकजनों के द्वारा श्रद्धापूर्वक कीजाने वाली तर्पण-पिण्ड-दान, होम, ब्राह्मणभोजनादि समस्त क्रियायें शास्त्रों में श्राद्ध शब्द से अभिहित है- **''श्रद्धयाकृतं सम्पादितम् ड़दम् अथवा श्रद्धया दूसरी लाड़त में दीयते भस्मात् तच्च श्राद्धम्''** अर्थात् अपने मृत पितृगण के उद्देश्य से श्रद्धापूर्वक किये जानेवाले कर्मविशेष को श्राद्ध कहते हैं।

वेद वर्णित काण्डत्रय में कर्मकाण्ड के अन्तर्गत विविध यज्ञों की अनुष्ठान पद्धतियाँ है, जिनमें पितृपक्ष का भी महत्वपूर्ण वर्णन किया गया है। इस पितृयज्ञ का ही अपरनाम या वाच्यार्थ श्राद्ध है। शास्त्रों में कहा गया है कि-

प्रेतान् पितनत्यु द्विश्य भोज्यं भत्प्रियमात्मनः।
श्रद्धया दीयते भत्तु तच्छ्राद्धं परिकीर्तितम्।।

मनुष्यों के द्वारा क्रियामाण समस्त वैदिक कर्म धर्मशास्त्रों, पुराणों, ग्रहयसूत्रों, तथा स्मृतियों के द्वारा नित्य-नैमितिक तथा काम्य के भेद से तीन हैं तो, श्राद्ध को भी इन्हीं तीन श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है।

यद्यपि भविष्य पुराण में-

नित्यंनैमित्तिकं काथ्यं वृद्धिश्राद्धं सपिण्डनम्।
पार्वणं चेति विज्ञेयं गोष्ठरूयां शुद्धरूयर्थमष्मम्।।
कर्माङ्ग नवमं प्रोक्तं दैविकं दशमं स्मृतम्।
यात्रास्वेकादर्श प्रोक्तं पुष्टरयर्थं द्वादशों स्मृत्।।

इस वचन के अनुसार श्राद्ध के बारह भेद वर्णित हैं, किंतु उपर्युक्त सभी प्रकार के श्राद्ध श्रोत और स्मार्त्त के भेद से दो प्रकार के हैं-

''अमावस्यायां पिण्ड पितृयाग:'' इस वचन के अनुसार अमावस्या तिथि को पिण्डपितृमाज्ञ जिसमें अग्निहोतृ का ही अधिकार है, को श्रौत श्राद्ध कहते हैं और एकोदृष्ट, पार्वण, तथा तीर्थ श्राद्ध से लेकर मरण तक के श्राद्ध को स्मार्त्तश्राद्ध कहते हैं श्रौत श्राद्ध में केवल श्रुतिप्रतिपादित मन्त्रों का प्रयोग होता है और स्मार्त्तक्ताद्ध में वैदिक-पौराणिक तथा तान्त्रिक मंत्रों का प्रयोग होता है। इन्हीं श्राद्धों में पितृभूमि गया में किये जानेवाले तर्पण, पिण्डदान, ब्राह्मणभोजनादि के रूप में गयाश्राद्ध भी शास्त्र वर्णित है।

श्रीमद् देवी भागवत के-

जीवतो वाक्यकरणात् क्षयाहेभूरिभोजनात्।
गायाय पिण्डदानाच्च त्रिभिः पुत्रस्य पुत्रता।। 6-4-15।।

इस श्लोक से इसकी महत्ता पूर्ण प्रतिपादित है।

गया धाम पितृतीर्थ के रूप में लोक विश्रुत है। पितरों के निमित्त पिण्डदानादि श्राद्ध के लिए इसका विशेष महत्त्व है यह ''पितृणांचाति वल्लभम्'' (कू०पु०उ०वि० 34/17) इस वचनानुसार यह गया पितरों के लिए अत्यन्त प्रिय है एवं पितरगण यहाँ नित्य-निवास करते हैं। उनकी बद्धमूल आस्था है कि कोई पुत्र गया जाकर तर्पणादि के द्वारा दु:खसागर से हमारा उद्धार करेगा। यदि ऐसा नहीं हो सका, तो गया तीर्थ में उसके पैरों से स्पर्श जल से भी मेरा उद्धार हो जायेगा, यह विचार वायुपुराण में वर्णित है। शास्त्रों की ऐसी मान्यता है कि मनुष्यों को एकाधिक पुत्रों की अभिलाषा इसलिए होती है, कि उनमें से कोई एक तो गया श्राद्ध कर सकेगा।

अपनी सन्ततियों को गयातीर्थ में आये हुए देखकर पितृगण अत्यन्त प्रसन्न होकर उत्सव मनाते हैं-

''गया प्राप्तं सुतं दृष्ट्वा पितृणामुत्सवो भवेत्'' (वायु० पु० 105-9) मगध क्षेत्र में एक सर्वविश्रुत लोकोक्ति है-

''माता पिता कुल तारण को, जो गया न गया वह कही न गया''।।

''गृहाच्चलित मात्रेण गयायां गमनं प्रति।
स्वर्गारोहण सोपानं पितृणां च पदे-पदे।।
(वायु० पु० 105-31)

इस वायुपुराणीय वचनानुसार पितरों के निमित्त गया श्राद्ध के लिए घर से प्रस्थान किये हुये श्राद्ध कर्त्ता का एक-एक पद गमन पितरों के लिए स्वर्गगमन का सोपान बन जाता है, इससे पितरों का उद्धार तो होता ही है। श्राद्धकर्त्ता का भी परमकल्याण हो जाता है-

''निष्कृति: श्राद्धकर्तृणां ब्रह्मणा गीयते पुरा''। क्योंकि गया में पितृदेव के रूप में स्वयं भगवान विष्णु विराजमान हैं उन कमलनयन भगवान गदाधर का दर्शन कर देव, ऋषि तथा पितृ तीनों ऋणों से मुक्ति मिल जाती है-

''गयायां पितृरूपेण स्वयमेव जनार्दनः।
तं दृष्ट्वा पुण्डरीकाक्षं मुच्चते वै ऋणत्रयात्।।
(अग्नि पु० /16/10-11)

पहले श्राद्ध के प्रति मनुष्यों में जैसी श्रद्धा और भक्ति थी, वैसी अभी नहीं है।

आजकल अधिकांश लोग इस पितृकर्म को व्यर्थ समझकर उपेक्षा करते हैं, जो थोड़े लोग करते भी हैं, उनमें 99% केवल रस्मरिवाज की दृष्टि से ही श्राद्ध करते हैं। कुछ लोग पितृदोष के कारण सन्तानबाधा या अन्यान्य विपत्तियों के निवारणार्थ गया श्राद्ध की कारणता पितृदोष निवृत्ति में समझते हैं। लेकिन, वास्तविकता तो यह है कि प्रत्येक मनुष्य को अपने अनिवार्य कर्त्तव्य की दृष्टि से पितृयज्ञरूप गया श्राद्ध का अनुष्ठान करना चाहिए, जिससे स्वाभाविक रूप से पितृदोष से निवृत्ति हो सके।

अत: प्रत्येक मनुष्य का अपने पितरों के प्रति कृतज्ञता स्वरूप सनातन धर्म के रक्षार्थ एक बार गया आकर पितृपूजन अवश्य अनुष्ठेय है।

जयतु गयाधामम्

लक्खीबाग, मानपुर, गया

संस्कृत मूला भारतीय संस्कृति

डॉ० वेंकटेश शर्मा

भारतीय संस्कृति वैदिक संस्कृति का पर्याय है। वेद तथा वेदमूलक संपूर्ण शास्त्र जो भारतीय संस्कृति के स्वरूप निर्धारक या मापदण्ड हैं वे सबके सब संस्कृत भाषा में निबद्ध हैं। इनका कार्य अथवा प्रसार क्षेत्र सागर की अतल गहराई की तरह अपार है।

संस्कृत और संस्कृति शब्द की बनावट में भी अद्‌भूत साम्य है, इस ओर पाठकों का ध्यानाकर्षण कोई विषयान्तरण नहीं होगा यह मेरा मानना है।

सम् उपसर्ग पूर्वक 'कृ' धातु से भूषण अर्थ में 'सुट का आगम कर' क्तिन' प्रत्यय करने से 'संस्कृति' शब्द तथा 'क्त' प्रत्यय करने पर 'संस्कृत' शब्द निष्पन्न होता है। भूषण भूत सम्यक् कृति संस्कृति शब्द का व्युत्पत्यर्थ है।

अत: भूषण भूत सम्यक् कृति चेष्टा या क्रिया ही संस्कृति कही जा सकती है।

वपुधारी जीवमात्र की दो श्रेणियाँ है-

शास्त्रीय तथा अशास्त्रीय। जिन शरीरधारी जीवों की चेष्टाएँ सम्यक-असम्यक् रूप से शास्त्र विभाजित नहीं है वे अशास्त्रीय प्राणि है। उनके लिए शास्त्रीय अनुशासन मान्य नहीं है। इसके विपरीत मानव शरीरधारी जीव शास्त्रीय प्राणि है अत: मनुष्य की भूषणभूत सम्यक कृति या चेष्टा संस्कृति है। जिन चेष्टाओं के द्वारा मनुष्य अपने जीवन के समस्त क्षेत्रों में उन्नति करता हुआ सुख-शांति प्राप्त करता है वे चेष्टाएँ हीं उसके लिए भूषणभूत चेष्टाएँ कही जा सकती है। अर्थात लौकिक-पारलौकिक अभ्युदय के प्रयोजक देहेन्द्रिय मन, बुद्धि, चित और अहंकार की चेष्टाएँ ही भूषण स्वरूप सम्यक चेष्टाएँ आधार के क्षेत्र में तथा मन बुद्धि, चित और अहंकार की चेष्टाएँ विचार के क्षेत्र के अन्तर्गत कही जाती है अत: मनुष्य के लौकिक- पारलौकिक सर्वाभ्युदय के प्रयोजक आचार- विचार ही संस्कृति है। मानव वपुधारी जीवों का कोई समुदाय लौकिक-पारलौकिक अभ्युन्नति का आगे का निर्धारण जिसके आधार पर करता है। वही उसकी संस्कृति का आधार हो सकता है अर्थात संस्कृति की संरचना में आत्म स्थानापन्न वहीं हो सकता है। भारतीय संस्कृति में लौकिक-पारलौकिक उन्नति के आगे का निर्धारण वेदों तथा वेदभूलक समस्त शास्त्रों के आधार पर किया गया है, जिसमें लोक और परलोक के प्रति आस्था विश्वास की दृढ़ मान्यता है और उसकी परिपुष्टि के लिए धर्मशास्त्र और दर्शनशास्त्र रूप दो दिव्य नेत्र है। दर्शनशास्त्र सत्य-असत्य विवेचनात्मक ज्ञानपरक होता है। मैं कौन हूँ, कहाँ से आया हूँ, कहाँ जाऊँगा, इस नाम रूपात्मक जगत् का वास्तविक स्वरूप क्या है, इसका कर्त्ता कौन है, वह जड़ है या चेतन है आदि का दित्यचिंतन वेदानुकूल युक्ति प्रमाणों के द्वारा दर्शनशास्त्र में उपलब्ध है। दर्शनशास्त्र के द्वारा निर्णीत इहलोक, परलोक का स्वरूप तथा ऐहिक जौर पारलौकिक उन्नति का मार्ग या साधन का प्रदर्शक आचारशास्त्र या धर्मशास्त्र है। जो विधि-निषेधात्मक कर्त्तव्य, अकर्त्तव्य संबंधी आज्ञा प्रदायक (अनुशासक) कर्म परक होता है।

मनुष्य जाति के किसी समुदाय का धर्मशास्त्र अपने दर्शनशास्त्र में प्रतिपादित लौकिक पारलौकिक अभ्युदय के साधन के रूप में जिन कर्मो या आचार-विचारों का विधान करता है वे कर्म ही उस मानव समुदाय

के लिए कर्त्तव्य होते हैं और उन्हीं आचार विचारों को वह अपनी लौकिक पारलौकिक उन्नति के आधार के रूप में स्वीकार करता है।

इससे स्पष्ट है कि किसी मानव समाज के धर्म- शास्त्र के द्वारा प्रतिपादित आचार-विचारों का अपने जीवन में बद्धमूल अनुष्ठान ही संस्कृति का स्वरूप होता है अतएव संस्कृति के आधार दर्शनशास्त्र या धर्यग्रन्थ ही है। अत: यहनिर्विवाद ओकाट्य सत्य है कि वेदादि शास्त्र सम्मत् आचार विचारों का भारतीय जीवन मूल्यों में दृढ़ों मूल सहजता को प्राप्त क्रिया कलाप ही भारतीय संस्कृति है। इसी के लिए संस्कार शब्द का सर्वमान्य व्यवहार भी देखा जाता है। मनुष्य जीवन का एक क्षण भी चिंतन (विचार) और चेष्टा (आचार) से रहित नहीं होता है। अत: संस्कृति के क्षेत्र में मानव-जीवन का समस्त आयाम आ जाते हैं। जीवन के समस्त आयामों में वेदादि शास्त्रानुरूप आचार-विचार की व्यवस्था का प्रायोगिक स्वरूप वर्ण और आश्रम व्यवस्था तथा वहाँ समस्त भूषणभूत चेष्टाओं (आचार, विचारों) के द्वारा

(अभिलषित) पुरूषार्थ (धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष) चतुष्ट्य है। वर्णाश्रम तथा पुरूषार्थ को यथोक्त से स्वीकृति पूर्वक आचरण अत्यंत वैज्ञानिक है।

भारतीय वैदिक संस्कृति, उसके सांकेतिक स्वरूप तथा वैशिष्ट्य दर्शन में उपर्युक्त पंक्तियों के तात्पर्य निश्चय के उपरान्त इनकी आत्मभूत संस्कृत भाषा के संबंध में बहुत कुछ लिखने की अपरिहार्यता तो नहीं है, तथापि उपसंहार व्याज से कुछ लिखा जाना चाहिए। संस्कृति पदार्थ प्रत्यायन क्रम में संस्कृत और संस्कृति शब्द की संरचना में 'कत' और कितन्' प्रत्यय मात्र का अंतर पूर्व चर्चित है।

तदनुसार भूषणभूत सम्यक् क्रियाओं या चेष्टाओं की उद्बोधिका दिव्य अमरवाणी जो सत्य सनातन अपौरुषेय स्वत: प्रमाणभूत वेद तथा तन्मूलक समस्त शास्त्र ही नहीं अपितु मानव जीवनोपयोगी लौकिक पारलौकिक अभ्युदय की अवाप्ति के मार्ग को प्रशस्त कर ऐहिक और पारलौकिक दु:ख विजलित अपरावर्त्तनीय सुख सम्प्राप्ति के विशाल वाड्मय ही संस्कृत है।

मानव जीवन का कोई सूक्ष्मतम अंश नहीं है जो आचार या विचार के रूप में सत्रावान हो और संस्कृत वाड्मय में प्रतिबिंबित होता है। मानवजीवनोपायोगी ऐसा कोई साधन नहीं जिसके संस्कार और संकलन की कला-कौशल की शिक्षा संस्कृत वाड्मय में नहीं है। जहाँ एक ओर मानव शरीर को वाह्य दृष्टि से संस्कृत कर स्वस्थ सुन्दर आकर्षण बलवान तथा दीर्धायु बनाने का संस्कृत वाड्मय में लोकोत्तर हानि रहित विज्ञान है तो दूसरी ओर शरीरी आत्मा को आंतरदृष्टि से मलर हित सवच्छ निर्मल दिव्य गुण युक्त बनाकर धर्मानुष्ठित आर्य और कामोपयोग पुश:सर आत्यंतिक दु:ख निवृति शाश्वत सुखसम्प्राप्ति का चमत्कारी अध्यात्म विधा भी है। संस्कृत वाड्मय में अनुस्युत दिव्य ज्ञान मानव शरीरधारी जीवों को परपीड़ा वर्जित आत्मोन्नति का अद्भुत विज्ञान है। पुरूषार्थ चतुष्टय में प्रथम स्थानापन्न धर्म से नियंत्रित अर्थार्जन तथा कामसेवन इसका एक निदर्शन है, जो पुर्णत: अपने लिए और समाज के लिए भी हानिरहित है। संस्कृत वाड्मय का उपनिषद् साहित्य जड़-चेतनात्मक समस्त संसार को ईश्वर का शरीर प्राणिमात्र में समदृष्टि त्यागपूर्वक सांसारिक साधनों का उपयोग समान मन बुद्धि और क्रिया के ये संगठनात्मक अनुष्ठान के द्वारा राष्ट्रोत्थान समस्त प्राणियों के लिए रोज दु:ख दारिद्रय रहित सुखमय जीवन की मंगल कामना अहिंसा, सत्य, दयादि दिव्य गुणों का जीवन में आधान करने की मंगलकारी अनुशासन है तो दूसरी ओर माता-पिता, आचार्य, अतिथि चेतन प्राणि ही नहीं अपितु नदी, पहाड़, वृक्षादि में भी प्रकृति के विभिन्न अवयवों के प्रति भी देवतुल्य आदरणीय भाव कृतज्ञता

ज्ञापन का भूषण भूत सम्यक आचार विचार की दृढ़ मूल भावना विधमान है। लोक मंगलकारी भारतीय वैदिक संस्कृति और भारतीयता का अपूर्व आदर्श संस्कृत वाड्मय है। मानव-जाति इतिहास के भयावह क्षणों में संस्कृत वाड्भय में अनुस्यूत भारतीय आचार-विचार की दिव्य धारा का अवगाहन ही मुक्ति का एक मात्र साधन संभव है। पूरी मानवजाति को एक कुटुम्ब के रूप में विकसित कर घृणा, हिंसा आदि लोकविध्वंसक प्रवृत्तियों से त्राण का एक मात्र उपाय भारतीय वैदिक संस्कृति का समाश्रयण है जो संस्कृत भाषा में ही निबद्ध है।

प्राचीन काल में भारत सम्पूर्ण विश्व में अग्रणी तथा विश्वगुरु था। अपनी पूर्व संसार शिरोमणि की स्थिति को प्राप्त करने के लिए वेदों एवं तन्मूलक सम्पूर्ण वाड्मय जो संस्कृत भाषा में निबद्ध है और हमारा प्रत्यावर्त्तन अपरिहार्य है। वैदिक विचारधारा ही विश्वपथ परिष्कारक है यह महामनीषियों का विचार है। जर्मन विद्वान मैक्समूलर ने वर्षो की तपस्या और संस्कृत सरस्वती की समाराधना कर इस निश्चय पर आया कि सागरोपम संस्कृत वाड्मय के एक कोने से भी मनुष्य एक जीवन में परीचित नहीं हो सकता है।

आज विज्ञान को पाश्चात्य देशों की देन समझा जा रहा है। जबकि उसका जन्म भारत में हुआ है और हमारी उपेक्षा और पाश्चात्यों की लुण्ठन प्रवृत्ति के फलस्वरूप वह पाश्चात्य देशों में पल्लवित-पुष्पित होकर विश्वाकाश में छा गया है, जो उनकी अवैदिक अपसंस्कृति के फलस्वरूप मानव जाति की संरक्षा की अपेक्षा विध्वंश का प्रायोजक ही ज्यादा है। क्योंकि भारतीय विज्ञान का परिष्करण विदेशों में भारतीय वैदिक संस्कृति के आदर्शो के विपरीत हुआ है। भारतीय ही नहीं अपितु सम्पूर्ण मानव जाति को इस आलोक मंगलकारी वैज्ञानिकी त्रासदी से त्राण पाने के लिए संस्कृत वाड्मय में संरक्षित सिद्धान्तों आदर्शों एवं जीवन मूल्यों के व्यावहाकि स्वरूप प्रदान करना नितांत आवश्यक है जो संस्कृत भाषा के आवलंबन के बिना संभव नहीं।

यद्यपि भारत औधोगिक तकनीकी तथा आर्थिक क्षेत्रों में शिखर पुरूष बनने की दिशा में गतिशील है। यह अच्छी बात है तथापि उसकी सफलता के लिए वैदिक संस्कृति में अनुस्यत नैतिक जीवन मूल्यों आदर्शों मार्यादाओं अस्मिता एवं उत्कृष्टता के संरक्षण का विस्मरण कथमपि उचित नहीं है।

एतदर्थ संस्कृत भाषा, उसमें निबद्ध अपनी विश्वमंगलकारी परम्पराओं और मर्यादाओं का तिरस्कार न किया जाए। सर्वविध संस्कृत भाषा की रक्षा प्रचार-प्रसार तथा संस्कृत वाड्मय पर आधारित नैतिक मूल्यों की जीवन में स्थापना नितांत अपेक्षित है। हम भौतिक विज्ञान के द्वारा आविष्कृत सुख साधनों का उपयोग तो करें लेकिन उनका मूल आधार धर्म के नियंत्रण को कदापि अस्वीकार्य न करें। संस्कृत भाषा के प्रचार-प्रसार तथा संरक्षणार्थ औपचारिक प्रदर्शन न किया जाए। इसमें प्रवृत अग्रणी संस्थाएँ इसे ही मुख्य केन्द्र बिन्दु के रूप में लक्षित कर कार्य करें। शायद यही संस्कृत और संस्कृत वाड्मय की संरक्षा का सूत्र भी संभव है।

''जयतु भारतीया संस्कृति, संस्कृतम्।।

◆

हुलासगंज, जहानाबाद

पितृतीर्थ गया का माहात्म्य

डॉ० रमेश शर्मा

भारतीय संस्कृति का सम्बर्द्धन और सम्पोषण जिन धार्मिक संधारणाओं से हुआ है, उसमें न केवल कर्म, बल्कि स्थान विशेष का माहात्मय भी शामिल है। साधनात्मक साहित्य में विशिष्ट स्थलों की पवित्रता पर बल दिया गया है, चाहे वह किसी भी धर्म, सम्प्रदाय का क्यों न हो ?हिन्दू-धर्म में चार धामों के अतिरिक्त गया को अतिपवित्र एवं मोक्षदायक माना गया है। सांस्कृतिक, दार्शनिक, धार्मिक एवं आध्यात्मिक भावनाओं के उपबृहण में महनीय संस्कार का प्रादुर्भाव होता है, जिससे हमारी संस्कृति आज भी संरक्षित है।

गया को विष्णुधाम अथवा वैष्णव तीर्थस्थल भी कहा गया है। शास्त्रों में तो यहाँ तक वर्णित है कि मुक्ति के सभी साधनों में गया श्राद्ध सबसे श्रेष्ठ है।

''ब्रह्मज्ञानेन किं कार्य आदि पुत्रों गयां व्रजेत्।'' (**वायु पु० 105/16/17**) गया शब्द 'गया' का विकसित रूप है। यह शब्द ऋग्वेद के दशम मंडल में आया है- ''अस्ता विजनों दिव्यों गयेन।'' यही 'गया' शब्द पुराणों में गयाशीर्ष या गयासिर हो गया है तथा पुराणों आदि में गया का भरपूर उल्लेख मिलता है। इसलिए गया की प्राचीनता असंदिग्ध है।

गया माहात्म्य का सर्वाधिक वर्णन वायु पुराण में मिलता है। उसमें गया के नाम करण में यह उल्लेख है कि श्वेत वराह कल्प में 'गया' ने यज्ञ किया, जिसके कारण इसे गया की संज्ञा दी गयी। गया तीर्थ का विलक्षण महत्व हैं यहाँ का कोई भी स्थान ऐसा नहीं है, जो पवित्र नहीं है। यहाँ तक कि स्वयं मर्यादापुरोषत्तम श्री राम श्राद्धकृत्य कर अपने पितरों को प्रसन्न किया था। यह है- गया के विलक्षण माहात्म्य का प्रमाण।

विष्णुधाम गया को लोकवाणी एवं लोकमानस में गया जी जैसे आदरसूचक शब्दों से विभूषित किया गया है, जो उसी विलक्षण प्रवित्रता एवं महानता को सिद्ध करता है। गया शब्द से लोकमानस का भावनात्मक लगाव है। यह सम्बन्ध अति पवित्रता के कारण बरकरार है। भक्तिशास्त्रों में जगत् को परमात्मा का शरीर माना गया है- **'जगत्सर्व शरीरं ते।'** (वाल्मीकि रा०) भागवत में (10/2) आकाश, वायु सलिल, अग्नि, सूर्य चन्द्र, तारे, नदी, पर्वत इत्यादि को हरि का शरीर मानकर प्रमाम्य कहा गया है। ठीक इस प्रकार हमारे ऋषियों ने भी पितृतीर्थ गया में अवस्थित नदियों, पर्वतों एवं पदों की एक सूची देकर सबके प्रति नमन का भाव जाहिर किया है, जिससे गया की महानता बनी हुई है। संक्षेप में यहाँ उल्लेख करना आवश्यक होगा।

1. **नदियाँ** - फल्गु, घृतकुल्या, मधुकल्या, मधुस्रवा, अग्नि घारा, कपिला, वैतरणी, देविका, आकाशगंगा आदि।
2. **पर्वत** - गयाशिर मुण्डपृष्ठ, प्रभास, उद्यन्त, भस्मकूट, अरविन्दक नागकूट, गृघ्रकूट, प्रेतकूट, क्रौजचपाद, रामशिला, प्रेतशिला, ब्रह्मयोनि आदि।
3. **स्थान स्थल** - फल्गु तीर्थ, रामतीर्थ, शिला तीर्थ, गदालोल, वैतरणी ब्रह्मसर, ब्रह्मकूट, उत्तरमानस, दक्षिणमानस, रुक्मिणीकुंण्ड, प्रेतकुण्ड, पुष्करिणी, मातंगवापी आदि
4. **पुनीत स्थल** - पंचलोक, सप्रलोक, बैकुण्ठ, लोहदण्डक, गोप्रचार, धर्मारण्य, ब्रह्मभूप आदि।
5. **पुनीत वृक्ष** - अक्षयवट, गृद्धकूटवट, महाबोधि तरु आदि
6. **पद** - शिलाओं पर पदचिहन एवं उनके नाम अंकित है। यथा- विष्णु, रूद्र, ब्रह्म, कश्यप, दक्षिणाग्नि,

गार्हपत्य, आहवनीय आवसथ्य, शक्र, अगस्त, कौञ्च, मातंग, सूर्य, कार्तिकेय एंव गणेश आदि। इसमें विष्णुपद एवं ब्रह्मपद की श्रेष्ठता स्वीकारी गयी है।

इस प्रकार से उपर्युक्त सभी तीर्थ परमात्मा के शरीर का प्रतीक है, जिसे प्रणम्य कर मानव उसके प्रति भावनात्मक सम्बन्ध स्थापित करता है। सभी स्थलों पर पहुँचना मुश्किल है। फिर भी पूजा एवं पिण्डदान से छः गयाएँ मुक्ति देती है। यथा–गयागज, गया दित्य, गायत्री तीर्थ, गदाघर, गया और गयाशिर–

''गयागजो गयादित्यो गायत्री च गदाधरः।
गया गयशिरा श्चैव षड़गया मुक्ति दायिकाः।।

वायु पुराण (112/60)

गया–गदाघर शब्द जनमानस में मोक्ष मार्ग का पर्याय बन चुका है। जबकि गया और गदाघर दो शब्दों में एकात्मकता का भाव अभिहित है। लोक मुख से एक ही शब्द गया गदाघर का उच्चारण होता है। विष्णु सहस्त्रनाम का 117वाँ नाम गदाघर है। गदाघर नाम के पीछे भी गया से सम्बन्धित एक पौराणिक आख्यान मिलता है कि गयासुर के अतिचंचल शरीर को स्थिर करने के लिए भगवान विष्णु ने गदा के सहारे उसके शरीर पर बैठ गये, जिसके कारण उनका नाम गदाघर पड़ा तथा असुरों की अस्थियों से बनी गदा के घारण करने के कारण उनका नाम आदि गदाघर पड़ा। आदिगदाघर के दो स्वरूप अव्यक्त और व्यक्त हैं। विष्णु पुराण के अनुसार पर्वत अक्षयवट फल्गु आदि नदियाँ आदि गदाघर के अव्यक्त रूप हैं, जो प्रणम्य हैं तथा विष्णुपद, रूद्र हैं। गया का प्रत्येक स्थल विष्णु–तत्व से परिव्याप्त हैं। गया को पावन तीर्थ कहने का यही रहस्य है। फल्गु जलघारा के रूप में आदि गदाघर है–

''गंगा पादोदकं विष्णेः फल्गुः हि आदिगदाधरः।''

(वायु पु० (111/16)

विषणु तत्व के अव्यक्त स्वरूप के कारण पितृतीर्थ का महिम्नगान किया गया है।

''पितृतीर्थं गयानाम सर्वतीर्थवरं शुभम्।
यत्रास्ते देवदेवेशः स्वयमेव पितामहः।।'' (मास्य पु० 22/8)

महाभारत के वन पर्व में भीष्म को महर्षि पुलस्त्य ने कहा कि गया तीर्थ में जाकर जो ब्रह्मचर्यपूर्वक इसका सेवन करता है, वह अपने कुल का उद्धार कर देता है। यहाँ का अक्षयवट तीनों लोकों में विख्यात है। इस वृक्ष के समीप पितरों को दिया हुआ दान अक्षय हो जाता है।

''तत्राक्षयवटो नाम त्रिषु लोकेषु विश्रुतः।

तत्र दत्तं पितृम्यस्तु भवव्यक्षयमुच्येते।।'' (महा० व० पर्व 84/83) गया में पिण्डदान करने से उसके कुल में कोई प्रेत नहीं होता है। तथा मार्ग में पड़े हुए अथवा नरक में स्थित पितरों को स्वर्ग में स्थान प्राप्त हो जाता है। गया गदाघर शब्द में मोक्षकामना का भाव निहित है। मोक्षदायक तीर्थ गया में श्राद्धादि कर्म पितरों को मुक्ति दिलाता है। पिण्डदान एवं तर्पण श्राद्ध किया के अंग हैं। श्राद्ध क्रिया परमात्मा की पूजा है। गया में श्राद्ध करना और भगवान गदाघर की पूजा करना मूलतः एकहीं लक्ष्य का निर्देश होता है।

गया की तीर्थ यात्रा का अपना एक अलग विशिष्ट स्थान है। वायु पुराण अध्याय–110 में गया की तीर्थ यात्रा पूरे सात दिनों का विवरण उपलब्ध होता है जिसमें सातों दिन की यात्रा एवं कर्मों की विशद् कारण है। प्रथम शुद्ध फल्गु स्नान से लेकर पिण्डदान श्राद्ध किया एवं ब्राह्मण भोजन क्रिया से अन्त किया जाता है।

तत्पश्चात् पितरों का उद्धार होता है। यह है- गया का माहात्म्य। महर्षि व्यास का कथन है कि समस्त तीर्थों में गया तीर्थोत्तम है। क्योंकि ब्राह्मण ने पितरों की मुक्ति के लिए तीर्थ का निर्माण किया था। इसलिए गया पितृतीर्थ है और मंगलदायक तीर्थ है। भगवान यहाँ स्वयं विराजमान हैं।

''पितृतीर्थं गयानाम सर्व तीर्थवरं शुभम्।
यत्रास्ते देवदेवेशः स्वयमेव पितामहः।।'' (मत्स्यपु० 22/8)

महर्षि और्व राजा सगर को अन्तः सलिला आदि गदाघर-रूपा फल्गु नदी पर अवस्थित गया तीर्थ में जाकर उपदेश देते हैं। गया श्राद्ध से पितरों की तृप्ति एवं श्राद्धकर्त्ता का जीवन धन्य हो जाता है।

''गयामुपेत्य यः श्राद्धं करोति पृथिवीपते।
सफलं तस्य तज्जन्मजायते पितृतुष्टिदम्।।'' (विष्णु पुराण 3/14)

पितृतीर्थ गया एक ऐसा तीर्थ स्थल है, जो लोक और परलोक दोनों को सवाँरने में सक्षम है। इसका महात्म न केवल लोकमानस के मुख से सुनने को मिलता है, बल्कि शास्त्रों में भी वर्णित है। यही कारण है कि विश्व के समस्त तीर्थ स्थलों में गया तीर्थ का एक अलग स्थान है। गया में जो कुछ भी दान किया जाता है वह महान् धर्म का हेतु और महामंगल दायक होता है।

गया में श्राद्ध की महानता है। श्राद्ध शब्द का अर्थ है- श्रद्धा पूर्वक कर्म-सम्पादन। स्कन्द पुराण की स्थापना है कि श्राद्ध में श्रद्धा विद्यमान है। इसलिए पितरों के कल्याणार्थ श्रद्धापूर्वक किये जाने वाले कर्म विशेष को श्राद्ध कहते हैं। यह श्राद्ध भारतीय संस्कृति की धरोहर है, जिसमें हमारी सामाजिक एवं धार्मिक कृत्यों से धर्म एवं मोक्ष की प्राप्ति होती है। तीर्थ यात्रा को शास्त्रों में मोक्ष का साधन माना गया है। पितृऋण से मुक्ति का ऐसा सुलभ स्थल अन्यत्र दुर्लभ है। विष्णुधाम गया की तीर्थ यात्रा मुक्ति के अन्य साधनों में श्रेष्ठ है। इसका गुणगान न केवल लोक मानस वल्कि पुराणों स्मृतियों एवं अन्य शास्त्रों में भी उल्लेख है।

पुरूषार्थ चतुष्टय (अर्थ, धर्म, काम, और मोक्ष) में धर्म का स्थान प्रथम है। जीव कल्याण हेतु धार्मिक कृत्यों को करता है तथा जीवन की सार्थकता को सिद्ध करता है। इन्हीं धार्मिक कृत्यों के कारण स्थान विशेष का महत्व प्रतिपादित होता है। गया जिसे विष्णुधाम अथवा विष्णुनगरी कह कर सम्बोधित करते हैं वह धार्मिक कृत्यों के कारण ही माहात्म को प्राप्त किया है। गया के प्रति जो आस्था एंव विश्वास लोगों में पैदा हुआ है, वह मोक्षनगरी के कारण ही सम्भव है। पुरूषार्थ चतुष्टयं के अन्तिम सोपान, जिसे मोक्ष की संज्ञा से अभिहित किया है। इसकी प्राप्ति गया नगरी में ही होती है। वायुपुराण में गया के माहात्म्य का विशद् वर्णन अध्याय 105 से 112 तक है। मोक्षस्थल गया की पवित्रता एवं उसके महात्म्य का वर्णन जितना भी किया जाय। मेरी समझ से कम ही है।

उपर्युक्त बातों के आलोक में यह स्पष्ट है कि मोक्षदायक पितृतीर्थ गया का माहात्म्य अति पावन है। प्राणी का उद्धार होना यहाँ कि विशेषता रही है। चौरासी लाख योनियों में भ्रमण करता हुआ जीव की शरणस्थली है- गया। भगवान विष्णु के पद चिह्न का दर्शन मंगलकारी है। गया समस्त मंगलों का मूल है। यह वह पवित्र स्थान है, जहाँ मांगलिक चेतना का प्रादुर्भाव होता है। गया में आदिगदाघर के अव्यक्त स्वरूप प्रणम्य तथा नमनीय है। अतः हम यह कह सकते है कि सभी धार्मिक स्थलों में गया तीर्थ का विलक्षण महत्व है। इसी विलक्षणता के कारण गया से हमारा भावनात्मक लगाव है। फल्गु जलधारा में स्नान, तर्पण, श्राद्ध, पिण्ड समस्त कार्य लोक एवं परलोक को सवॉरने में सहायक है, जिससे गया का वैशिष्ट्य निखर उठा है।

◆

व्याख्याता, हिन्दी विभाग
बी० बी० एम० कॉलेज, ओकरी, जहानाबाद (बिहार)

भारतीय संस्कृति का दर्पण संत-साहित्य

डॉ० राम सिंहासन सिंह

भारत वर्ष की इस पावन धरा पर 6 हजार वर्ष पूर्व जब मानव ने अपना पांव धरा तब से आज तक मानवधर्म अपने नित नये अनुसंधानों और अविष्कारों से इस दिव्य भूमि को सजाता आ रहा है।

वेदों का चिंतन व मनन से ही मानव जीवन संत प्रवृत्ति से विभूषित हुआ। विश्व का एक मात्र देश भारत है, जहाँ की माटी ही नगर-रत्नों को उगलती है। वह संत शिरोमणियों की जननी है। समय-समय पर संतों ने ही जन मानस को ज्ञान, भक्ति और वैराग्य की त्रिवेणी में स्नान कराया। आराजकता, अनाचार, अत्याचार और अनैतिकता की गहन रात्रि में डुबे हुये समाज को पूर्ण आलोक की ओर लौटाया।

भारत में समय-समय पर धार्मिक, सामाजिक व राजनैतिक परिवर्तन हुये, संतों ने व्याकुल भटकी जनता को विश्वास, क्षमता, धैर्य की शक्ति प्रदान की। यही शक्ति कालान्तर में भक्ति बन कर उभरी। ''विश्वशांति'' का महामंत्र भारत की देन है। ''वसुधैव कुटुम्बकम'' ही हमारा एकमात्र ध्येय है।

आचार्यदेवों भवः, मातृदेवों भवः, पितृदेवो भवः, अतिथिदेवो भवः

की धुरी पर ही हमारी प्राचीन संस्कृति टिकी है। सत्य, सेवा, अहिंसा, त्याग और विश्वास यही संतों के पाँचो (5) प्राण है। श्रद्धा, साधना, सबूरी, स्मरण और सश्रम इन पांचों (5) भावों में ही संत रमण करते हैं।

संत चलते फिरते तीर्थ है, ज्ञान, भक्ति वैराग्य की त्रिवेणी में स्नान करा हमें पवित्र विचार धारा देते है। संत वह पारसमणि हैं जिसके स्पर्शमात्र से लोहा भी सुवर्ण बन जाता है। सदियों से उनका समाज उत्थान का कार्य चल रहा है उनका संपूर्ण जीवन ही परमार्थी होता है।

वृक्ष कदै ना फल भखै।

नदियाँ ना संचे नीर।

परमारथ के कारणे।

साधौं धैरया शरीर।।

मध्यकालीन युग के अंतरिक्ष में कई दार्शनिक संत नक्षत्र बनकर उभरे। श्री शंकराचार्य, श्री रामानुजाचार्य, श्री वल्लभाचार्य एवं श्री माधवाचार्य और श्री निबंकाचार्य।

आज सनातन धर्म की नींव संतो के तत्वों पर टिकी है, इन्हीं के द्वारा रचित भाष्य ग्रंथों की देन है। संतों व आचार्यों की गणना में शंकराचार्य संत शिरोमणि कहलाये। 11वी सदी में उन्होंने अद्वैत दर्शन का प्रवर्तन किया।

आदि गुरु शंकराचार्य ने संपूर्ण देश भ्रमण कर विद्वानों से शास्त्रार्थ करते हुये मंडन मिश्र के पास पहुँचे और उन्हें हराया। उनकी पत्नी देवी भारती द्वारा आग्रह किया गया कि अभी अर्धांग बाकी है मिश्रजी हारे हीं। नर बिना नारी अपूर्ण है, शक्ति के बिना शिव शव के समान है। निरूत्तर शंकराचार्य शास्त्रार्थ के लिये तैयार हो गये।

प्रश्न था ?सृष्टि के संचालन हेतु गृहस्थ धर्म का कलापक्ष व भावपक्ष क्या है ?संत का निरूत्तर होना स्वाभाविक था। ध्यानमग्न संयासी ने दूसरे ही क्षण 1 वर्ष की अवधि मांगी। इसी जगह शास्त्रार्थ होगा, कहकर

चले गये। उन्होंने राजा के नवविवाहित मृत पुत्र के शरीर में ''परकाया प्रवेश'' की सिद्धि द्वारा प्रवेश किया। गृहस्थ के पूर्ण कलाभाव का ज्ञान प्राप्त कर शास्त्रार्थ किया। यह उनका पुरूषोचित साहसिक कदम था।

हे मेरे देश की विदुषी नारी मैं देश के चारों द्वारों पर शक्ति पीठों की स्थापना करने जा रहा हूँ। जहाँ ''भारती अखाड़ा'' भी होगा। देवी भारती का नाम अमर हो गया। पुरूष प्रधान समाज में एक पुरूष द्वारा एक नारी के सम्मान का प्रथम उदाहरण भारत के सिवा किसी देश में नहीं हुआ। न होगा। (ना भूतों ना भविष्यति) कितना उच्च व उदारतावादी दृष्टिकोण था वह। यही भारत की संस्कृति है, 'मातृदेवों भव:'। इस भाव का सदा ही भारत ऋणी रहेगा।

''उम्र पत्थरों को मिलती है, फूलों को नहीं''

संत रामानुजाचार्य ने धर्म के रहस्य को प्रतिपादित किया। सनातन धर्म की नींव इतनी गहरी खोदी, किसी काल में भी वह हिल नहीं सकती। अगणित संतों ने धर्म की नीव पर अपनी आहुतियां दी। तभी हम आज इस स्वरूप का दर्शन कर रहे हैं। इनके भाष्यग्रंथों और चिंतन मनन की वाणी ने ही सनातन धर्म को जागाए रखा। रामानुजाचार्य विशिष्टिाद्वैत के प्रवर्तक हुए। भाषा विवाद को छोड़कर द्वैत अद्वैतवाद का समन्वय कर दार्शनिक चिंतन को भक्ति का रूप दिया, और जनसाधारण को शांति प्रदान की। उन्होने वैष्णवधर्म व श्री संप्रदाय को सर्वत्र फैलाया। आज लाखों लोग अपनी आध्यात्मिक भूख तृप्त-तृप्त कर रहे हैं। जन-जन में आत्म विश्वास जगाकर समाज को सरलता से उबारा।

वल्लभाचार्य ने श्रुद्धाद्वैत का प्रवर्तन किया और प्रभु के अनुग्रह को हीं सर्वस्व स्वीकार किया। उनका मानना था कि प्रभु के अनुग्रह से ही सृष्टि का पालन-पोषण होता है। 'पोषजमवद् अनुग्राह' संत वल्लभाचार्य ने कृष्ण भक्ति के गीत गाये। वल्लभसंप्रदाय की स्थापना की, कृष्णराधा का अमरप्रेम, गोपियों की विरह वेदना, माता यशोदा का पुत्र प्रेम, बाल लीलायें कंस का वध, मथुरा के राजा उग्रसेन का राजतिलक। कंस के कारागार में रखी रमणियों का उद्धार कर उन्हें कृष्णमय बनाना उस समय का पुरूषोत्तम कार्य था। राधामाधव का भक्ति काल था। साकार रूप के दर्शन से जनता आत्मानंद को प्राप्त हुई। उद्धव ज्ञान के प्रतीक व गोपियां भक्ति की प्रतीक रूप थीं।

''रास कुंजन में ठहरायो, सब सखियाँ।

जेवे बाट साँवरो अब तक नहीं आयो।

कल्पतरोरूह साँवरो वृजवनिता भई पाँत।

रोम-रोम प्रति गोपियाँ हो रही साँवले गात।

अनंत भक्ति की चरमसीमा थी, पूर्ण समर्पण भाव था, आत्मा परमात्मा का मिलन था। साकार दर्शन था। मनमोहनी माया और ब्रम्ह का साक्षात दर्शन था।

संत माधवाचार्य मद्रास के उडूरिगाँव में उन्होंने अद्वैत मतावादी अच्युतपक्षाचार्यजी से दीक्षा लेकर द्वैत दर्शन बनकर ज्ञान का दक्षिण में खूब प्रचार किया। वेदों की प्रमाणिकता की स्थापना की, मायावाद का खंडन और पूर्ण मर्यादा का संरक्षण किया। वेद, महाभारत और विष्णु सहस्रनाम के 3, 10 व 100 प्रश्नों के उत्तर देकर चमत्कार किया। उन्होंने कई मूर्तियों की प्राणप्रतिष्ठा कराई। वे विग्रह आज भी विद्यमान हैं उनका दर्शन द्वैतवाद कहा जाता है। जीव व ब्रम्ह दो पृथक सत्ता है। जीव अणु एवं दास है। ब्रम्ह सगुण स्वतंत्र है।

सूरदास ने साकार कृष्ण के गीत गाये।

बालपन से युवावस्था तथा राजा द्वारकाधीश बनने तक सैकड़ों पद पदावली, सवैये, छप्पय, दोहे आदि लिखकर श्रीकृष्ण का साकार दर्शन कराया। प्रज्ञाचसु होने पर श्री श्रीकृष्ण के रूप माधुरी का विलक्षण वर्णन ''सूरसागर'' में किया, पूरा ग्रंथ ही एक मात्र सहजज्ञान का भंडार है।

संत मीराबाई ने कृष्ण को प्रियतम मानकर पूर्ण समर्पण भाव से भक्ति की। 'मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरों ना कोई अंसुअन जल सींच प्रेमबेल बोई।' कहकर सांसारिकता को नकारा।

''ऐसे पति को क्या बरू जो जनमत और मरजाएं।

पति तो ऐसो बरू जो अखंड चराचर मायं।।''

अपने आपको अमर सुहागन मानती है।

यह प्रेम माधुर्य श्रृंगार रस आत्मा की आवाज थी। मीरा हमारे मानस में रची बसी है। उन्होंने पद सोरठे, दोहे, छप्पय, सवैय्ये और गर्भागीत रचे।

विरह समंद में छोड़ गये पीवनेह की नांव चलाय।

वियोगिनी मीरा की पुकार थी। मीरा भारत के सभी अंचलों में गायी जाती है।

संत कबीर का रहस्यवाद। संपूर्ण वह भारतीय आध्यात्मिकवाद का प्रतीक है। सूफी संतों के प्रभाव के बावजूद उनका मूल तत्व का निरूपण अद्वैतवाद की प्रक्रिया थी। खुद को नारीरूप में कृष्ण को पुरूष रूप में मानकर विरह की सांखियां पद और सवैय्ये रचे। जबकि सूफी-संतों ने ईश्वर को नारीभाव से चित्रित किया। कबीर ने रामानंद सतगुरू की महिमा को अनंत बताया।

''जल में कुंभ, कुंभ में जल है।

बाहर भीतर पानी।

फूटा जल-जल ही समाना।

यह तथ कथ्यों गयानी।''

संसार की नश्वरता है, अपनी आत्मा को जीवंत रख उसका उद्धार करो अमर हो जाओगे।

सूर, तुलसी, केशव, कबीर, मीरा, रसखान विद्यापति चैतन्य महाप्रभु, दादु दयाल चांदबीबी, भूषण रैदास आदि संतो ने मन-मोहन का मोहक रूप रखा।

''बिन करताल पखावज बोले।

अणहद की झणकार रे।''

याज्ञवल्य और शुकदेव पूर्ण योगी संत थे। कर्म के आदि अंत और मध्य में प्रभु को ही रहने दो यही उनका कथन था। गार्गी, मैत्रयी और लोपामुद्रा। वेद विदुषी नारियां भी संत वृति में आती है।

''हिंसा पशुओं का धर्म है। तो अहिंसा मनुष्यों का, अहिंसा भाव संसार की माता है, और मुक्त आनंद की पद्धति। अहिंसा ही उत्तम गति और शाश्वत लक्ष्मी है।''

महाराष्ट्र के संत ज्ञानेश्वर संत तुकाराम नामदेव-चोखामेला, संत पीपा संत समर्थरामदास, स्वामी संत साईबाबा संत तुकड़ोजी महाराज, संत गाडगे महाराज, आदि ने सामाजिक, धार्मिक कुरूतियों पर कुठाराधात किया। कई अभंगों द्वारा जन जागरण किया।

अपने जीवन का सारा बोझा उस प्रभु पर डालो, कुदना, फाँदना, फलना, फूलना, खुशी, गम, अंत सब कुछ उसका ही हो जाता है वही तुम्हारे जीवन का महेश्वर बन जाता है उसी भाव का होना ही परमेश्वरमय हो जाना है, जीव-सत्यम्-शिवम्-सुन्दरम् हो जाता है।

संत ज्ञानेश्वर ने 700 ओवियों की ज्ञानेश्वरी लिखी मराठी भाषा भाषियों पर उनका अनंत उपकार है, परमात्मा का सत्य स्वरूप और समाज में सद्‌गुणों का विकास किया।

भैस की पीठ पड़ा चाबुक ज्ञानदेव की पीठ पर उभरा निशान भूतमात्र पर सम्वेदना का प्रत्यक्ष प्रमाण है, ज्ञानदेव की इस करूणा से ही ''ज्ञानेश्वरी'' का उदय हुआ।

भारत का कोई भी कोना संतों से अछुता नहीं है। उन्होंने संस्कृत से पाया और लोगों तक अपनी वाणी द्वारा पहुंचाया, भारत के संत ही जनता के हृदय सम्राट है।

संत रामकृष्ण परमहंस और शिष्य विवेकानंद की जोड़ी अनेक परिवर्तन किये। वे तत्व दर्शी, ब्रम्हज्ञानी और आत्मज्ञानी थे। भारत के आध्यात्मिक ज्ञान का अलख अमेरिका में जगाया, और भारत को ''जगतगुरू'' की पहचान दी।

संतों ने परमात्मा को प्रकृति में भी देखा है।

''हर पुष्प में देखा है तुमको।

हर पत्र में देखा है तुझको।

नदियों में देखा है, तुझको।

निर्झर में देखा है तुझको।

पर्वत पर रूप तेरा देखा।

तेरे रूप अनेक तू एक ही है।

सारे जहाँ में तू ही तू है समाया।

संत जनाबाई, मुक्ताबाई ने अपने ही निकट देखा। संत चांगदेव ने अपनी भक्ति की शक्ति से दीवार चलादी। भैसें के मुख से संस्कृत के श्लोक कहला दिये, कितने सिद्ध पुरूष थे ?

''गुजरात के संत नरसी भगत'' मारी हुंडी शिकारो महाराज रे, सांवला गिरधारी धर्मराज को स्वर्ग में पैर रखते ही कुत्ते को न जाने दिया। उसी क्षण में अपने जीवन का सारा पुण्यकाल त्याग दिया, प्रथम संत बड़े संकल्पी होते हैं। सत्य कार्य करते है। बाद में फल आता है। फल को भी प्रभु को समार्पित कर देना ही संतो की स्वाभाविक वृत्ति है।''

''विश्वशांति'' का महामंत्र भारत की देन है।

सत्य अहिंसा, सेवा, त्याग विश्वास यही संतो के 5 प्राण हैं।

श्रम, श्रद्धा, सबूरी साधना स्मरण इन (5) पांचों में ही संत रमण करते हैं।

संत साईबाबा शिरडी वाले इसका ताजा उदाहरण है।

संत तुलसीदासजी ने ''रामचरितमानस'' की स्वांतः सुखाय रघुनाथ जसगाथा'' कहा। आज के परिवेश में जन, मन, गण, सुखाय, रघुनाथ, जसगाथ के रूप में निखरा। धर-धर गया जानेवाला अवधी, अर्धमागधी हिन्दी भाषा का सर्वोच्च चमत्मारी ग्रंथ सिद्ध हुआ।

मर्यादा पुरूषोत्तम राम को प्रजारंजक राजा राम के रूप में देखा।

आधुनिक समय में विश्वस्तर पर रामायण का अनुवारद सभी भाषाओं में हो गया। भक्त, ज्ञानी, वैरागी, गृहस्थ राजनीतिज्ञ सामाजिक व धार्मिक दस्तावेज बनी। भूमि के टुकड़े को लेकर जहाँ देश लड़ते है, वहाँ लंका को विजय कर विभीषण को लंकेश बनाकर साम्राज्यवाद का नाश किया।

नारी सुलभ दाक्षिण्य का रामायण में प्रतिपल दर्शन कराया चाहे मंदोदरी, सुलोचना त्रिजटा हो या लंकिनी हो।

सीता को सती अनुसया द्वारा उपदेश रामायण का सर्वोच्च शिखर बिंदु है, रावण से युद्ध मैदान में राजनीति की (लक्ष्मण को) शिक्षा लेने के लिये भेजना ज्ञानी का सम्मान करना है और उदारता का सर्वोच्च आदर्श है। नर-वानर का संयोग अनोखा संगम है। रामायण का प्राण है, पक्षीराज जटायू का अंतिम संस्कार जीव का सम्मान है, चाहे वह किसी भी देहि में हो वंदनीय है।

रामादल में सुलोचना का अपने पति के शव के साथ सती होने के लिये आना ही राम पर अटूट श्रद्धा व विश्वास था, रामायण का प्राण है।

जबकि रावण द्वारा साधुवेश में सीता को छल द्वारा हरण करना ही रावण का अस्तकाल है।

विरासत में दे गये तुम।

ऐसी अमर कृति महान।

विश्व चमकृत हो गया।

देखकर तुम्हारा अनुपम साहस।।

संत असंतों के संगत में रहकर भी प्रवृति नहीं छोड़ते।

''संत ना छोड़े संतई, कोटिक मिले असंत।

चंदन भुवंगा बेढ़िया शीतलता न तजंत।।''

''सुत, दारा ओर लाछमी, पापी हूँ के होय।

संत समागम हरी मीलण, तुलसी दुर्लभ होय।

◆

पूर्व प्रचार्य-रामलखन सिंह यादव कॉलेज
चम्पा कुंज, दुर्गानगरी, मानपुर, गया।

पितरों के प्रति असीम श्रद्धा की झलक

श्री मुकेश कुमार सिन्हा

मानव-जगत रिश्तों के पवित्र बंधन से इस कदर बंधा है कि बस पूछिए मत! रिश्तों की यह प्रगाढ़ डोर ही मनुष्य को 'गया जी' तक खींच लाती है। इन्हीं खूबियों के कारण पितृयज्ञ की परंपरा वैज्ञानिक युग के ऊहा-पोह में भी कायम है।

अनादिकाल से चली आ रही इस परंपरा में दिखती है पितरों के प्रति असीम श्रद्धा की झलक। पितर भी मुक्ति की चाह लिए 'गया जी' में प्रवास पाते हैं। उनमें यह उम्मीद रहती है कि कोई उनका 'अपना' गया जी में आकर पिंडदान, तर्पण करेगा और उन्हें मुक्ति मिलेगी। गया जी के लिए प्रस्थान कर देने भर से ही श्राद्धकर्त्ता का हर कदम पितरों के लिए स्वर्ग की सीढ़ी साबित होती है।

सच्ची श्रद्धा और भक्तिभाव लिए श्रद्धालु पितृयज्ञ करते हैं। इससे न केवल पितर तृप्त होते हैं, वरन पिंडदाता भी असीम शांति की सुखद अनुभूति करते हैं। पितर श्राद्ध से तृप्त होकर श्राद्धकर्त्ता को दीर्घायु, धन, विद्या का आशीर्वाद देते हैं।

आयुः प्रजां धनं विद्या, स्वर्ग मोक्षं सुखानि च।
प्रयच्छन्ति तथा राज्य पितरा : श्राद्धतर्पिता।।

भाद्र पूर्णिमा से लेकर आश्विन शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा तिथि तक मतलब सम्पूर्ण पितृपक्ष में गया जी में नजर आती है श्रद्धा, प्रेम, कृतज्ञता और अभिनंदन। सात्विक भावों से भरी होती है श्राद्ध की प्रक्रिया। मान्यता है पितर तृप्त हो गए, तो अदृश्य-आत्मायें सदैव उनकी रक्षा करेंगी। जब मनुष्य का प्रयत्न, शक्ति एवं पुरुषार्थ असमर्थ साबित होता है, तब अन्तःकरण एवं अन्तर्मन में दिव्य प्रेरणा के रूप में पितर की अनुकम्पा बरसती है। श्राद्ध करने से पितरों को प्रेत योनि से मुक्ति मिलती है -

''आदौ मृता वयमिती बुध्यन्ते तदनुक्रमात्।
बंधु पिंडादिदानेन प्रोत्पन्ना श्रति वेदिनः।।''

योगवाशिष्ठ 3/55/27

प्रेतयोनि में विचरण कर रहे पितर यह अनुभव करते हैं कि उनकी मृत्यु हो गयी। अब बन्धुओं के पिंडदान से नया शरीर प्राप्त हुआ है।

पितृपक्ष का भारतीय संस्कृति में विशेष महत्त्व है, तभी तो महत्त्वपूर्ण कामना के साथ विश्व के कोने-कोने से पिंडदानी 'गया जी' पधारते हैं। पिंडदान करते हैं, साथ ही तर्पण भी। गया जी पिंडदान की सदियों पुरानी व अनोखी परंपरा का साक्षी है। लाख उतार-चढ़ाव आया हो। धर्म-संस्कार के प्रति विमुखता कायम हो गयी हो। नैतिकता-वैचारिकता का कोई मोल न रहा हो, फिर भी पितरों की आत्मा की शांति एवं मुक्ति के लिए लोग जिंदगी के बीच कुछ पल निकालकर 'गया जी' आने की प्रबल चाह रखते हैं। जिंदगी में कम-से-कम एक बार जरूर इस पुण्य धरा पर अपना कदम रखने का अवसर पाना चाहते हैं। हो भी क्यों न, ऐसी मान्यता है कि जो पितरों के नाम पर पिंडदान और श्राद्ध नहीं करता, वह देव संस्कृति और सनातन धर्म का अनुयायी नहीं माना जा सकता। गयाधाम देवतीर्थ है, जो मनुष्य गयाधाम आकर अपने पितरों का श्राद्ध करता है, वे देवलोक में सदा पूजनीय माना जाता है।

सबसे बड़ी बात है कि विज्ञान ने कितनी भी तरक्की पा ली हो, लेकिन पितृयज्ञ की निरंतरता थमी नहीं है। पिंडदान के प्रति विश्वास और पितरों के प्रति आस्था में रत्ती भर भी गिरावट नहीं आयी। तमाम परेशानियों के बाद भी 'गया जी' की पिंडवेदियों पर श्रद्धालुओं का हुजूम यह बताने को काफी है कि पूर्वजों के प्रति असीम श्रद्धा का भाव लिए ही लोग गया जी पहुँचते हैं। पितरों की प्रसन्नता तथा आकांक्षा का केन्द्र बिन्दु शायद श्रद्धा ही है। मान्यता है कि पितर श्राद्ध करके श्रद्धापूर्ण वातावरण में अपनी अशांति खोकर आनंद का अनुभव करते हैं। इस कर्मकांड में जो भी विधि अपनायी जाती है उसमें श्रद्धा ही मुख्य है। श्रद्धा से जो दान किया जाता है, उससे तो तृप्त हो जाते हैं। शायद पितरों के प्रति ऐसी मान्यता ही पितृपक्ष की निरंतरता को कायम किए हुए है। पूर्वजों के प्रति आत्मीयता, सद्भावना एवं कृतज्ञता की भावना इसी प्रकार की निरंतर बनी हुई है, जिसके कारण आज भी पितृयज्ञ अक्षुण्ण बना हुआ है।

◆

भविष्य निधि निदेशालय
पंत भवन, पटना।

सप्त दिवसीय गयायात्रा

डॉ० श्रीनिवास शर्मा

आधुनिक काल में भी गया का अपने आप में एक विलक्षण महत्त्व है। इसकी प्राचीनता, पुरातत्त्व सम्बन्धी अवशेषों, इसके चतुर्दिक के पवित्र स्थलों, इसमें किए जाने वाले श्राद्ध–कर्मों तथा गयावालों के विषय में न जाने अब तक हजारों पृष्ठ लिखे जा चुके हैं। इन लेखों के पीछे है, भारतीय संस्कृति की आदर्श भावना। गया में तिलयुक्त जल से तर्पण एवं पिण्डदान के समय जो कहा जाता है, उससे बढ़कर कौन सी उच्चतर भारतीय संस्कृति की विशालता हो सकती है ?कहा जाता है– ''मेरे पितर लोग जो प्रेतरूप में हैं, तिलयुक्त यव (जौ) के पिंडों से तृप्त हों और प्रत्येक वस्तु, जो ब्रह्मा से लेकर तिनके तक चर हो या अचर, हमारे द्वारा दिए गए जल से तृप्त हों''। ये है गया श्राद्ध के विषय में प्रमुख धारणा, अपने प्रिय एवं सन्निकट सम्बन्धियों के प्रति स्नेह एवं श्रद्धा की उदात्त भावना। बहुत प्राचीन काल से हमारे विश्वास के तात्विक दृष्टिकोणों, धारणाओं के अन्तर्गत ऋषियों, देवों एवं पितरों से सम्बन्धित तीन ऋणों की एक मोहक अवधारणा भी रही है। पितृ–ऋण पुत्रोत्पत्ति से चुकता है, क्योंकि पुत्र पितरों को पिंड देता है। यह सनातन संस्कृति की एक अति व्यापपक एवं विशाल धारणा है। तभी तो एक आदर्श पुत्र आदर्श परम्परा को अपनी माता एवं पिता के प्रति श्रद्धा भावना को अभिव्यक्त करने के लिए गया में श्राद्ध कर्म करता है। गया प्रवेश करने के उपरांत फल्गु स्नान करके उचित संकल्प करता है, मैं *''ओम उद्येत्यादि अश्वमेध – सहस्रजन्मफलविलक्षणफल प्राप्तिकाम: फल्गुतीर्थस्नानमहं करिष्ये''* गया श्राद्ध करूँगा।

वायु पुराण में वर्णन किया गया है कि जो व्यक्ति गया में आकर पिण्डदान करता है, वह सात गोत्रों का उद्धार करता है। ये सात गोत्र हैं– पिता, माता, पत्नी, बहन, पुत्री, फुआ एवं मौसी गोत्र[1]। तिलयुक्त जल एवं पिण्ड सभी लोगों को, सभी बंधुओं, जो जलाये गए हों या ना जलाये गए हों, जो बिजली या डाकुओं से मारे गए हों या जिन्होंने आत्महत्या कर ली हो या जो विविध नरकों की यातना सह रहे हों या जो दुष्कर्मों के फलस्वरूप पशु, पक्षी, कीट, पतंग या वृक्ष हो गए हों, उन सभी को देना चाहिए।

आइये अब गया तीर्थ की सप्त दिवसीय दिव्य यात्रा आरम्भ करते हैं। गया के प्रत्येक तीर्थयात्री को कम-से-कम तीन स्थलों की यात्रा अवश्य करनी चाहिए, यथा फल्गु नदी, विष्णुपद एवं अक्षयवट। गया की पूरी यात्रा कम से कम सात दिनों में पूर्ण होती है। गया में प्रवेश करने पर यात्री को सर्वप्रथम फल्गु नदी में स्नान कर तर्पण एवं श्राद्ध करना चाहिए। तत्पश्चात् प्रेतशिला पर जाकर भात एवं घी का मिश्रित पिण्ड देना चाहिए। वायु पुराण में कहा गया है कि जो व्यक्ति प्रेतशिला पर पिण्ड दे देता है, उसके पितर लोग प्रेत की स्थिति से मुक्त हो जाते हैं। गया में प्रवेश करने के दूसरे दिन यात्री को प्रेत पर्वत पर जाना चाहिए, ब्रह्मकुंड में स्नान एवं तर्णन करके श्राद्ध में तिल, धृत, दही एवं मधु मिश्रित पिण्ड पितरों को देना चाहिए। इसके उपरांत यात्री को विविध रूपों से सम्बंधित लोगों के लिए कुशों पर जल, तिल एवं पिण्ड देना चाहिए। यात्री को तीसरे दिन पञ्चतीर्थी कृत्य करना चाहिए। सर्वप्रथम यात्री उत्तर मानस में स्नान, देवों का तर्पण और पितरों को मन्त्रों के साथ जल एवं श्राद्ध के पिण्ड देना चाहिए। कहा जाता है कि इसका फल पितरों के लिए अक्षय होता है।

इसके आगे के क्रम में यात्री को फल्गु तीर्थ करना चाहिए, जो गया तीर्थों में एक सर्वोत्तम तीर्थ है। इस कृत्य में यात्री फल्गु में पिंडों के साथ श्राद्ध एवं तर्पण करता है। फल्गु श्राद्ध से कर्ता एवं कर्ता से पितर लोग मुक्ति पा जाते हैं। अतएव इसे अवश्य करना चाहिए। गया महात्म्य से कहा गया है। कि फल्गु जलधारा के रूप में आदिगदाधर। फल्गु स्नान से व्यक्ति अपने दस पितरों एवं दस वंशजों की रक्षा करता है। इसके उपरांत यात्री को वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न, अनिरूद्ध, विष्णु एवं श्रीधर को प्रणाम करके गदाधर को पंचामृत से स्नान कराना चाहिए। गया प्रवेश के चौथे दिन यात्री को धर्मारण्य जाना चाहिए, जहाँ पर धर्म राज ने यज्ञ किया था। वहाँ उसे मातंगवापी में (जो धर्मारण्य में ही अवस्थित है) स्नान कर ब्रह्मतीर्थ नामक कूप पर तर्पण, श्राद्ध एवं पिण्डदान करना चाहिए। पांचवें दिन यात्री को ब्रह्मसर में स्नान करना चाहिए और ब्रह्मकूप एवं ब्रह्मयूप (ब्रह्मा द्वारा यज्ञ के लिए स्थापित यज्ञीय स्तंभ) के मध्य में पिंडों के साथ श्राद्ध करना चाहिए। इस श्राद्ध से यात्री अपने पितरों की रक्षा करता है। यात्री ब्रह्मयूप की प्रदक्षिणा और ब्रह्मा को प्रणाम करना चाहिए। गोप्रचार के पास ब्रह्मा द्वारा लगाये गए आम वृक्ष हैं। ब्रह्मसर से जल लेकर किसी आम्र वृक्ष में देने से पितर लोग मोक्षाधिकारी बन जाते हैं। इसके पश्चात् यम एवं धर्मराज को (यम के दो कुत्तों को तथा कौओं को) बलि देनी चाहिए और ब्रह्मसर में स्नान करना चाहिए। छठे दिन यात्री को फल्गु में स्नान कर गयाशिर के कतिपय पदों पर श्राद्ध करना चाहिए। गयाशिर क्रौंचपद से फल्गुतीर्थ तक विस्तृत है। गयाशिर पर किया गया श्राद्ध अक्षय फल देता है। यहाँ पर आदि गदाधर भगवान, विष्णुपद के रूप में रहते हैं। विष्णुपद पर पिण्डदान करने से यात्री एक सहस्र कुलों की रक्षा करता है और अपने को कल्याणमय, अक्षय एवम् अनंत विष्णुलोक को ले जाता है।

सातवें दिन यात्री को गदालोल नामक तीर्थ में स्नान करना चाहिए। गदालोल में पितरों के साथ श्राद्ध करने से यात्री अपने एवम् अपने पितरों को ब्रह्मलोक में ले जाता है। इसके उपरांत उसे अक्षयवट पर श्राद्ध एवं अक्षयवट को प्रणाम कर मंत्रों के साथ पूजन करना चाहिए और अंत में ब्रह्मा द्वारा प्रतिष्ठापित गया के ब्राह्मणों को दान एवं भोजन से सम्मानित करना चाहिए। जब वे परितृप्त हो जाते हैं तब पितरों के साथ देव भी तृप्त हो जाते हैं। इसके उपरांत गया श्राद्धकर्त्ता को पृथ्वी पर झुककर बुलाए गए देवों (पितरों) को चले जाने के लिए कहना है। ''हे पिता एवं अन्य लोगों, आप मुझे क्षमा करें''- ''आगमोस्मि गयाम'', मैं गया में आ गया हूँ।

1. **पितूर्मातुः स्वभार्याया भगिन्या दुहितुस्तथा।**
   पितूष्वसुर्मातूष्वसुः सप्त गोत्राः प्रकीर्तिताः।। वायु० (110/25-26)

2. प्रेतपर्वतों गयावायव्यदिशि गयातो गव्युत्यधिकदूरस्थः।
ब्रह्मकुण्डे प्रेतपर्वतमूल ईशानभागे।। वायु० (110/23-24)
3. मुक्तिर्भवति कर्तृणां पितृणां श्राद्धतः सदा। वायु० (110/3)
4. गंगा पादोदकं विष्णोः फल्गुर्ध्यादिगदाधरः।
स्वयं हिद्रवरुपेण तस्माद् गंगाधिकं विदुः।। वायु० (111/16)
5. क्रौञ्चपादात्फल्गुतीर्थ यावत्साक्षाद् गयाशिरः। वायु० (111/44)
6. ये युष्मान्पूजयिष्यन्ति गयायामागता नराः।
हव्यकव्यैर्धनैः श्राद्धैस्तेषां कुलशतं व्रजेत्।
नरकात् स्वर्गलोकाय स्वर्गलोकात्परां गतिम्।। अग्नि० (114/39-40)

◆

सहायक आचार्य
श्री स्वामी परांकुशाचार्य आदर्श
संस्कृत महाविद्यालय, हुलासगंज (जहानाबाद)

फल्गु का महत्त्व गंगा से कम नहीं

श्री ब्रजनन्दन पाठक

ब्रह्मा जी के विशेष आग्रह पर स्वयं भगवान विष्णु जल रूप में परिणत होकर फल्गु के रूप में बह रहे हैं। वायु पुराण में आया है -

गंगा पादोदकं विष्णोः फल्गुर्ह्यादि गदाधरः।
स्वयं हि द्रवरूपेण तस्माद्गंगाधिकां विदुः।।

अर्थात् गंगा भगवान विष्णु का पादोदक (चरणामृत) हैं। फल्गु रूप में स्वयं आदि गदाधर ही हैं। स्वयं भगवान द्रव (जल) रूप में हैं। इसलिए फल्गु को गंगा से अधिक समझना चाहिए।

जिस प्रकार से मथुरा में यमुना का, अयोध्या में सरयू का, नासिक में गोदावरी का, उज्जैन में शिप्रा का एवं हरिद्वार में गंगा का महत्त्व है, उसी प्रकार से गया में फल्गु का महत्त्व है। धर्म, अर्थ, काम की पूर्णता तभी सार्थक मानी जाती है, जब चौथा एवं अन्तिम पुरुषार्थ मोक्ष की प्राप्ति हो और वह गया में फल्गु जल के स्पर्श मात्र से सहज ही प्राप्त होता है।

दरअसल झारखंड के चतरा में सिमरिया के पास कई जल स्रोत प्रकट होकर नदी का स्वरूप धारण कर आगे बढ़ती है, जिसे निरंजना नदी कहते हैं। इसके बाद यह हंटरगंज एवं डोभी के पास से गुजरते हुए बोधगया पहुँचती है। जहाँ इसी के किनारे महाबोधि वृक्ष के नीचे भगवान बुद्ध को ज्ञान प्राप्त हुआ था। आज यहाँ विश्वप्रसिद्ध महाबोधि मंदिर अवस्थित है। पुनः यह नदी गया की ओर उत्तर दिशा में आगे बढ़ती है।

झारखंड के ही हजारीबाग जिला के सिला नामक गाँव के समीप से एक नदी निकलती है जिसमें कई छोटी-छोटी नदियों का जल मिलकर मोहाने नदी बनती है। बोधगया से उत्तर निरंजना और मोहाने जिसे सरस्वती भी कहते हैं आपस में मिलती है। दो नदियों का यह संगम क्षेत्र धर्मारण्य कहलाता है। जहाँ युधिष्ठिर ने यज्ञ किया था, जिसका वर्णन महाभारत में भी है। यहीं पर मातंगवापी और धर्मारण्य दो बेदियाँ भी हैं।

गया शहर में दंडीबाग के समीप निरंजना और मोहाने के सम्मिलित धारा में मधुश्रवा नाम की एक और छोटी नदी मिलती है (जो अब प्रदूषित होकर मनसरवा नाला के रूप में बदल गई है) और इन तीनों नदियों के एक साथ मिलने से गया क्षेत्र में मोक्षदायिनी फल्गु नदी का स्वरूप प्रकट होता है, जो गया में लगभग 2700 फीट चौड़ी है।

गया शहर में फल्गु नदी के पश्चिम दिशा में ब्रह्मयोनि पहाड़ी है इसकी पूर्वी श्रृंखला जो भष्मकूट पर्वत कहलाती है, पर मंगलागौरी नाम से प्रसिद्ध शक्तिपीठ है। इसके ऊपर जनार्दन मंदिर है। इसके दक्षिण-पश्चिम दिशा में प्रसिद्ध अक्षयवट वृक्ष है जहाँ पिण्डदान के उपरांत पंडा जी सुफल प्रदान करते मार्कण्डेय ऋषि ने वेद की ऋचाओं को लिखा था।

फल्गु नदी के पश्चिमी तट पर ही विश्वप्रसिद्ध विष्णुपद मंदिर है। वायु पुराण के अनुसार गया क्षेत्र में गयासुर नाम का असुर कठोर दर्शन या स्पर्श करता, वह मरनोपरांत सीधे बैकुण्ड चला जाता। फलस्वरूप दुराचारी और पापी व्यक्ति भी सीधे स्वर्ग जाने लगे। इससे देवताओं में धबराहट होने लगी तदुपरांत सभी देवताओं ने भगवान विष्णु से इसका कोई हल निकालने हेतु प्रार्थना किया। तब भगवान विष्णु स्वयं गया क्षेत्र में प्रकट होकर गयासुर के वक्ष-स्थल पर धर्मशीला रखकर अपने दायाँ चरण से दबा दिये, जिस पर वह शांत हो गया और भगवान विष्णु से वर माँगा कि इस शिला पर आपके चरण कमल का शास्वत प्रतिष्ठा हो, जब-तक सूर्य एवं चंद्रमा विदयमान रहें तब तक ब्रह्मा, विष्णु और महेश इस शिला पर अधिष्ठान रहें तथा जो इस शिला पर पिण्डदान करे उसके पितृगण सभी पापों से मुक्त होकर स्वर्ग में वास करें। भगवान विष्णु ने उसकी अभ्यर्चना को अक्षरशः स्वीकार कर लिया और यहाँ भगवान विष्णु का चरण कमल स्थापित हो गया।

तत्र विष्णु पदं दिव्यं दर्शन पाप नाशनम्।
स्पर्शनं पूजनं चैव पितृणां दत्तमक्षयम्।।

अर्थात्- गया में दिव्य विष्णुपद है जिसके दर्शन से पापों का नाश होता है। स्पर्श एवं पूजन करने से पितरों को मोक्ष मिलता है।

इस स्थान पर प्राचीन मंदिर का जिर्णोद्धार इंदौर की महारानी अहिल्याबाई होल्कर ने 1766 ई० में करवाया। ग्रेनाईट पत्थरों से निर्मित यह मंदिर स्थापत्य कला का बेजोड़ नमूना है। मुख्य गर्भग्रह, सामने स्तम्भयुक्त मण्डप और चारों ओर परकोटा से घिरा हुआ खुला प्रांगण। मंदिर का गर्भगृह अष्टभुजाकार है। इसके शिखर की ऊँचाई 100 फिट है।

इस मंदिर के समीप ही गदाधर विष्णु मंदिर, प्रपिता महेश्वर मंदिर, गयेश्वरी मंदिर आदि प्रमुख मंदिर है। विष्णुपद मंदिर के पूरब फल्गु नदी तो साक्षात मुक्ति धाम ही है।

इसके ठीक सामने फल्गु के पूर्वी तट पर सीता कुण्ड है, जहाँ सीता जी ने फल्गु नदी, ब्राह्मण, केतकीफूल, चरती गाय एवं अक्षयवट को साक्षी मानकर महाराज दशरथ के लिए पिण्डदान किया था। परंतु भगवान राम के समक्ष अक्षयवट को छोड़कर शेष चारों के मुकर जाने पर सीता जी ने फल्गु नदी को 'अंतः सलिला' होने का शाप दे दिया था। फलस्वरूप फल्गु नदी बरसात को छोड़कर शेष समय में सुखी रहती है, परंतु थोड़ा-सा बालु हटाने पर इसमें जल निकल आता है।

फल्गु के पश्चिमी तट पर ही विष्णुपद के समीप सूर्यकुण्ड एवं सूर्य मंदिर, ब्राह्मणी घाट का सूर्य मंदिर एवं पितामहेश्वर का सूर्यमंदिर है। पितामहेश्वर में भगवान शंकर एवं शीतला माता का मंदिर भी है। गया शहर

में फल्गु के उत्तरी भाग में रामशिला पहाड़ी एवं वेदी है और पहाड़ी के नीचे भगवान राम, लक्ष्मण, जानकी एवं हनुमान जी का भव्य मंदिर है। यहाँ मूँगा का गणेश भगवान एवं स्फटिक का शविलिङ्ग भी स्थापित है। फल्गु नदी में गदाधर घाट, देवघाट, संगतघाट, गायत्री घाट, ब्राह्मणीघाट, पितामहेश्वर घाट, महादेव घाट, सीढ़िया घाट, किरानी घाट, बैकुण्ड घाट आदि अनेक घाट हैं। जहाँ छठ आदि के अवसर पर भारी भीड़ जमा होती है।

'फल्म् ददाति च फल्गु' अर्थात् जो फल दे वह फल्गु है। वायु पुराण के गया महात्म में फल्गु नदी के महत्त्व का वर्णन करते हुए वेदव्यास जी कहते हैं –

तीर्थानि यानि सर्वाणि भुवनेष्वखिलेष्वपि।
तानि स्नातु समायान्ति फल्गुतीर्थे सुरैः सह।।

अर्थात्– सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में जितने भी तीर्थ हैं वे सभी देवताओं के साथ फल्गु तीर्थ में नित्य स्नान के लिए आते हैं। और

अश्वमेध सहस्राणां सहस्रं यः समाचरेत्।
नासौ तत्फलमाप्नोति फल्गुतीर्थे यदाप्नुयात्।।

अर्थात्– हजारों अश्वमेघों को हजारों बार करें, तो भी वह फल प्राप्त नहीं होता जो फल्गु तीर्थ को प्राप्त करके अर्थात् स्नान करके होता है। ऐसा महान महत्त्व है मोक्षदायिनी फल्गु का।

या में सर्वप्रथम देवासुर संग्राम में मरे देवताओं का श्राद्ध सृष्टिकर्त्ता ब्रह्मा जी ने किया था। इसके बाद देवराज इन्द्र ने वृत्रासुर संग्राम में मरे देवताओं का श्राद्ध किया। धर्मग्रंथों में श्रवण कुमार, भगवान श्री राम, महाराज युधिष्ठिर आदि के द्वारा गया तीर्थ में आकर श्राद्ध करने का वर्णन मिलता है। कहा गया है–

ब्रह्मज्ञानेन किं कार्यं गोग्रहे रणेन किंम्।
वासेन किं कुरुक्षेत्रे यदि पुत्रो गयां ब्रजेत्।।

अर्थात्– 'ब्रह्म ज्ञान का होना, गोशाला में मृत्यु एवं कुरूक्षेत्र में वास कि क्या आवश्यकता है ?यदि पुत्र गया में जाकर श्राद्ध कर दे।' तभी तो पितृपक्ष के अवसर पर एवं सामान्य दिनों में भी देश विदेश के लाखों श्रद्धालु फल्गु नदी के तट पर प्रतिवर्ष पिण्डदान के लिए आते हैं। छठ व्रत के अवसर पर भी फल्गु नदी में हजारों श्रद्धालु भगवान सूर्य का अर्ध्य देते हैं। कार्तिक पूर्णिमा एवं निर्जला एकादशी के अवसर पर भी फल्गु नदी में बड़ी संख्या में श्रद्धालु आते है।

गया से आगे बराबर पहाड़ी के पास फल्गु पुनः दो धाराओं में विभक्त हो जाती है तथा और आगे जाकर वह अनेक धाराओं में विभक्त होकर खेतों में फैल जाती है। इस नदी से इस क्षेत्र में खेतों की सिंचाई होती है। फल्गु के तट पर दुनियाँ की महानतम वैदिक एवं बौद्ध संस्कृति पल्लवित–पुष्पित हुई है। और यह नदी हमारी परमोज्ज्वल संस्कृति की कृतिवाहिनी है।

परन्तु खेद का विषय है कि आज फल्गु के अस्तित्व पर ही संकट उत्पन्न कर दिया गया है। जो काम रावणों और दुशासनों ने नहीं किया वह काम आज की पीढ़ी कर रही है। फल्गु के पश्चिमी तट पर गया शहर के दक्षिण में केन्दुई से लेकर बीथोशरीफ तक एवं पूर्वी तट पर मानपुर में सीताकुंड से लेकर बुनियादगंज थाना तक फल्गु के जमीन का अतिक्रमण कर सैंकड़ों मकान बना लिए गये हैं। वहीं सरकार द्वारा भी घाटों के निर्माण के नाम पर फल्गु नदी का अतिक्रमण किया जा रहा है। गया शहर के सभी नालों का गंदा पानी बगैर कोई सफाई

किये सीधे फल्गु नदी में बहा दिया जाता है, जिसके कारण फल्गु नदी बुरी तरह प्रदूषित हो चुकी है। इतना ही नहीं फल्गु नदी से सैकड़ों ट्रैक्टर बालू का उत्खनन प्रतिदिन किया जा रहा है, जिसके कारण फल्गु की जलधारण क्षमता कमती जा रही है।

आज जरूरत है फल्गु नदी को अतिक्रमण एवं प्रदूषण से बचाने एवं संरक्षण हेतु जन-जन को उठ खड़ा होने की। तभी आने वाली पीढ़ियाँ फल्गु के तट पर अपने पूर्वजों को मोक्ष प्रदान करने हेतु पिण्डदान कर सकेगी और फल्गु यहाँ के खेतों की सिंचाई करते रहने के साथ-साथ यहाँ की संस्कृति को सिंचित करती रहेगी और तभी आचार्य चंद्रशेखर मिश्र के शब्दों में किसी प्रकार से भी फल्गु जल का स्पर्श पितरों को स्वर्ग का मार्ग प्रसस्त करती रहेगी।

यदा-कदी गयामुपेत्य येन-केन हेतुना,
पदोच्छलज् जलाऽङ्गलिः, कृतोऽथवा जलाऽञ्जलिः।
ब्रजन्ति दिव्य-यानतो, दिवं तदीय-गोत्रजाः,
शुभाशिषा प्रसादयन्ति तं, स्व' भूर हरिः शिवः।।

◆

सामाजिक कार्यकर्त्ता
गुरुद्वारा रोड, गया - 2

गया में बारहो मास पिंडदान

श्री अशोक कुमार अंज

बिहार प्रदेश के गया विष्णुपद स्थित फल्गुतट महत्त्वपूण्र तीर्थ स्थली है। जहाँ पिंडदान के माध्यम से पितरों को मुक्ति प्राप्त होती है। यहाँ बारहो मास पिंडदान का सिलसिला जारी रहता है। यह मोक्षधाम फल्गु नदी के तट पर अवस्थित है जो अतिप्राचीन है। हिन्दुओं का पिंडदान महान पितृपर्व है। यहाँ भक्तिमय वातावरण कायम है। गया धर्म का गढ़ है, जो अनोखी है। गया पावन कल्याणकारी स्थल है। देव घाट में पिंडदानियों की अधिक भीड़ जुटती है। ये देव भूमि की नगरी है। यहाँ पितृपक्ष काल में विभिन्न योनियों के तैंतीस करोड़ देवी-देवता निवास करते है।। अनेक तीर्थों में पितृपक्ष काल में भिन्न व एकलौती है। यह तीर्थ अनोखी है ही, अद्वितीय भी। क्योंकि गया में पिंड देकर ही लोग मातृ-पितृ ऋण से उऋण होते हैं, ऐसी मान्यता है। जो वेद व पुराण में स्वर्णाक्षरों में अंकित है। ये तीर्थ बिहार राज्य के गया जिला में स्थित है। यहाँ हरेक साल पितृपक्ष मेला आयोजित होता है। ये मेला धूमधाम के साथ लगता है, जिसे पितरों का महाकुंभ कहा जाता है। यहाँ अधिकांशतः बुजुर्ग लोग ही पिंडदान करने आते-जाते हैं। इसमें बुजुर्गों सहित युवा व अधेड़ आयु वर्ग वाले महिला और मर्द शिरकत करते हैं। गयाधाम को आदर सहित गयाजी की संज्ञा दी गई है। गयाजी दुर्गम नागकूट, मुरली तथा भस्मकूट शामिल है। सनातन हिन्दूधर्मावलंबियों का पिंडदान महान कर्म-कांड है। इसमें श्राद्ध सामग्री जैसे पीतल का बर्तन इत्यादि चढ़ाया जाता है, जिससे पितरों को सदगति प्राप्त होती है। वहीं प्रेतशिला में श्राद्ध-कर्म और अक्षयवट में संपूर्ण कर्मकांड संपादित होते हैं। इससे पिंडदानियों को समस्त बाधाओं से मुक्ति तथा पूर्वजों को स्वर्ग प्राप्त होते हैं। ऐसी आस्था मान्य है।

जाहिर है कि भादो माह के शुक्ल पक्ष की अनंत चतुर्दशी के दिन से पितृपक्ष मेला आरंभ होता है। पितृ तीर्थाटन करने के लिए देश-विदेश के यात्री आते-जाते हैं। यहाँ के पवित्र स्थानों के घाटों पर श्राद्ध-क्रिया पिंडदान सहित तर्पण किया जाता है। पिंडवेदी स्थलों में फल्गु नदी का तट, विष्णुपद मंदिर, सीताकुंड, निरंजना नदी, महाबोधि मंदिर, प्रेतशिला, रामशिला, कागवली और अक्षयवट मुख्य है। मुख्यत: इन्हीं स्थलों पर पिंडदान का कार्य संपादित होते हैं। यहाँ पूर्व में कुल 365 पिंडवेदियाँ थीं, जो विलुप्त होती चली गयीं। फिलवक्त 45 पिंडवेदियाँ बची हैं, जिस पर पिंडदान किया जाता है। तीर्थस्थलों में उक्त स्थलों का खास महत्त्व है। यहीं पिंडतीर्थ-कर्म क्रियान्वित होते हैं। इस पिंडदान से पिंडदानियों के 101 पूर्वजों की पीढ़ी को मुक्ति प्राप्त होती है। ज्यादातर पिंडदानी तीन दिनी पिंडदान करते हैं। वहीं कुछ पिंडदानी 17 दिनी पिंडदान करते हैं। गयाजी के मशहूर नदियों और सरोवरों में पिंडदान की जाने की रिवाज है। प्रेतशिला में धामी पंडा ही श्राद्ध-पिंडदान कराते हैं।

वहीं पटना जिलांतर्गत स्थित पौराणिक पुनपुन नदी घाट पर भी पिंडदानी पिंड देते हैं। वैसे तो पिंडदान सालो भर होते ही रहता है। फिर भी हरेक पितरों के लिए लगते हैं पितृमेला। यह मेला गयाजी में व्याप पैमान पर लगती है। यह मेला विश्व प्रसिद्ध है। इस मौके पर बड़ी संख्या में देश-विदेश के यात्री आते-जाते हैं, अपने पितरों के पिंडदान करने के लिए। यहाँ पिंडदानियों की भीड़ उमड़ पड़ती है। इस पावन देव भूमि पर पितरों का श्राद्ध-कर्म होता है। ये कर्म काण्ड गयापाल पुरोहित ही कराते हैं। गयापाल पुरोहितों को गयावाल भी कहा जाता है। वे पिंडदानियों का बही-खाता भी रखते है।। उस बही-खाते में पिंडदानियों का नाम व पता दर्ज होता है। इसी से पिंडदानियों के पुरोहितों का पता चलता है। कौन पिंडदानी कब, कहाँ से आये और गए उस खाते में अंकित होते हैं। इस कर्म के लिए पिंडदानियों को गया आना अनिवार्य है। बगैर फल्गु नदी का निर्मल जल व अक्षयवट का स्पर्श किए कल्याण नहीं हो सकता है। क्योंकि फल्गु अंत:सलिला तथा अक्षयवट जिंदा वृक्ष है, जो वैदिक काल का है। इसकी छाया व स्पर्श से प्राणियों को कल्याण होते हैं। मान्यता ऐसी है कि पिंडदान से पितरों को तृप्ति होती है। गयाजी के महापावन विष्णुपद का पिंड भूमि मोक्षदायनी है। यहाँ श्रद्धारुपी पिंडदान से पितरों की आत्माओं को तृप्ति मिलती है। प्रत्येक साल मुक्तिदायनी गया नगरी में पितृपक्ष मेला आयोजित होता है। लोग मेले में आते और अपने पितरों को श्राद्ध, पिंडदान व तर्पण करते हैं, जो विशुद्ध धार्मिक कर्म है। ये परंपरा वैदिक काल से ही चला आ रहा है। इस मौके पर अंत:सलिला फल्गु नदी की महा आरती भी की जाती है। गया को **गयाजी** की संज्ञा दी गई है। यहाँ सितम्बर माह में हरेक साल मेला आयोजित होता है। ये पितृपक्ष मेला 17 दिनों का होता हैं ये 17 दिन पिंडदान के लिए काफी उपयुक्त होते हैं। ये प्राच्य युगीन तीर्थ है। यहाँ के कण-कण में भगवान विष्णु रचे-बसे हैं। जो सिद्धिदायक है ही, मनोकामनाप्रद भी। विदित हो कि पितृपक्ष के मौके पर सिर मुंडन का विधान है। जो काफी प्रचलित है। ज्ञात हो कि गेहूँ तथा जौ के आटा का गोल पिंड बनता है। इसमें तिल मिलाया जाता है। वहीं पितरों को समर्पित किया जाता है। इसके अलावे फल्गु नदी के बालू का पिंड दिये जाते हैं इन्हीं पिंडों से पूर्वजों को मुक्ति मिलती है। क्योंकि प्रभु श्रीराम की पत्नी सीता ने अपने ससुर दशरथ की आत्मा की शांति के लिए बालू का ही पिंड दी थी। बालू के पिंड बगैर पिंडदान सफल नहीं माना जाता है। कुछ नहीं तो सिर्फ बालू के पिंड से भी पूर्वज तृप्त हो जाते हैं। इतना ही नहीं फल्गु नदी के स्पर्श मात्र से भी पूर्वजों की आत्माओं को तृप्ति मिलती है। ऐसी महता है गयाजी की अत:सलिला फल्गु नदी की। अग्नि व वायु पुराण में इसकी महत्व की चर्चाएं मिलती है। वहीं महाभारत धार्मिक ग्रंथ में भी विस्तार से वर्णित है। पितरों के तरण-तारन के लिए पिंडदान शुभ फलदायक है। धार्मिक मान्यता ऐसी है कि ब्रह्माजी ने सर्वप्रथम

इस तीर्थ की स्थापना की थी। तब से आज तक ये सिलसिला बरकरार है। भैरव चक्र पर अवस्थित इस गया को आदी काल में आदि गया कहा जाता था। प्राचीन कथा है कि गयासुर देववृत्ति से परिपूर्ण विष्णु का परम भक्त था। गयासुर असुर वंश में अवतरित हुआ था। जो गया जाति का था और असुर था। लेकिन स्वाभाव से वह देवताओं जैसा ही था। ग्रंथों के अनुसार गयासुर सवा सौ योजन उंच्चा और साठ योजन मोटा था। जिसके पिता त्रिपुरासुर और माता प्रभावती थीं। धर्मग्रथों में विवरण मिलता है कि गयासुर के पिता त्रिपुरासुर का वध कर डाला था। परंतु संत स्वभावी गयासुर ने प्रतिशोध में कोई विपरित कृत नहीं किया। बल्कि धार्मिक आचरण अपना लिया और पूजा-पाठ, धार्मिक अनुष्ठान करने लगा था। गयासुर ने अपने दाहिने पैर के अंगूठे पर अनवरत हजार वर्षों तक भूखे-प्यासे खड़े रहे। दुर्गम पहाड़ पर कठोर तपस्या किया था। उसकी कठोर तपस्या से भगवान विष्णु खुश होकर वर दिए थे। भक्त की भक्ति से प्रसन्न होकर प्रभु विष्णु ने गयासुर को साक्षात दर्शन दिए और वरदान भी। भगवान विष्णु ने वर दिया कि जो विष्णुपद धाम में पिंडदान व तर्पण आदि करेगा, उसका मनोरथपूर्ण होगा। उसे समस्त बाधाओं से मुक्ति मिलेगी। जो कोई प्राणी विष्णुपद में श्राद्ध-पिंडदान करेगा, उसका और उसके पर्वजों का भी उद्धार होगा। प्राचीन मान्यता है कि गयासुर के शरीर पर ही पिंडदान होता है। गयासुर ने सिर उत्तर दिशा की ओर और पांव दक्षिण दिशा की तरफ कर के सोए थे। तभी से ये प्राच्य परंपरा चली आ रही है। गयासुर के पवित्र पुण्यकारी शरीर पर ही यज्ञ संचालित हुआ। जो आज तक अनवरत संचालित है। इसी मान्यता के आधार पर पितृपक्ष मेला लगता है। इसी महत्व को लेकर ये मेला देश ही नहीं विदेशों में भी मशहूर है। यहाँ भगवान विष्णु का एक अतिप्राचीन मंदिर है जिसमें विष्णु का पद स्थापित है। ये मंदिर फल्गु नदी के तट पर अवस्थित है। वहीं इसी मंदिर के सटे श्यमशान घाट है। जहाँ मृत मानवों का अंतिम संस्कार होता है। सच, अजीवोगरीब है ये स्थल-एक तरफ पूर्वजों का श्राद्धरूपी पिंडदान तो दूसरी तरफ मृत मानवों का अंतिम संस्कार। सच, धर्म और कर्म की विचित्र संगम स्थली है। एक तरफ चिताओं से भरा पड़ा है गया की पावन तप:स्थली, तप:भूमि। गया में अनेक देवी-देवताओं की प्राचीन मंदिर व मूर्तियां हैं। इसके अलावे कई दर्शनीय स्थल भी हैं। जिसमें बोधगया का विश्वदाय महाबोधि मंदिर भी शामिल है। यहाँ पहुँचने के लिए सड़क, रेल तथा हवाई मार्ग की भी सुविधा है। यहाँ यात्रियों के विश्राम के लिए कई बेततरीन होटल की सुविधाएं उपलब्ध हैं। वहीं जिला प्रशासन की ओर से भी यात्रियों की ठहरने की व्यवस्था की जाती है। धर्मशालाओं और पंडागृहों में यात्रियों का आवासन की व्यवस्था होती है। मेला क्षेत्र में यात्रियों की देख-भाल के लिए चिकित्सा शिविरों की भी व्यवस्था की जाती है। वहीं सुरक्षा व्यवस्था भी दुरूस्त होती है। विदित हो कि विष्णुपद मंदिर की उंचाई 100 फीट और मंडप 50 वर्ग फीट की है। मंदिर मंडप में भगवान विष्णु का पद चिन्ह् 13 इंच लंबा है। जो अति प्राचीन है ही, ऐतिहासिक भी। जो प्राच्य गौरवशाली गाथा की गवाह है।

◆

दूरदर्शन पत्रकार-साहित्यकार
एवं लघु फिल्मनिर्माता-निर्देशक
दूरदर्शन केन्द्र, पटना

पितृपक्ष और जीवित पुत्रिका व्रत

श्रीमती चंचला 'रवि'

भारत पर्वों का देश है, त्याहारों की भूमि है यही कारण है कि यहाँ सालों भर किसी-न-किसी क्षेत्र में पर्वोत्सव की धूम बनी रहती है। अपने मगध में पितृपर्व का जोर आदि काल से है। पितृपक्ष अथवा श्राद्ध-पक्ष नाम से किया जाने वाला यह अनुष्ठान भाद्रपद पूर्णिमा से आश्विन अमावस्या तक सम्पन्न किया जाता है। इस पर्व के नाम से ही इसकी महत्ता प्रतिपादित होती है, जिसे पितर-स्मरण का पर्व अथवा 'श्राद्ध पर्व' भी कहा जाता है इसमें श्राद्ध, पिंडदान और तर्पण का विधान है।

पितृपक्ष में पन्द्रह दिनों में बड़ी ही प्रेम, निष्ठा, श्रद्धा व आदर भाव के साथ पितृ कर्म को पूर्ण करना चाहिए। इसमें पितरों की स्मृति के साथ श्रद्धांजलि, दान व ब्राह्मण भोजन का विशेष प्रचलन है।

भारतीय धार्मिक परम्परा में पुत्र-पुत्रादिकों को श्राद्ध पिंडदान का हेतु कहा गया है और पुत्रों के लिए किया जाने वाला पर्व जीवित पुत्रिका व्रत इसी पितृपक्ष की अवधि में सम्पन्न होना इस तथ्य का अकाट्य प्रमाण है कि पितृपर्व के निर्वहन में पुत्रों का विशिष्ट योगदान है।

पितृपक्ष अर्थात् पन्द्रह दिनों की अवधि और इसी में आधे की स्थिति पर ही जीवित पुत्रिका व्रत की परम्परा है। अपने कुल की वंशवृद्धि और पुत्र के सर्वांगीण विकास के लिए किया जाने वाला जीवित पुत्रिका व्रत जिसे मगध क्षेत्र में 'जीतिया' कहा जाता है कई अर्थों में पितृ परम्परा के वाहक हैं।

जहाँ तक जीतिया पर्व की बात है जीवित पुत्रिका व्रत कथा से ज्ञात होता है कि सप्तमी से रहित और उदयातिथि की अष्टमी को व्रत किए जाने का विधान है अर्थात् सप्तमी विद्ध अष्टमी जिस दिन हो उस दिन व्रत न कर शुद्ध अष्टमी को व्रत किया जाता है और नवमी तिथि में 'योग' के बाद ही पारण की बात होती है। महाभारत काल में इस कथा को धौम्य ऋषि ने द्रौपदी को बताया। इस तरह कुरूक्षेत्र, मध्य देश व नैमिषारण्य और काशी होते यह पर्व मगध देश का प्रधान लोक पर्व बन गया। क्या बड़ा, क्या छोटा सभी परिवारों की महिलायें यहाँ जीतिया अवश्य करती है।

इसी तिथि को आधा श्राद्ध समाप्त हो जाता है इस कारण बहुतेरे स्थान में आज के दिन 'मध्याष्टमी' का विशेष आयोजन किया जाता है। कुल मिलाकर भारतीय सांस्कृतिक समागम में जीवित पुत्रिका व्रत एक लोकप्रिय जन आस्था से अभिमंडित लोक पर्व है जो हरेक वर्ष पितृपक्ष में ही सम्पन्न होता है।

◆

अखिलेशायन
गोदावरी (भैरोस्थान), गया

गया में रेल व्यवस्था

डॉ० मनोज कुमार अम्बष्ट

विश्व के प्राचीनतम शहरों में से एक-गया, जिसकी सभ्यता सदैव अक्षुण्ण रही, अनादि काल से ही एक धार्मिक स्थल के रूप में मान्य है। त्रेता युग में राजा दशरथ के स्वर्गवास के उपरान्त भगवान राम, जगत जननी सीता और लक्ष्मण का अपने पिता के पिंडदान हेतु गया आना उन्हें प्राचीन ग्रंथों और इतिहास में दर्ज गया के प्रथम तीर्थ यात्री के रूप में स्थापित करता है। समय के साथ और सिद्धार्थ द्वारा बोधगया में ज्ञान की प्राप्ति के उपरान्त तीर्थयात्रियों की संख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि होती गयी। कच्ची सड़कों के बाद पक्की सड़के, मोटरगाड़ियाँ और बाद में वायुयान के परिचालन से तीर्थ-यात्रियों के आवागमन की सुविधा बढ़ी, जिनमें रेल का महत्त्वपूर्ण स्थान है।

रेल का आविष्कार और भारत में परिचालन :-

ब्रिटिश अभियन्ता किलियम जेसप ने सन् 1789 ई० में सर्वप्रथम लोहे की पटरी बनायी थी, जिसका उपयोग यूरोप में कोयला आदि ढोने में होता था। सन् 1814 ई० में जॉर्च स्टीफेंसन ने स्टीम लोकोमोटिव इंजन का अविष्कार कर परिवहन के क्षेत्र में क्रांति ला दी। स्टीफेंसन के चार साल के कठिन परिश्रम के उपरान्त सन् 1825 ई० में दुनिया की पहली रेलगाड़ी इंगलैंड के स्फाकटन और डालिंगटन शहर के बीच चली। फिर तो, फ्रांस में 1829, अमेरिका में 1830, इंगक्ल हॉलेंड एवं इटली में 1939 और स्पेन में 1848 में यात्री रेलगाड़ियाँ शुरू हुई। भारत में रेल परिवहन की कल्पना सन् 1844 ई० में की गयी और स्टीफेंसन ने इस्ट इंडियन रेलवे कम्पनी की स्थापना कर पहले रेलमार्ग का प्रस्ताव रखा।

इस्ट इंडिया कम्पनी द्वारा भारत में व्यापरिक हितों के मद्देनजर रेल की आवश्यकता महसूस की गयी। द ग्रेट इंडियन पेनिनसुला रेलवे की स्थापना करने वाले जान चैपमेंन के प्रयास से तत्कालीन ब्रिटिश सरकार ने सन् 1845 ई० में भारत में रेल चलाने के प्रस्ताव को मंजूर कर लिया और 19 अप्रैल कों मुंबई और ठाणे के बीच रेल लाईन बिछाने की मंजूरी दी गयी। इसके बाद रेलवे पर सरकार अथवा निजी क्षेत्र के नियंत्रण और वित्तीय व्यवस्था को लेकर यह परियोजना पाँच साल तक उलझी रही। पहला लोकोमोटिव इंजन सन् 1852 ई० में भारत आया और मुख्य अभियन्ता जेम्स वर्कले की देखरेख में मुम्बई ठाणे रेलवे तैयार हुई। इसके पूर्व सन् 1851 ई० में भारत के पहले स्टीम लोाके मोटिव 'थॉम्पसन' का उपयोग रूड़की में निर्माण कार्य में किया गया था। दिनांक 15 अप्रैल 1853 ई० दिन शनिवार को दोपहर 3.30 बजे पहली रेलगाड़ी बोरिबंदर स्टेशन से ठाणे के लिए चौदह बोगियों के साथ इक्कीस तोपों की सलामी के बाद रवाना हुई और 21 मील की दूरी तय की। इसे तीन लोकोमोटिव सुल्तान, सिंघ और साहिब खींच रहे थे। इसे चलाने के श्रेय द ग्रेट इंडियन पेनिनसुला रेलवे (स्वतंत्रता उपरांत सेन्ट्रल रेलवे) को जाता है। भारत में रेलवे के विकास में लार्ड डलहौजी की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही। सन् 1858 ई० में महारानी विक्टोरिया के सत्ता संभालते ही भारत में रेलवे के विकास में गति आ गयी। सन् 1869 तक भारत में रेल-निर्माण और विस्तार ब्रिटिश कम्पनियों के हाथ में था, जिन्हें मुफ्त भूमि और 5 प्रतिशत ब्याज देने की व्यवस्था थी। इसके कारण सन् 1854-98 के मध्य से 58 करोड़ की हानि हुई और उसके बाद मुनाफा शुरू हुआ। सन् 1876-79 के बीच सरकार ने रेलवे का निर्माण अपने हाथों में ले लिया पर वह इस अवधि में मात्र 2200 मील ही पटरियाँ बिछा सकी। पुन: 1879-1914 के मध्य निजी कम्पनियों को रेलवे का निर्माण सौंपा गया और उन्हें मुफ्त भूमि तथा अपेक्षाकृत कम ब्याज 3.5 प्रतिशत के

वित्तीय सहायता की सुविधा प्रदान की गयी। पर सरकार ने मुनाफा में से 60: की हिस्सेदारी की माँग की। संविदा की अवधि समाप्त होने पर सरकार ने ईस्ट इंडियन रेलवे, ईस्टर्न बंगाल रेलवे, सिंघ, पंजाब एंड डेल्ही रेलवे, अवध एंड रोहिलखंड रेलवे, द ग्रेट इंडियन पेनिनसुला रेलवे तथा बॉम्बे, बड़ौदा एंड सेंट्रल इंडिया रेलवे को क्रमश: सन् 1880, 1884, 1886, 1889, 1900 तथा 1905 ई० में खरीद लिया। रेल के संचालन के लिए 1890 में रेलवे अधिनियम भी बना। सन् 1891 ई० में ग्रेट इंडियन पेनिनसुला रेलवे ने ट्रेन के प्रथम श्रेणी के डिब्बों में शौचालय लगाये थे जो 169 वर्षों बाद सन् 1907 ई० में निम्न दर्जे के डिब्बों में भी लगाये गये। सन् 1907 ई० में मद्रास रेलवे को भी संविदा को समाप्त कर ब्रिटिश सरकार ने लगभग सभी प्रमुख कम्पनियों का अधिग्रहण कर लिया। इंडियन रेलवे के स्पेशल कमिशनर टॉमस रॉबर्टसन (अक्टूबर 1901) तथा सर जॉन मैके की अध्यक्षता वाले रेलवे फिनान्स एंड एडमिनिस्ट्रेशन कमिटि (1907) की अनुशंसाओं से भी रेलवे को लाभ मिला। सन् 1920 में सर विलियमस एम० एक्वर्थ की अध्यक्षता में गठित ईस्ट इंडिया रेलवे कमिटि को सिफारिशों को स्वीकार करते हुए सरकार ने दिनांक 20 सितम्बर 1924 ई० में सेन्ट्रल लेजिस्लेटिव एसेम्बली में एक प्रस्ताव पारित कर वित्त बजट से रेलवे वजट को अलग कर दिया। सन् 1925 ई० में पहली इलेक्ट्रिक ट्रेन विक्टोरिया टर्मिनस से कुर्ला के बीच चली। मंदी के दौरान, पोप समिति 1932-33 तथा वेगवुड समिति 1936-37 की सिफारिशों के अनुरूप रेलवे में कई सुधार किये गये। यात्री ट्रेनों में वातानुकूलन का कार्य सन् 1936 ई० में शुरू किया गया। प्रथम विश्व युद्ध और द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान सामान, युद्ध सामग्री और सैनिकों को ढोने के लिए रेल की व्यापक आवश्यकता महसूस हुई। आजादी के समय भारत में 37 रेल व्यवस्था थी, जिन्हें बाद में भारतीय रेल बना कर नौ क्षेत्रों में बाँट दिया गया। सन् 1937 तथा 1947 ई० में भारत में रेल व्यवस्था का बर्मा रेलवे और पाकिस्तान रेलवे के रूप में बॅटवारा भी हुआ। भारत में विभिन्न वर्षों में रेल पटरियों को स्थिति निम्नांकित थी-

वर्ष		रेल पटरियों की कुल लम्बाई (मील में)	
1859	-	432,	
1869	-	5000,	
1879	-	7200	
1900	-	25000,	
1913-14	-	34700	
1925-26	-	38600	
1933	-	43000	
1947	-	34000	(वर्मा रेलवे एवं पकिस्तान रेलवे का विभाजन)
1960-61	-	35400	

(स्रोत-इकानोमिक हिस्ट्री ऑव इंडिया अंडर द ब्रिटिश, ले०टी०बी० देसाई तृतीय संस्कम 1972,

सन् 1865 ई० में मुंबई के भायखला में लोकोमोटिव इंजन बनाने का काम शुरू हुआ। भारत में पहला लोको राजपूताना रेलवे द्वारा सन् 1895 ई० में बनाया गया। जमालपुर कारखाना द्वारा पहला लोकोमोटिव इंजन सन् 1899 ई० में बनाया गया। इसके अतिरिक्त देश के विभिन्न भागों में रेलवे से संबंधित विभिन्न कारखाने ब्रिटिश सरकार द्वारा स्थापित किये गये। रेलवे के गौरवशाली 150 वर्ष पूरे होने के अवसर पर रेल मंत्री नीतीश कुमार ने दिनांक 21 दिसम्बर 2002 को पटना से जम्मू के लिए अर्चना एक्सप्रेस को हरी झंडी दिखाकर रवाना किया।

भारतीय रेलवे के गौरवपूर्ण 150 वर्ष पूरे होने के उपलब्ध में भारत सरकार ने शुभंकर भोलू गार्ड को प्रदर्शित करते हुए दो रूपये का स्मारक सिक्का भी जारी किया। इसके पूर्व ब्रिटिश शासन में सन् 1937 में डाक भेजने के माध्यमों को दर्शाते हुए रेल इंजन को डाक टिकट पर दर्शाया था। आजादी के उपरान्त भारत सरकार ने रेल से संबंधित एक दर्जन से अधिक नियत और स्मारक डाक टिकट जारी किये हैं।

गया में रेल व्यवस्था

सन् 1862 ई० में पटना में रेल सेवा प्रारंभ हुई। गया से पटना आने के लिए कच्ची सड़क उपलब्ध थी, जो बरसात के मौसम में कीचड़ से भर जाने के कारण मुश्किलें पैदा करती थी। उस समय भारत में तेजी से रेलवे का विस्तार हो रहा था। सन् 1874 ई० में बिहार में अकाल पड़ने के कारण रेलवे के विस्तार की आवश्यकता और भी महसूस हुई। अत: ब्रिटिश शासन का ध्यान इस ओर गया और गया से पटना जाने के लिए रेल की पटरियों के बिछाने का कार्य शुरू हो गया। हिन्दी सहित्य के सुधी समालोचक और उन्नीसवीं सदी के हिन्दी साहित्य के मर्मज्ञ, गया निवासी डॉ० रामनिरंजन परिमलेन्दु से प्राप्त जानकारी के अनुसार कलकत्ता से प्रकाशित साप्ताहिक पत्र 'सारसुधा निधि'' के दिनांक 19 मई 1879 ई० के अंक में दिनांक 2 जून 1879 ई० को पटना से गया के बीच रेल सेवा प्रांरभ होने संबंधी सूचना प्रकाशित हुई थी। हिस्ट्री ऑफ इंडियन रेलवेज में भी जून 1879 ई० में पटना–गया रेलखंड को परिचालन के लिए खोलने की बात कही गयी है। इस प्रकार, पी०सी० राय चौधरी द्वारा लिखित तथा सन् 1957 ई० में सेक्रेटेरियट प्रेस, बिहार पटना द्वारा प्रकाशित ''बिहार डिस्ट्रिक गजेटियर्स–गया'' के पृ० सं० 244 पर अंकित वर्ष 1876 गलत एवं भ्रामक है। इस प्रकार गया दिनांक 2 जून 1879 ई० को रेल मार्ग द्वारा तत्कालीन ईस्ट इंडियन रेलवे (दिनांक 14 अप्रैल 1952 ई० से पूर्व रेलवे तथा विभाजन के बाद दिनांक 8 सितम्बर 1996 से पूर्व मध्य रेलवे हाजीपुर) के मेन लाईन पर स्थित पटना से जुड़ गया। इस रेल खंड की कुल लम्बाई 92 किलोमीटर में से 53.4 कि०मी० तत्कालीन गया जिला (वर्तमान मगध प्रमंडल) का हिस्सा बना, जिसमें गया के अतिरिक्त चाकन्द, बेला, मखदुमपुर, टेहटा, जहानाबाद कोर्ट और जहानाबाद स्टेशन थे। इसी प्रकार पूर्व की दिशा में साउथ बिहार रेलवे ने गया से लखीसराय तक रेलवे लाईन बिछायी और उसे मेन लाईन से जोड़ दिया। सन् 1895 ई० में शुरू इस रेलवे लाईन का 92.8 कि० मी० लम्बा हिस्सा तत्कालीन गया जिला को मिला जिसमें मानपुर, पैमार, कर जरा हॉल्ट, वजीरगंज, जमुआवाँ, तिलैया, नवादा, बद्दी बरडीह तथा वारसलीगंज स्टेशन आते थे। सन् 1900 ई० में गया को ग्रेंड कॉर्ड लाईन पर पश्चिम दिशा में मुगलसराय से जोड़ा गया। इस रेल खंड का 81.6 कि०मी० हिस्सा तत्कालीन गया जिला में आया, जिसमें कुल नौ स्टेशन कष्ठा, परैया, गुरारू, इसमाइलपुर, रफीगंज, जाखिम, फेसर, औरंगाबाद रोड (सम्प्रति अनुग्रह नारायण रोड और बारूण (सोन नगर) थे। चौथा रेलखंड पश्चिम–दक्षिण की दिशा में बारूण डालटनगंज (मेदिनगर) शुरू हुआ, जिसका 37.2 कि०मी० भाग तत्कालीन गया जिला (सम्प्रति औरंगाबाद जिला में) के हिस्से में आया और उसमें दो नये स्टेशन अंकोरा और नबीनगर थे। पॉचवा और अंतिम रेलखंड दक्षिण पूर्व दिशा में गया से कतरासगढ़ की ओर बना जिसका 54.4 कि०मी० लम्बाई गया जिला के हिस्से में आया जिसमें मानपुर के अतिरिक्त बंधुआ, टनकुप्पा, पहाड़पुर और गुरपा स्टेशन थे। ज्ञातव्य है कि गया लखीसराय रेल खंड के निर्माण होने के कारण मानपुर स्टेशन पहले ही अस्तित्व में आ गया था। दिनांक 6 दिसम्बर 1906 को वायसराय लॉर्ड मिन्टो द्वारा उद्घाटित इस रेल खंड के माध्यम से गया हावड़ा और दिल्ली से रेल मार्ग द्वारा सीधे संपर्क में आ गया। इस ग्रेड कॉर्ड रेल लाईन पूरा होने के लगभग 104 वर्षो बाद सन् 2010 में तिलैया राजगीर रेल लाईन का परिचालन प्रारंभ हुआ और इस प्रकार

गया राजगीर से जुड़ गया। इस लाईन में पटरी बिछाने का कार्य सन् 2002 में शुरू हुआ था। प्रस्तावित तथा तत्कालीन रेल मंत्री श्री लालू प्रसाद द्वारा उद्घाटित रफीगंज–डालटनगंज रेल खंड पर अबतक कोई कार्य शुरू नहीं हुआ है और वर्ष 2014 के रेल बजट में भी उसके लिए किसी प्रकार का कोई प्रावधान नहीं किया गया है। सन् 2002 में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी बाजपेयी ने पटना–गया रेल खंड के विद्युतीकरण कार्य का श्री गणेश किया, जिसकी पूर्णता पर दिनांक 28 मई 2003 को पटना में तत्कालीन राष्ट्रपति डॉ० ए०पी०जे० अब्दुल कलाम ने उद्घाटन किया। पटना–गया रेल खंड के दोहरी करण के कार्य को रेल मंत्री श्री राम बिलास पासवान ने मंजूरी दी थी पर इस कार्य को गति रेल मंत्री श्री नीतीश कुमार के कार्यकाल में मिली और सन् 2012 के उतरार्द्ध में कार्य पूर्ण हुआ। श्री नीतीश कुमार के कार्यकाल में इस रेल खंड में बॉल्टों की संख्या तेजी से बढ़ी और कुल मिलकर तैतीस स्थानों पर सवारी गाड़ियाँ रूकने लगी। इससे स्थानीय लोगों की सुविधायें बढ़ी और विधूतीकरण तथा दोहरीकरण के कारण पटना–गया की दूरी सवारी गाड़ियों से लगभग तीन घंटे में तय की जाने लगी।

गया रेलवे स्टेशन के भवन का निर्माण सन् 1906 में हुआ था तथा वर्तमान भवन सन् 1956 ई० में बना। तीर्थ यात्रियों के लिए एक प्लेटफॉर्म है। प्लेटफॉर्म संख्या 6 और 7 तथा तीर्थ यात्री प्लेटफॉर्म का एक सिरा बंद है, जबकि अन्य सभी प्लेटफॉर्म के दोनों छोर रेलगाड़ियों के आवागमन के लिए खुले हुए हैं। यात्रियों की सुविधा के लिए स्टेशन के दूसरी ओर डेल्हा में भी एक सामान्य टिकट घर है। स्टेशन के पश्चिमी छोर हिन्डले रेड पर भी पटरियों का विस्तार हुआ है। स्टेशन पर सभी प्लेटफॉर्म तक पहुँचने के लिए एक पैदल उपरिगामी पुल के अलावा नब्बे के दश्का में प्लेटफॉर्म तथा स्टेशन के बाहर दोनों ओर जाने के लिए एक पउरिगायी पुल बना, जिससे डेल्हा से स्टेशन के बाहर आया जा सकता है। यात्रियों की सुविधा के लिए तीसरा उपरिगामी पुल निर्माणधीन है। करीमगंज गुमटी पर ओवरब्रिज के बन जाने से मोटर गाड़ियों के आवागमन को अबाध गति मिली है। ग्रैंड कॉर्ड रेल खंड को पटरी गया जंक्शन पर अंग्रेजी के जेड अक्षर की तरह है, जो कि उसकी एक विशेषता है। पितृपक्ष मेला के समय गया आने–जाने के लिए रेलवे टिकट पर अधिभार लगता है, जिसकी राशि संवास सदन समिति, गया को गया के विकास के लिए दी जाती है। गया में पहले ए०एस०सी० सेंटर तथा अभी अधिकारी प्रशिक्षण अकादमी होने के कारण गया रेलवे स्टेशन सेना के लिए भी महत्वपूर्ण है। ब्रिटिश काल में गया रेलवे स्टेशन ईस्ट इंडियन रेलवे का हिस्सा था। आजादी के बाद ईस्ट इंडियन रेलवे के सियालदह, हावड़ा, आसनसोल एंव दानापुर मंडल तथा बंगाल नागपुर रेलवे को मिलकर दिनांक 14 अप्रैल 1952 ई० को पूर्व रेलवे की स्थापना हुई और यह उसका अंग बना पुनः रेल मंत्रालय, भारत सरकार के पत्रांक E (NG) 11/96/R-R 1/62 दिनांक 18.7 2005 के अनुसार दिनांक 8 सितम्बर 1986 को पूर्व मध्य रेलवे की स्थापना हाजीपुर हुई। तब से गया जंक्शन पूर्व मध्य रेलवे के मुगलसराय मंडल का अभिन्न अंग है।

6 दिसम्बर 1906 तथा उसकी शताब्दी

दिनांक 6 दिसम्बर 1906 ई० गया ही नहीं अपितु भारतीय रेल के इतिहास में स्वर्णाक्षर में लिखने योग्य है, जब भारत के तत्कालीन गवर्नर जेनरल एवं वायसराय, अर्ल ऑव मिन्टो (यॉर्ड मिन्टो) ने गया से गझंडी तक एक विशेष रेलगाड़ी में यात्रा की एवं गझंडी स्टेशन पर ट्रैक के दो सिरों को चाँदी के बोल्ट से जोड़कर चाँदी के ही स्पैनर से उसे कस कर ग्रैन्ड कॉर्ड रेल खण्ड को परिचालन के लिए खोल दिया। दिनांक 1–10–2013 से 7–10–2013 तक भारतीयनृत्य कला मंदिर पटना में आयोजित पूर्व मध्य रेलवे की प्रदर्शनी में इस कार्यक्रम से संबंधित घटनाक्रम का पूरा ब्योरा प्रदर्शित किया गया था, जिसके संक्षिप्त अंश इस प्रकार थे।

अतिथियों के आवागमन हेतु ट्रेनें हावड़ा से गया के लिए दिनांक 5 दिसम्बर 1906 ई० में रात्रि में खुलेगी और दिनांक 7 दिसम्बर 1906 ई० को प्रात: सात बजे हावड़ा पहुँचेगी। पहली रेलगाड़ी से यात्रा करनेवाले अतिथियों को सुबह के चाय दिनांक 06 दिसम्बर 1906 ई० को नवादा पहुँचने पर अर्थात् 6.54 बजे प्रात: एवं दूसरी रेलगाड़ी से यात्रा करने वाले अतिथियों को 7.19 बजे प्रात: परोसी जायेगी। नास्ता का प्रबंध गया में प्रात: 8.30 और 9.30 बजे के मध्य स्टेशन से सटे प्रतीक्षालय में होगा। नास्ता के उपरान्त अतिथि ट्रेन द्वारा गझंडी के लिए प्रस्थान करेगी। महामहिम वायसराय अपराहन् 2.40 बजे गंझंडी पहुँचेगे और ट्रैक के दो सिरों को चाँदी के बोल्ट से जोड़कर चाँदी के स्पैनर से उसे कसकर कार्यक्रम सम्पन्न करेंगे। रात्रि भोज 7.30 बजे गोमों में होगा, जहाँ पर समी लोग मेस ड्रेस में शामिल होंगे। गझंडी में ड्रेस कोड सामान्य होगा। महामहिम वायसराय को विशेष रेलगाड़ी रात्रि 9.30 बजे प्रस्थान करेगी। वायसराय की उपस्थिति से समारोह के महत्व और भव्यता का सहज अनुमान लगाया जा सकता है। ज्ञातव्य है कि उस समय देश की राजधानी कलकत्ता ही थी। इस समारोह की शताब्दी भी भव्यता के साथ दिनांक 6 दिसम्ब 2006 दिन बुधवार को मनायी गयी। इसके लिए छह कोच का एक विशेष हेरिटेज स्पेशल ट्रेन जिसमें ग्रेंड कॉर्ड की महारानी ' नामक डब्लू पी सीरीज का वाष्प इंजन लगा था। इसके लिए वास्प इंजन न्यू जलपाईगुड़ी से तथा कोच दिल्ली से लाया गया। ट्रेन का गया रेलवे स्टेशन पर दुल्हन की तरह सजाया गया तथा इस हेरिटेज स्पेशल ट्रेन का लोकार्पण पूर्व मध्य रेलवे के तत्कालीन महाप्रबंधक एस०के० विज ने किया। यह गाड़ी गया स्टेशन से पूर्वाह्न 10.00 बजे प्रस्थान कर अपराह्न 12.15 बजे गझंडी स्टेशन पहुँची था अपराहन 14.30 बजे गझंडी से चलकर अपराह्न 16.30 बजे गया स्टेशन पहुँची। इस ट्रेन में मीडिया कर्मियों, अधिकारियों तथा कर्मचारियों अलग-अलग बैठने की व्यवथा की गई तथा प्रत्येक कोच में एक गार्ड एक एक टी०टी०ई० की तैनाती की गई। गझंडी स्टेशन पर ट्रेन का भव्य स्वागत किया गया तथा आंगतुक अतिथियों का भी अभिनंदन किया गया। इस अवसर पर गझंडी स्टेशन पर 12.30 बजे से 13.45 बजे तक रंगारंग सांस्कृतिक कार्यक्रम का आयोजन भी किया गया। इस समारोह की सफलता के लिए धनबाद एवं मुगलसराय मंडल के अधीकारियों एंव कर्मचारियों के दल ने दिन-रात मेहनत की तथा स्थानीय लोगों में भी इसके लिए काफी उत्साह दिखा। पूर्व मध्य रेलवे ने इस समारोह से संबंधित विज्ञापन दिनांक 6 दिसम्बर 2006 के सभी प्रमुख समाचार पत्रों में प्रकाशित करवाया। रेलवे के इस आयोजन से इसके महत्त्व और ऐतिहासकिता का सहज अनुमान लगाया जा सकता है।

अंतत:

भारतीय रेल के इतिहास में गया भले ही अग्रणी की भूमिका में न हो, पर 135 वर्ष पुराने इस रेलवे स्टेशन की अपनी ऐतिहासिकता एवं अपना महत्त्व है। मगध की सांस्कृतिक एवं ऐतिहासकि विरासत से देश को जोड़ने वाले गया जंक्शन का असैनिक एवं सैनिक महत्त व भी है। विगत 25-30 वर्षो में गया स्टेशन पर किये गये विकासात्मक कार्य में गुणवत्ता एवं सौन्दर्य की अभिवृद्धि कर इसे आकर्षक और सराहनीय रूप दिया जा सकता है। गया को मॉडल स्टेशन बनाने की बात रेलवे द्वारा हुई पर इस दिशा में श्री गणेश न होने के कारण निराशा अवश्य है। गया स्टेशन का विकास राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय पर्यटकों, तीर्थ यात्रियों एवं यात्रियों को सुख-सुविधा एवं आतिथ्य भाव को केन्द्र में रखते हुए तथा वास्तु शिल्प बनारस कैंट स्टेशन जैसा भव्य एवं हिन्दू तथा बौद्ध संस्कृति का पारिचायक होना चाहिए।

◆

204 रीना रेसिडेन्सी, श्री कृष्णनगर, पटना
मो०-9430200800

मानव जीवन का अन्तिम पड़ाव है आत्म साक्षात्कार

श्रीमती अनुराधा प्रसाद

जीवन न तो जन्म से शुरू होता है, और न ही मृत्यु पर समाप्त हो जाता है। भगवान श्री कृष्ण ने जन्म को अव्यक्त का व्यक्त होना और मृत्यु को व्यक्त का अव्यक्त होना कहा है। आत्मा अतींद्रिय है, इसलिए सामान्य संसारी व्यक्ति, जो प्रत्यक्ष को प्रमाण मानता है, शरीर के अस्तित्व तक ही जीवन को मानता है। सनातन वैदिक धर्म की मान्यता के अनुसार जन्म-मृत्यु जीवन यात्रा के पड़ाव हैं, जीवात्मा के जीवन में जन्म-मृत्यु का यह चक्र तब तक चलता रहता है, जब तक वह अपनी आखिरी मंजिल पर नहीं पहुँच जाता। यह आखिरी पड़ाव ही आत्म साक्षात्कार है, भगवान की प्राप्ति है। इस उपलब्धि के बाद सारी यात्रा सिमट जाती है। इसके बाद कोई कर्तव्य शेष नहीं रह जाता। धर्म-ग्रंथों में चौरासी लाख योनियों की बात कही गयी है। इनमें जाकर जीवात्मा अपने कर्मो के फल को भोग है। इसलिए इनकी संभावनाएँ सीमित है। मनुष्य योनि का जगह-जगह गुणगान किया गया है। इसका कारण है इसका योग योनि होने के साथ ही कर्मयोनि भी होना, इसमें इससे संभावनाएँ भी अनंत है। हाँलाकि देवयोनि मनुषयोनि से श्रेष्ठ है, पर उसमें हमेशा अध:पतन का डर बना रहता है। इसका अतिक्रमण करना उनके अधिकार क्षेत्र से बाहर है। मनुष्य को कर्म की स्वतंत्रता है इसलिए धर्मग्रन्थों की रचना मनुष्य के लिए की गई। सारे विधि विधान मनुष्य के लिए बनाए गए न की देवताओं और पशु पक्षियों के लिए। धर्म, अर्थ और काम ये तीन उपलब्धियाँ हैं मनुष्य जीवन की, जबकि मोक्ष परम उपलब्धि है। यदि मोक्ष की उपलब्धि नहीं हुई तो फिर इन तीनों की कोई सार्थकता नहीं है, ऐसा धर्मग्रंथों में कहा गया है। धन और सुख तो भाग्य के अनुसार ही मिलते हैं और भाग्य पूर्वजन्म के कर्मो के अनुसार बनता है, इसलिए स्थान परिवर्तन से सुख की आशा करना उचित नहीं। कहा भी गया है जो होने वाला नहीं है वह नहीं होता जो होनेवाला है वह बिना यत्न के ही पूरा हो जाता है और जो नहीं प्राप्त होने वाला है वह हाथ में आकर भी नष्ट हो जाता है भिर भी यह ज्ञात है कि बिना उद्योग किये कर्म भी फल नहीं देता।

नीतिशास्त्र में कहा गया है

यथा धेनुसहस्त्रेषु वत्सो विन्दति मातरतम्
तथा पुराकृंत कत्र्र कतार्रर मनुगच्छिति।

अर्थात् जिस तरह बछड़ा हजारों गायों में अपनी माता को पा लेता है उसी तरह पूर्व जन्म में किया हुआ कर्म करनेवाले के पीछे-पीछे जाता है। इसीलिए मनुष्य को हमेशा सत्कर्मो को ही करना चाहिए तथा बुरे कर्मो से बचना चाहिए।

विभिन्न शास्त्रों के अनुसार केवल मनुष्य ही मृत्यु के बाद एक सूक्ष्म शरीर धारण करते हैं और उसी शरीर को यमपुरूषों के द्वारा यमराज के पास ले जाया जाता है। दूसरे प्राणियों को नहीं, क्योंकि अन्य प्राणियों को यह सूक्ष्म शरीर प्राप्त ही नहीं हो पता है, तो वे तत्काल इसकी योनि में जन्म पा जाते हैं। पशु-पक्षी आदि नाना तिर्थक योनियों के प्राणी वायु रूप में विचरण करते हुए फिर से किसी योनि विशेष में जन्म पाने के लिए उस योनि के गर्भ में आ जाते हैं। केवल मनुष्य ही एक ऐसा प्राणी है जिसे अपने शुभ एवं अशुभ कर्मो का अच्छा-बुरा परिणाम इस लोक और परलोक में भोगना पड़ता है।

मनुष्याः प्रतिपद्यन्ते स्वर्ग नरकमेव वा। नैवान्चे प्राणि केचित सर्व ते फल भोगिनः।।
शुभानामशुभानां वा कर्मणां भृगुनन्दन। सभ्यः क्रियते लोके मनुष्यैरेव केवलम।।

तस्मान् मनुष्यस्तु मृतो चमलोकं प्रपद्यते। नान्य प्राणी महासागर फलोनो व्यस्थित

(विष्णुधर्मोत्तर 2/113/4-6)

सामान्यत: जीवन में पाप और पुण्य दोनों होते हैं। शास्त्रों के अनुसार पुण्य का फल है स्वर्ग तथा पाप का फल है नरक। नरक में पापी को घोर यातनाएँ भोगनी पड़ती है। स्वर्ग नरक भोगने के बाद जीव फिर से अपने कर्मो के अनुसार चौरासी लाख योनियों में भटकने लगता है। पुण्यात्मा मनुष्य अच्छी अथवा देवयोनि प्राप्त करते हैं, जबकि पापात्मा पशु-पक्षी, कीट-पतंग आदि योनियों को प्राप्त करते हैं। इसलिए शास्त्रों के अनुसार पुत्र-पौत्रादि का यह कर्तव्य होता है कि वे अपने माता-पिता तथा पूर्वजों के निमित्त श्रद्धापूर्वक कुछ ऐसे शास्त्रोक्त कर्म करें, जिसमें उन मृत प्राणियों को परलोक में या दूसरी योनियों में भी सुख की प्राप्ति हो सके। पुत्र: पॉत्रश्च तत्पुत्र: पुत्रिका पुत्र एवंच। पत्नी भ्राता त तज्जश्च पिता माता स्त्रुषा तथा।।

भगिनी भागिनेश्चय सपिण्डः सोदकतस्था। असन्निधाने पूर्वेषामुत्तरे पिण्डदाः स्मृताः।।

(स्मृति संग्रह, श्राद्ध कल्प)

भारतीय संस्कृति तथा सनातन धर्म में पितृऋण से मुक्त होने के लिए अपने माता-पिता तथा परिवार के मृत प्राणियों के निमित्त श्राद्ध करने की अनिवार्य आवश्यकता बतायी गयी है। जिस दयालु भगवान ने जीव के सुख के लिए वायु, जल, अग्नि, वृक्ष आदि अनेक लाभकारी पदार्थ उत्पन्न किये है और जिन माता-पिता, गुरू आदि सुहृजनों ने अपने जीवन काल में विभिन्न कष्ट उठाकर सबको सब तरह से सुख पहुँचाया। अज्ञान का अंधकार दूर का ज्ञान का प्रकाश दिया, मोक्ष का रास्ता समझाया, उस परमेश्वर का स्मरण, भजन, नाम संकीर्त्तन करना तथा उन सहृजनों का इस लोक में वस्त्र भोजनादि का सुख तथा परलोकगत उनकी आत्मा की तृप्ति और सद्गति के लिए भगवान से प्रार्थना करना सर्वथा उचित और परमधर्म है। प्रकृति स्वयं इसके लिए मनुष्य को प्रेरणा देती है। और संसार का मनुष्य स्वंय ही किसी-किसी रूप में मन, वाणी, कर्म द्वारा सभी श्राद्ध कर्म सम्पन्न कराती है।

◆

मौलागंज, गया

राजकीय गया संग्रहालय : एक झलक

डा० विनय कुमार

धरोहरों को सुरक्षित संरक्षित एवं संवर्द्धित करने में प्रमुख भूमिका संग्रहालय की होती है। जहाँ अपार जनसमूह का सहयोग और प्रशासकीय शक्तियाँ जिस संग्रहालय को जिस प्रकार प्राप्त होती है उसका क्रमिक विकास वैसा ही होता है। हर्ष की बात है कि गया संग्रहालय विश्व को शांति संदेश का वाहक है।

विश्व प्रसिद्ध एवं विष्णु की महान नगरी गया को कौन नहीं जानता ? गया की इस धरती पर कला एवं संस्कृति अद्भुत है, जिनके अति दुर्लभ प्रदर्श सर्वत्र फैले हुए विराजमान है। गया के लगभग प्रत्येक गाँव में कलात्मक चिह्न नजर आते हैं। प्राचीन काल से गया कलात्मक एवं सांस्कृतिक गतिविधियों का केन्द्र रहा है। यहाँ के सुदूर गाँवों में भी कलात्मक अवशेष बिखरे मिलते है। भारतीय कला एवं संस्कृति के विभिन्न आयामों के उद्भव और विकास में मगध क्षेत्र का विशेष योगदान सदियों से रहा है। राजकीय संग्रहालय गया में प्रदर्शित संग्रहित एवं संरक्षित अद्भुत अमूल्य पुरावशेषों के दुर्लभ नमूने बखूबी देखे जा सकते हैं।

गया संग्रहालय 23 नवम्बर 1952 में स्थापित हुआ परन्तु इसका विधिवत उद्घाटन 27 नवम्बर 1952 को 9.15 बजे,गया नगरपालिका भवन के एक भाग में नगरपालिका गया के अध्यक्ष श्री राधा मोहन प्रसाद द्वारा किया गया। अर्थात 27 नवम्बर 1952 को सार्वजनिक रूप से जनता के लिए खोल दिया गया। तत्पश्चात ज्ञान पिपासु बुद्धिजीवियो द्वारा कलात्मक अवशेषों का संग्रह आरम्भ हो गया। हाँलाकि सन् 1885 में ही इस संग्रहालय का निर्माण का बीजारोपण हो गया था, जब वर्तमान जिला केन्द्रीय लोक पुस्तकालय खोला गया था, अंग्रेजों ने स्थानीय कलाकृतियों को संरक्षित करने के लिए उन्हें वहाँ इकठ्ठा करना शुरू कर दिया था। इस प्रकार परोक्षरूप से वर्तमान संग्रहालय की नींव उसी समय पड़ गई थी। उस समय प्राप्त कलाकृतियों में पालकालीन बुद्ध की बैठी हुई मूर्त्ति मंजुश्री दो राजकीय बंदूक जिसके घोड़ो और कुन्दों पर हाथी हांत की बेहतरीन नक्कासी है। एक लंबा सा भाला भी रखा गया में सभी वस्तुएं सन 1976 में राजकीय संग्रहालय गया को हस्तांतरित कर दी गई।

गया संग्रहालय की क्रमिक विकास में तत्कालीन दो कलक्टर मि० ग्रिर्यसन और मि० ओल्डहैम का विशेष योगदान रहा है जिन्होंने, प्राचीन कलाकृतियों का विवरण सिलसिलेवार से रखा मि० ग्रिर्यसन ने 1885 से 1891 तक के कार्यकाल में गया जिले पर एक टिप्पणी भी तैयार की, जिसमें विभिन्न प्राचीन कृतियों का जिक्र था। उस चर्चित टिप्पणी का नाम का Bihar Peasants life and Notes on the District of Gaya. तत्पश्चात् मि० ओल्ड हैम ने 1898 से 1902 के दौरान सम्पूर्ण प्रक्षेत्र में कई दौरा किये तथा प्राप्त प्राचीन कलाकृतियों की तस्वीरे खिंचवाकर इकट्ठा किये।

दिन बदले, युग बदला और लगभग 90 वर्षों के एक लंबे अन्तराल के बाद संग्रहालय आन्दोलन पुनः जोर पकड़ा, जिसका श्रेय श्री बदलेव प्रसाद को जाता है। एक महान समाज सेवी तथा स्थानीय वकील श्री बदलेव प्रसाद ने पहल की। 23 अप्रैल, 1947 को सोसायटी ऑफ इन्डियन कल्चर की स्थापना हुई जिसका मुख्य उद्देश्य क्षेत्र की पुरातात्विक और ऐतिहासिक धरोहरों का बचाना था। इस दिशा में तत्कालीन जिला मजिस्ट्रेट जे०सी० माथुर ने भी श्री बदलेव प्रसाद के साथ प्रस्तावित संग्रहालय के लिए प्राचीन कलाकृतियाँ एकत्र करना आरम्भ किया। तत्पश्चात 21 जनवरी 1950 को सोसायटी ने गया संग्रहालय बनाने के लिए घोषणा की। समिति गठित की गई जिसका पदेन अध्यक्ष जिला मजिस्ट्रेट तथा सचिव पुलिस सुपरिटेन्डेन्ट बनाये गये। श्री बलदेव प्रसाद संयुक्त सचिव बने। गया संग्रहालय का नाम गया संग्रहालय रखने का प्रस्ताव पारित किया गया।

गया संग्रहालय हेतु कलाकृतियों के संग्रहण में स्थानीय नागरिकों की भूमिका काफी सराहनीय रही जिनमें प्रमुख रूप से उमाशंकर भट्टाचार्य उर्फ राजाबाबू, श्री छोटे लाल भैया तथा कृष्णा लाल बैक प्रमुख थे जिन्होने 1952 से 1954 के बीच भेट स्वरूप प्रदान किया गया संग्रहालय जिसका नाम सामूहिक सहमति से अब गया संग्रहालय सह मगध सांस्कृतिक केन्द्र गया कर दिया गया है, में विभिन्न आकार प्रकार के हिन्दू देवी देवताओं की प्रतिमाएं प्रदर्शित हैं।

गया जिला के खिजरसराय से प्राप्त पाल कालीन विष्णु की पत्थर की मूर्त्ति जिसकी लम्बाई 9 फुट है। आज आकर्षण का केन्द्र बिन्दु है। विष्णु की यह मूर्त्ति 8वीं से 10वीं शताब्दी की है। विष्णु की दूसरी मूर्त्ति दशावतार की है। जिसका निर्माण काल का निर्धारण सन् 11वी शताब्दी किया गया है। विष्णु दशावतार की यह मूर्ति दाबथू नामक स्थान से प्राप्त की। ब्राह्मण काल की लगभग सभी मूर्तियां (सभी देवी देवताओं की)

6ठीं से 12वीं शताब्दी की बताई जाती है। इस प्रकार अन्य देवी-देवताओं की मूर्त्तियों में शिव, नृत्यरत शिव, भैरव, लकुलिस अजा-एकपद, उमा-महेश्वर, सूर्य, रेवन्त, अग्नि, कामदेव, हरिहर, सरस्वती, पार्वती, दुर्गा, चामुण्डा, नृत्यरत गणेश, नित्यत भैरव आदि की है।

ब्रह्मण कालीन मूर्त्तियों में एक मूर्ति कामदेव की है, जिसमें उन्हें पत्नीद्वय रति और तृष्णा के साथ दर्शाया गया है। संग्रहालय की लोकप्रिय मूर्ति यही है जिसमें रतिभोग मुद्रा में है। देशी-विदेशी पर्यकों को काफी भाति है। इसी काल की दूसरी मूर्ति गणेश की है जो नृत्य मुद्रा में है। गणेश की इस मूर्त्ति को हैदराबाद के कागजी मुहल्ला से प्राप्त की गई है। ब्राह्मण कालीन मूर्त्तियों के पश्चात् बौद्ध प्रतिमाओं का स्थान आता है। इसके अन्तर्गत अवलोकितेश्वर मंजुश्री, मंजुवर, मैत्रेय, तारा, अपराजिता, की प्रतिमाएं है जो संग्रहालय में प्रदर्श है। इनमें प्रमुख बुद्ध का धर्म चक्रप्रवर्तन मुद्रा वाली प्रतिमा है जो आकर्षण का केन्द्र है। यह मूर्ति गया नगर से प्राप्त है जो 9वीं शताब्दी की है।

पाणडुलिपियाँ जो 16वी से 19वीं सदी की है इनमें श्रीमद्भागवद्गीता स्कंद पुराण, रामचरित मानस, दुर्गा सप्तशती प्रमुख है। सिक्के में स्वर्ण, रजत, तथा कास्य की है। फारसी में आईने अकबरी, खमाई शेख निजामी उपलब्ध है। मृदा मूर्त्तियाँ (टेराकोटा) ईसा पूर्व तीसरी से 6ठी सदी की है जो वैशाली और कुम्हरार से प्राप्त की गई है।

व्यक्ति परमात्मा का दूत है। इसका पुनीत कर्तव्य है अन्तर में छिपे पड़े ईश्वरीय संदेश को विश्व के सम्मुख रखना। इस नाते हमारा पूरे मगध क्षेत्र सबसे अलग है कि अपने अस्तित्व को आज भी विश्व में अनमोल बनाये रखा है। इसे सुरक्षित संरक्षित, और संग्रहित करने की आवश्यकता हम सबो की है। हम अपने समस्त धरोहरो पुरावशेषो को सुरक्षित और संग्रहित करने में सचेष्ट रहें, यही अपेक्षा है।

कला संस्कृति एवं युवा विभाग जिला प्रशासन एवं मगध प्रक्षेत्र के लोगों तथा गया संग्रहालय के प्रति आभारी हूँ। गया संग्रहालय रूप मगध सांस्कृतिक केन्द्र के ही नहीं अपितु समस्त मगध प्रक्षेत्र के व्यापक जन समूहो सामाजिक, सांस्कृतिक शैक्षणिक तथा मनोरंजक गतिविधियों का बढ़ावा देने में महात्वपूर्ण भूमिका निभा रहा हैं हमे गर्व है।

◆

संग्रहालयाध्यक्ष, गया संग्रहालय, गया

असत्य को त्याग सत्य का सहारा लेना मानवोचित धर्म

श्री विजय कुमार सिन्हा

सत्य अस्तित्व का प्रतिरूप है जो प्रत्यक्ष है वही सत्य है। इसके विपरीत जो नहीं है, किन्तु जिसके अस्तित्व को गढ़ा जाता है वह असत्य है। सत्य एक घटना है तो झूठ विचारों का प्रवाह। सत्य अपना चिह्न छोड़ जाता है, जिसे कभी भी देखा-परखा और सत्यापित किया जा सकता है। असत्य को प्रमाणित करना कठिन है, असत्य पकड़ा जा सकता है। सत्य निर्द्वन्द भयविहीन होता है। सत्य जब जीवन में घटता है, तो समूचे अस्तित्व में उद्वेलना होने लगती है। असत्य महज कृत्रिम है, क्योंकि वह निर्मित किया जाता है। असत्य एक ही बात को अनेक ढंग से प्रस्तुत करता है।

असत्य एक कृत्रिम मुखौटा है। असत्य ऊपर से आकर्षक लुभावना दीखता है। क्योंकि असत्यवादी इसे बड़े ही आलंकारिक व चालाकी से अपनी बातों को प्रस्तुत करता है। किंतु, असत्य डरावना भी होता है, क्योंकि उसे सदा भय रहता है कि कहीं असलियत का पता न चल जाए। असत्यवादी स्वं को और अन्य लोगों को धोखा देता है। असत्य में चुभन है, पीड़ा है, दर्द है, भय है। किंतु, सत्य वचन, सत्य कर्म पुष्पित, हंसता हुआ ऐसा पुष्प है जिसके आस-पास सुगंध सुवास की छटा बिखरी रहती है। असत्य व्यक्ति द्वंद्वकी दशा में रहता है, न तो उसे अंदर में शांति मिलती है ओर न बाहर में सुकून। ऐसे लोग अपने ही बुने हुए मकड़जाल में सदा घिरे, उलझे और जकड़े रहते हैं। इसके विपरीत सत्यवादी के पास प्रखर आत्मबल एवं आंतरिक शक्ति, तेज आभा होती है। असत्यवादी डरा, सहमा एवं निस्तेज होता है। असत्य का अंत बड़ा ही दारुण एवं दयनीय व नाशक होता है।अंतर के ऊहापोह से असत्यवादी व्यक्ति की सृजनशीलता की सामर्थ्य चुक जाती है, ऊर्जा विनष्ट हो जाती है। ऐसे व्यक्ति को अधिकतर असफलता ही हाथ लगती है। यदि कभी ऐसा असत्यवादी व्यक्ति कभी-कभार सफल भी हुआ तो उसकी सफलता को संदिग्ध और संदेहग्रस्त माना जाता है। असफलता उसे छोड़ती नहीं है। झूठ बोलने की गहरी पीड़ा उसे अन्ततः हताशा और निराशा के अंतहीन अंध मार्ग पर धकेल देती है असत्यवादियों का कोई साथ नहीं होता, ऐसे लोग गहरे मनोरोग के शिकार होते हैं।

सत्यवादी आत्मविश्वास से लबरेज होता है। उसकी सच्चाई में अस्तित्व की शक्ति समाई रहती है। किसी भी कठिनाई से व विपरीत परिस्थितियों के आसन्न रहने पर भी वह अपने सत्य के बल पर उन्हें पराजित करते हुए निरंतर विकास की ओर अग्रसर होते रहता है। ऐसी मान्यता है कि यदि निरंतर सत्य पर दृढ़ रहे तो, वाणी में इतनी प्रचंड शक्ति समा जाती है कि कथनी ओर करनी एकात्म हो उसे दिव्य पुरूष बना देता है।

केवल उच्च कोटि का सत्यवादी ही गर्जना कर सकता है ''सुनूं क्या सिंधु मैं गर्जन तुम्हारा, स्वयं युग का हुंकार हूं मैं''- दिनकर।

अतः सत्य वचन व सात्विक कर्मो को जीवन का प्राकृतिक अंग बना लें सजगता ओर सतर्कता हमें यथार्थता और सच्चाई से परिचय कराती है फलतः असत्य के द्वंद्वको त्याग कर सत्य का सहारा लेना मानवोचित व दैवी गुण है।

◆

शैल सदन
राजेन्द्र पथ, नयी गोदाम, गया - 2

गरुड़ के सात प्रश्न और कागभुशुण्डि जी के उत्तर

श्री लीला कान्त झा

सर्वव्यापक परमात्मा भगवान् पिष्णु के वाहन गरुड़ हैं। गरुड़जी ज्ञानियों और भक्तों में शिरोमणि हैं। रामावतार में राम-रावण युद्ध के समय श्रीरघुनाथजी ने नर-लीला की और रावण पुत्र इन्द्रजीत के हाथों अपने को बंधा लिया। दर्वेषि नारदजी ने राम और लक्ष्मण का बंधन काटने के लिए सर्पो के भक्षक गरुड़जी को भेजा। गरुड़जी ने नाग-पाश से दोनों भाइयों को मुक्त तो कराया, परन्तु उनके हृदय में भारी विशाद उत्पन्न हो गया। गरुड़जी ने सोचा- 'मैंने तो सुना था कि व्यापक, माया-मोह परे ब्रह्म ने ही राम के रुप में अवतार लिया है और उनकी दिव्य व्यापकता निर्गुण-निराकार और सगुण-साकार रुपमें हैं उन्हींके उन्मेष और निमेष मात्र से संसार की उत्पत्ति और प्रलय होते हैं, परन्तु यहाँ तो उनका प्रभाव देखने को नहीं मिला। जिनका नाम जपकर मनुष्य संसार के बंधन से मुक्त हो जाता है, उन्हीं राम को एक राक्षस नाग-पास में कैसे बांध सकता है?

भव बंधन ते छूटहिं नर जपि जाकर नाम।
खर्ब निसाचर बाँधेउ नागपास सोइ राम।।

गरुड़जी ने अनेकों प्रकार से मन को समझाया, परन्तु उन्हें ज्ञान न हुआ। संदेह की स्थिति में वे दु:खी हो गये और उन्हें माया ने बुरी तरह ग्रसित कर लिया। निवारण के लिए वे नारदजी के पास गये। नारदजी प्रभु की माया को समझ गए सो उन्होंने ब्रह्मा के पास भेज दिया। ब्रह्माजी को रामकी माया समझने में तनिक देर नहीं लगी और उन्होंने भगवान् शंकर के पास भेज दिया। भोलेनाथ कुबेर के घर जा रहे थे और फिर यह सोचकर कि 'खग जाने खग ही की भाशा', उन्होंने गरुड़जी को सत्संग और हरिकथा के महत्त्व को समझाया और कहा कि आप उत्तर दिशा में सुन्दर नील पर्वत पर जाकर राम भक्ति के प्रवीण काक भुशुण्डिजी के सान्निध्य में श्रीहरि के गुण समूहों का श्रवण करें, जिससे मोह से उत्पन्न आपका दुख दूर होगा। भुशुण्डिजी नील पर्वत पर निरन्तर राम कथा कहते रहते हैं, जिसे भांति भांति के श्रेष्ठ पक्षी आदर सहित सुनते हैं।

गरुड़जी को काक भुसुण्डिजी से कथा सुनकर मोह भंग हुआ। उनका संदेह दूर हुआ। उन्होंने जाना कि जो चराचर जगत् के सर्जक, पालक-पोषक, संहारक हैं, वही रामने सच्चिदानन्द परम ब्रह्म भक्तों के लिए नर रुप धारण कर नाना प्रकार की नर लीला की। संदेह दूर होने के बाद गरुड़जी ने भुशुण्डिजी से निम्नलिखित सात प्रसन किए, जो प्राणिमात्र के लिए सब प्रकार से हितकारी है।

प्र न 1. सबसे दुर्लभ कौन-सा शरीर है ?
2. सबसे बड़ा दु:ख कौन है ?
3. सबसे बड़ा सुख कौन है ?
4. संत कौन हैं ?
5. असंत कौन हैं ?
6. श्रुतियों में प्रसिद्ध सबसे महान् पुण्य कौन-सा है ?
7. मानस रोग क्या है ?

प्रथम प्रश्न के उत्तर में भुशुण्डिजी ने बताया कि संसार में सबसे दुर्लभ मनुष्य शरीर है। चर-अचर सभी जीव मनुष्य शरीरपाने के इच्छा रखते हैं क्योंकि मनुष्य का शरीर स्वर्ग, नरक और मोक्ष की सीढ़ी है तथा यह कल्याणकारी ज्ञान, वैराग्य और भक्ति को देनेवाला है।

नर तन सम नहिं कबनिउ देही। जीव चराचर जाचत तेही।।
नरक स्वर्ग अपवर्ग निसेनी। ग्यान बिराग भगति सुभ देनी।।

भुशुण्डिजी ने कहा कि ऐसा मनुष्य का शरीर धारण कर जो लोग श्रीहरि का भजन नहीं करते और नीच से नीच विषयों में अनुरक्त रहते हैं, वे पारसमणि को फेंककर बदले में काँच के टुकड़े लेते हैं। भुशुण्डिजी का कथन है कि नर तन पाकर प्राणियों को भगवत् भजन करना चाहिए।

दूसरे और तीसरे प्रश्न के उत्तर में भुशुण्डिजी कहते हैं कि इस संसार में दरिद्रता के समान दूसरा दु:ख नहीं है और संतों का मिलन हो, सत्संग हो, यह सबसे बड़ा सुख है।

नहिं दरिद्र सम दु:ख जग माही। संत मिलन सम सुख जग नाही।।

चतुर्थ प्रश्न का उत्तर संत का वर्णन है। भुशुण्डिजी कहते हैं- मन, वचन और शरीर से जो परोपकार करे, वही संत है। संत दूसरों की भलाई के लिए दु:ख सहते है। संत की दयालुता भोज के वृक्ष के समान होती है, जो दूसरों की भलाई के लिए अपनी खाल तक उघड़वा लेते हैं। भोज के छाल पर पहले धार्मिक ग्रंथ एवं अनेक

शुभ कार्यों को लिपिबद्ध किया जाता था। राम चरित मानस में संतों की महिमा और उनके लक्षण अनेक बार बताए गए हैं। स्वयं भगवान श्रीराम ने अपने मुखारविन्द से देवर्षि नारद और अपने भाइयों को इसे बताया है।

पाँचवां प्रश्न असंतों के विषय में है। उत्तर में भुशुण्डिजी कहते हैं- असंत दुष्ट प्रकृति के होते हैं। वे दूसरों को दु:ख पहुँचाने के लिए सदा तत्पर रहते हैं। असंतों की प्रकृति सन (पटुआ) की तरह होती है। सन अपनी खाल खिंचवाकर अर्थात् विपत्ति सहकर भी दूसरों को बाँधते हैं। दुष्टों की तुलना साँप और चूहे से की गई है, जो अकारण ही दूसरों का उपकार करते हैं। असंत दूसरों की सम्पत्ति का नाश करके स्वयं नष्ट हो जाते हैं। जैसे ओला खेती को तो नष्ट करते ही हैं, स्वयं को भी नष्ट कर लेते हैं।

पर सम्पदा बिनासि नसाही। जिमि ससि हति हिम उपल बिलाही।।

दुष्टों की उत्पत्ति दूसरों को दु:ख देने के लिए ही होता हैं जैसे केतु ग्रह दूसरों को सदैव कष्ट ही पहुँचाते हैं। इसके विपरीत संतों का अभ्युदय चन्द्रमा और सूर्य की तरह विश्वभर के लिए सुखदायक है।

छठे प्रश्न का उत्तर सबसे महान् धर्म से संबंधित है। वेदों में अहिंसा को परम धर्म माना गया है और पर निन्दा को सबसे भारी पाप। इसलिए पर निंदा सर्वथा वर्जित है। जो मूर्ख मनुष्य सबकी निंदा करते हैं, वे चमगादड़ होकर जन्म लेते हैं।

सातवें और अंतिम प्रश्न का उत्तर विस्तार से दिया गया है। मानस रोग से ही सब दु:ख पाते हैं। मोह (अज्ञानता) ही सब दु:खों की जड़ है। मोह से ही काम, क्रोध और लोभ उत्पन्न होता है। काम वात रोग है। लोभ कफ है। क्रोध पित्त है, जो छाती को सदा जलाता रहता है। ये तीनों एक साथ मिल जाए, तो दु:खदायक सन्निपात रोग हो जाता है।

मोह सकल ब्याधिन्ह कर मूला। तिन्ह ते पुनि उपजहि बहु सूला।।
काम वात कफ लोभ अपारा। क्रोध पित्त नित छाती जारा।।
प्रीति करहिं जौं तीनिउ भाई। उपजइ सन्निपात दु:खदाई।।

विषयों के मनोरथ मूल हैं। ममता दाद है। ईष्या(डाह) खुजली है। हर्ष विषाद को गले का रोग (गलगंड, कंठमाला या घेघा) है। पराये सुख को देखकर जो जलन होती है, वह क्षयी रोग है। दुष्टता और मन की कुटिलता कोढ़ है। अहंकार अत्यंत दु:ख देनेवाला डमरु (गाँठ का) रोग है। दंभ, कपट, मद और मान-ये नसों के रोग हैं। तृष्णा जलोदर रोग है। पुत्र, धन और मान की प्रबल इच्छाएं तिजोरी है।। मत्सर और अविवेक दो प्रकार के ज्वर हैं। इस प्रकार अनेक मानस रोग हैं। एक ही रोग के वश होकर मनुष्य मर जाता है, फिर ये तो बहुत असाध्य रोग है। काकभुशुण्डिजी कहते हैं कि जो जीव इतने सारे मानसिक रोगों के शिकार हैं, निरन्तर कष्ट पाते रहते हैं। उन्हें शान्ति कैसे मिलेगी। अतएव इनकी औषधियों का सेवन करना चाहिए। नियम, धर्म, आचार, (उत्तम आचरण) तप, ज्ञान, यज्ञ, जप, दान आदि अनेकों औषधियाँ हैं। मानस रोग राम कृपा से ही नष्ट होता है।

राम कृपा नासहिं सब रोगा। जौं एहि भांति बनै संयोगा।।
सद्गुर बैद बचन बिस्वासा। संयम यह न विषय कै आसा।।
रघुपति भगति सजीवन मूरी। अनूपान श्रद्धा मति पूरी।।

कागभुशुण्डिजी कहते हैं- जब हृदय में बैराग्य का बल बढ़ जाय, तब मन को निरोग मानना चाहिए। यह अटल सत्य है कि बिना राम के भजन से संसार रूपी दु:ख से उबरा नहीं जा सकता है।

हिम ते अनल प्रगट बरु होई। बिमुख राम सुख पाव न कोई।।

सबका निचोड़ यह है कि नर तन पाकर मनुष्य को छल, कपट, दंभ, ईर्श्या, लोभ, क्रोध, मोह, मान, मत्सर- सबका परित्याग कर प्रभु का भजन करना चाहिए, क्योंकि-

वारि मथे घृत होइबरु सिकता ते बरु तेल।

बिनु हरि भजन न भव तरिअ यह सिद्धांत अपेल। अर्थात् जल के मथने से घी उत्पन्न हो जाए, और बालू के पेरने से भले ही तेल निकल आए, परन्तु श्रीहरि के भजन बिना संसार सागर से नहीं तरा जा सकता है। यह सिद्धांत अटल है।

गया का पितृपक्ष मेला के अवसर पर भारत के कोने-कोने से तथा विदेशों से लाखों की संख्या में हिन्दुधर्मावलंबी तीर्थयात्री गया पधारते हैं और अपने पूर्वजों की आत्मा की चिरशान्ति के लिए निर्धारित विधि से श्राद्ध-क्रिया करते हैं। मैं आशा करता हूँ कि बाहर से आनेवाले श्रद्धालुओं का गया प्रवास सुखमय, शान्तिमय एवं सब प्रकार से कष्टरहित होगा। इत्यलम्।

◆

राज्यपाल के पूर्व सूचना पदाधिकारी
पटेल नगर, पटना

श्रद्धा, श्राद्ध और आत्म-सत्ता

डॉ० सच्चिदानन्द प्रेमी

हिन्दू धर्म में परमेश्वर के विषय में जितना गहरा सर्वांगीण और सार्वभौम विचार हुआ है, शायद उतना किसी अन्य दर्शन, धर्म या सम्प्रदाय में नहीं हुआ होगा। लेकिन नेति-नेति के बाद लोग यही निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि वह यानी ईश्वर का वर्णन नहीं किया जा सकता है, क्योंकि वह शब्द शक्ति से परे हैं।

शोल्लुकक्र डंगावे पराशक्ति।

यहाँ प्रश्न हो सकता है कि- वह वर्णन से परे है तो फिर है क्या ?

योगशास्त्र अनुसार यथा पिंडे तथा ब्रह्मांडे।

जो पिंड में है यानी शरीर में है वही ब्रह्माड में है। जो सत्य है वही ईश्वर है। सत्य का तर्क की आवश्यकता नहीं होती। यह भाव श्रद्धा से ग्रहण किया जा सकता है। श्रद्धा जितनी मजबूत होती है उनका अनुभव भी पग-पग पर उतनी ही जल्दी होगा।

भगवान कृष्ण कहते हैं- श्रद्धावान लमते ज्ञान। श्रद्धा के बिना नहीं तो जीवन है नहीं जीवन के बाद की कल्पना धर्म के चारचरण वेदों ने गाये है जिनमें श्रद्धा प्रथम है।

सत्य प्रेम सर्व त्याग तो समाप्ति के कगार पर है। धर्म आज एक गाँवा (श्रद्धा) पर खड़ा है या लड़खड़ाता चला रहा है।

श्रद्धा से उत्पन्न कर्म को या श्रद्धा के साथ क्रियान्वित कर्म को श्राद्ध कहा जाता है। श्राद्ध में श्रद्धा है। यह एक रुढ़ि है कि श्राद्ध कर्म कितने मृत-आत्मा के लिए कियाजाता है। प्रायः श्राद्ध से मरणोपरांत किया जाने वाला कर्म ही समझा जाता है।

इस पर पौराणिक मत तो है ही–वैज्ञानिक चिंतन पर भी ध्यान दिया जा सकता है। असमय मृत्यु के बाद कौन सी क्रिया प्राणि के लिए आवश्यक होती है। सबसे पहले मृत्यु पर विचार किया जा सकता है।

मृत्यु को किसी देश, महादेश की परिधि में परिसिमित नहीं किया जा सकता। शास्त्र में इस पर अपने विचार दिये है जो हमारी आर्ष पद्धति के अनुसंधान कर्ता ऋषियों ने अपनो तपबल से प्रतिपादित किया था। वहीं विज्ञान को भी अपनी खोज–पद्धति जारी रखी। हमारे पुराणों ने इसे अपने ढंग से व्यवस्थित करते हुए जीवन का परिवर्तन बताया–वासांसि जीर्णानि यथा विहय

ननानि गृहणति नरोड पराणि।

तथा शरीरणि विहाय गीर्णा, न्ययानि संयति–नवनि देही। आत्माका आना नहीं होता। श्रद्धा के द्वारा उसे शरीर प्राप्त होता है। हमारे सारे ग्रन्थ इसकी पुष्टि करते हैं।

वहीं पाश्चात्य वैज्ञानिक सर विलियम क्रुक्स (Sir William Crookes) गर्ण (Gurney), डॉ० मायर्ज (Dr. Myres) आदि ने Sir Oliver Lodge प्राचार्य, बरमिंघम विश्वविद्यालय की अध्यक्षता में पहले की सहायता से इंगलैण्ड में एस०पी०आर० मानसिक शोध संस्थान की स्थापना की थी। इसमें हुए शोधों के अनुसार मायर्ज ने अपनी मृत्यु के एक महीने बाद सर लॉज से बार्ता की थी जो मृत्यु के पूर्व से प्रस्तावित थी। सर कुक्स ने एक विशेष प्रकार के कैमरे से मृत आत्माओं के चित्र भी खींचे और उन्हें सर्वजनिक किया था। भारतीय सनातन धर्म के स्वामी अभेदानन्द अपनी पुस्तक Life Beyond Death में कुछ मृत–आत्माओं के चित्र भी दिये हैं। पाश्चात्य देशों में खाशकर इंगलैण्ड, अमेरिका और जर्मनी में प्रेत–तत्व की बैठकें भी आयोजित होती है यथा Aksakol ने एक बैठक की अध्यक्षता करते हुए सिखा है– जीवित व्यक्तियों के माध्यम से मृत आत्माओं को बुलाकर बैठक में बात चित की गई। फिर यह बैठक इस पर पहुँची कि भोगासल आत्मा मरने के बाद बहुत कष्ट भोगती हैं। वे यह भी अनुभव नहीं कर पाती कि अब वे शरीर से मृत हो चुकी है। वे निद्राच्छन्नअवस्था में होती है। इस सम्बन्ध में मेरे आचार्य श्रद्धास्पद श्री सकल वाश गीता प्रेस के संस्थापक ब्रह्मलीन महावीर प्रसाद पोद्दार जी की घटना जो मुम्बई के समुद्र तट पर धटी थी सुनाते थे। एक प्रेत आत्मा उनसे जिदकर अपना श्राद्ध गया धाम में करवाई थी। पुन: उन्हें इसके लिए धन्यवाद भी दिया था और कृतज्ञता ज्ञापित करते हुए मोक्षकी गति प्राप्त की थी। इसकी पुष्टि रिचर्ड हडसन की कृति में करते हुए कहते हैं कि भौतिक आसक्तयों के पूर्व संस्कार उन्हें संसार में अपने चाहनेवालों से मिलने के लिए आने के लिए वाध्य करते है। उच्च संस्कार से संस्कृत आत्मओं को कोई कष्ट नहीं होता है। अपना पवित्र जीवन बिताने के कारण अपने प्रकाश से वे रास्ता खोजलेते हैं। इसकी पुष्टि सनातन धर्म के गरुड़ पुराण भी करता है।

इस अध्ययन से इसी निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकता है कि पाश्चात्य आत्याधुनिक अनुसंधान (परामनो विज्ञान) हिंदू शास्त्रों में वर्णित मृत्यु परलोक और पुनर्जन्म के सिद्धांत को पुष्ट करता है। अत: श्राद्ध प्रक्रिया विज्ञान पर आधारित है।

◆

राष्ट्रीय शिक्षा पुरस्कार एवं
निराला साहित्य सम्मान प्राप्त प्राचार्य टेकारी राज स्कूल
उपाध्यक्ष, आचार्यकुल, बिहार

लक्ष्मण गीता

श्री शिव वचन सिंह

महाभारत के समय कुरुक्षेत्र के मैदान में जब अर्जुन को अपने सगे-संबंधियों को देखकर मोह उत्पन्न हो गया, तो भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन को उपदेश दिया और उनका मोह भंग हुआ। भगवान् के श्रीमुख से कही गई वह वाणी श्रीमद्भगवद्गीता कहलाती है। यह अठारह अध्यायों में है। जबकि लक्ष्मणगीता अठारह पंक्तियों में है। इसी प्रकार राम, लक्ष्मण और जानकी वन-गमन के क्रम में दूसरा पड़ाव श्रृंगवेरपुर में डालते हैं। कुश और कोमल पत्तों की साथरी सजाकर विछाते हैं। रामजी लेट गये। लक्ष्मण उनके पैर दबाने लगे। जब रामजी सो गये, लक्ष्मण कुछ दूरी पर धनुष बाण सजाकर वीरासन में बैठकर पहरा दे रहे हैं। निशादराज ने विश्वासपात्र पहरेदारों को बुलाकर अत्यंत प्रेम से जगह जगह नियुक्त कर दिया और स्वयं कमर में तरकस बाँधकर तथा धनुश पर बाण चढ़ाकर लक्ष्मण जी के पास जाकर बैठ गये।

प्रभु को जमीन पर सोते देखकर प्रेमवश निशादराज के हृदय में विशाद उत्पन्न हो गया। गुह (निशादराज) लक्ष्मणजी से कहने लगे-महाराज दशरथ के महल की सुन्दरता की समानता इन्द्रभवन भी नहीं कर सकता। वहाँ फूलों की सुगन्ध से सुवासित है, जहाँ सुन्दर पलंग और मणियों के दीपक हैं। ओढ़ने बिछाने के लिए अनेक वस्त्र, तकिये और गद्दे हैं, जो दूध के फेन के समान कोमल, निर्मल और सुन्दर हैं। उन चौबारों में श्रीसीताजी और रामजी सोया करते थे। वही सीता और रामजी आज घास फूस की साथरी पर सोये हैं। ऐसी दशा देखी नहीं जाती। ऐसा सोचते-सोचते निशादराज कैकेयी को इसके लिए दोशी ठहराता है, जिसने श्रीराम एवं जानकी को सुख के समय दु:ख दिया है। निशादराज आगे कहता है कि कैकेयी सूर्यकुल रुपी वृक्ष के लिए कुल्हाड़ी हो गई, जिसने अपनी कुबुद्धि से सम्पूर्ण विश्व को दु:ख दिया। निषादराज को अत्यंत दु:खी देखकर लक्ष्मणजी, जो स्वयं भोगावतार हैं, ने ज्ञान, वैराग्य और भक्ति की रस से सनी हुई मीठी और कोमलवाणी में निशादराज को समझाया। इससे निशादराज का मोह उसीतरह भंग हुआ, जिस तरह श्रीकृष्ण की वाणी सुनकर अर्जुन का मोह भंग हुआ था। इसे संत लोग लक्ष्मण गीता कहते हैं। राम चरित मानस का यह प्रसंग प्राणिमात्र के लिए बड़ा ही मार्गदर्शक और कल्याणकारी है।

भयउ बिशादु निशादहि भारी। राम सिय महि सयन निहारी।।

बेले लखन मधुर मृदु बानी। ग्यान बिराग भगति रस सानी।।

लक्ष्मणजी ने कहा-हे भाई। कोई किसी को न तो सुख देता है और न दु:ख। सब अपने ही किये हुए कर्मों का फल भोगते हैं। जीवन में मिलन (संयोग), बिछुड़न (वियोग) भले बुरे भोग, शत्रु, मित्र और उदासीन-ये सभी भ्रम के फंदे हैं। जन्म-मृत्यु, संपत्ति-विपत्ति, कर्म और काल-सभी जगत् के जंजाल हैं।

काहु न कोउ सुख दुख कर दाता। निज कृत करम भोग सुनु भ्राता।।

जोग वियोग भोग भल मंदा। हित अनहित मध्यम भ्रम फंदा।।

जनमु मरनु जहँ लगि जग जालू। संपति बिपति करमु अरु कालू।।

लक्ष्मणजी कहते हैं- धरती, घर, धन, नगर, परिवार, स्वर्ग, नरक आदि जहाँतक देखने सुनने ओर मन के अन्दर विचारने में आते हैं, इन सबका मूल मोह (अज्ञान) है। परमार्थत: ये नहीं हैं। जैसे सपने में कोई राजा भिखारी हो जाए या कंगाल स्वर्ग का स्वामी इन्द्र हो जाए, तो जागने पर उसे कोई हानि लाभ नहीं होता। ठीक उसी प्रकार संसार में जो कुद हो रहा है या दिखाई दे रहा है, यह दृश्य-प्रपंच हृदय से देखना चाहिए। ऐसा

विचारकर क्रोध नहीं करना चाहिए और न किसी को दोष ही देना चाहिए। सभी लोग मोह रुपी रात्रि में सोनेवाले हैं और सोते हुए अनेकों स्वप्न दिखाई देते हैं।

लक्ष्मणजी आगे कहते हैं, कि इस संसार में जो परमार्थी हैं और मायिक जगत् में अलग अलग हैं, वैसे योगी लोग जगत् रुपी रात्रि में जगते हैं। इस संसार में उसी जीव को जगा हुआ जानना चाहिए, जिसे सम्पूर्ण भोग विलासों से वैराग्य हो जाए। जब जीव को विवेक होता है, तब मोह रुपी भ्रम भाग जाता है। जब अज्ञानता अर्थात् मोह दूर हो जाता है, तब श्रीरघुनाथजी के चरणों में प्रेम हो जाता है। श्रीरामजी के चरणों में प्रेम होना, यही सर्वश्रेष्ठ पुरुषार्थ है।

होइ बिबेकु मोह भ्रम भागा। तब रघुनाथ चरण अनुरागा।।
सखा मरम परमारथु एहू। मन क्रम वचन राम पद नेहू।।

राम परब्रह्म हैं। वे अविगत (जानने में न आनेवाले), अलख (देखने में न आनेवाले), अनादि (आदि रहित), अनुपम (उपमा रहित), सब विकारों से रहित और भेद शून्य हैं। वेद जिनका नेति नेति कहकर निरुपण करते हैं।

राम ब्रह्म परमारथ रुपा। अविगत अलख अनादि अनूपा।।
सकल बिकार रहित गत भेदा। कहि नित नेति निरुपहिं वेदा।।

वही कृपालु श्रीरामजी भक्त, भूमि, ब्राह्मण, गौ और देवताओं के हित के लिए मनुष्य शरीर धारण करके लीलाएं करते हैं, जिनके सुनने से जगत् के जंजाल मिट जाते हैं।

भगत भूमि भूसुर सुरभि सुर हित लागि कृपाल।
रकत चरित धरि मनुज तनु सुनत मिटहिं जग जाल।।

लक्ष्मणजी ने कहा कि ऐसा समझकर मोह का त्याग करो और श्रीरामचन्द्रजी के चरणों में प्रेम करो। श्रीरामजी के गुण कहते कहते सबेरा हो गया और निशादराज का मोह जाता रहा।

गीताजी में भगवत् प्राप्ति के दो साधन बताये गये हैं–एक सांख्य योग, दूसरा कर्म योग। सम्पूर्ण सांसारिक पदार्थ को मृगतृष्णा के जल की भांति अथवा स्वप्न की भांति समझते हुए वासुदेव के सिवाय अन्य किसी के भी न होने का भाव न रहना सांख्य योग है और सबकुछ भगवान् का समझकर फल की इच्छा त्यागकर केवल भगवान् के लिए सब कर्मों का आचरण करना कर्मयोग कहलाता है। लक्ष्मणजी ने इन्हीं सार तत्त्वों को निशादराज के समक्ष रखा।

◆

अधिवक्ता, कोईरीबारी, गया

हिन्दू धर्म और पितृ-तीर्थ गया

डॉ० सोनू अन्नपूर्णा

हिन्दू धर्म में आस्था, परंपरा और मान्यता का विशेष महत्त्व है। इसकी संस्कृति को विदेशों में भी सराहा गया है। धर्मपरायणता हिन्दुओं को एक विशेष पहचान देती है। देवी-देवताओं के प्रति आस्था, अपने माता-पिता तथा बुजुर्गों के प्रति सम्मान, अपने परिवार, समाज तथा अपने इष्ट मित्रों के प्रति भी कर्त्तव्यपरायणता का पाठ हमें वेद, पुराण आदि धार्मिक ग्रंथों से मिलता है। मनुष्य परिवार में जन्म लेता, जीवन बिताता और अंत में जीवन-लीला समाप्त करता है। कोई लंबी उम्र जीते हैं, कोई कम उम्र में ही चले जाते हैं।

जो लोग चले जाते हैं, उनके जाने के बाद उनके पुत्रादि, सगे-संबंधी, इष्ट मित्र सभी का यह कर्त्तव्य होता है कि वे दिवंगत आत्मा की शांति एवं तृप्ति तथा मुक्ति के लिए कुछ धार्मिक अनुष्ठान करें। इसी धार्मिक अनुष्ठान को 'श्राद्ध' कहा जाता है। श्रद्धापूर्वक किए जाने के कारण ही इसका नाम 'श्राद्ध'' पड़ा है। हिन्दू लोग, गया को पितरों के स्वर्गारोहण का द्वार मानते हैं और इसीलिए हर वर्ष यहाँ आकर पितृपक्ष में उनके लिए कुछ धार्मिक अनुष्ठान करते हैं। गया भारत का एक प्रमुख पितृ-तीर्थ है। प्रत्येक मनुष्य पितृ-ऋण, ऋषि तथा देव ऋण से छुटकारा पाना चाहता है। पितृ ऋण इनमें से सर्वप्रमुख है, जिसे चुकाने के लिए मनुष्य को अपने पूर्वजों की मृतात्माओं को पिंडदान एवं जलांजलि देनी होती है, ताकि उनके पूर्वज तृप्त हो सकें। प्रत्येक तीर्थ स्थान में श्राद्ध करने का महत्त्व है, परंतु गया का महत्त्व सर्वोपरि है। 'मत्स्य पुराण' के अनुसार -

''पितृतीर्थ गयानाम सर्वतीर्थवर शुभम्।
यत्रास्ते देव देवेशः स्वमेह पितामह।।''

अत्यंत प्राचीन काल से ही गया में श्राद्ध होता चला आ रहा है। गया में श्राद्ध करने तथा पितरों का पूजन करने से भगवान विष्णु भी पूजित होते हैं। श्राद्ध के विषय में बताते हुए और्व ऋषि ने कहा- ''श्रद्धाभाव से श्राद्धकर्म करने वाला मनुष्य ब्रह्मा, रूद्र, इंद्र, अश्विनी कुमार, सूर्य, अग्नि, वसुगण, मरुद्गण, विश्वैदेव, पितृगण, पक्षी, पशु, मनुष्य, सरीसृप, ऋषिगण और भूतगण आदि संपूर्ण विश्व को प्रसन्न करने में समर्थ है।'' (विष्णु पुराण सं०-अशोक कौशिक-2002 ई०, पृ०-107)। आगे उन्होंने यह भी कहा है कि जो पुरुष गया में जाकर श्राद्ध करता है, उसका पितरों को तृप्त करने वाला वह जन्म सफल हो जाता है।

'ब्रह्मपुराण' के अनुसार-

''देशे काले च पात्रे च श्रद्धया विधिना च यत्।
पितूनुद्दिश्य विप्रेभ्यों दत्तं श्राद्धमुदाहृतम्।।''

अर्थात् देश, काल, पात्र में पितरों के उद्देश्य से श्रद्धापूर्वक तिल, जल आदि के त्याग को श्राद्ध कहते हैं।

ऐसा माना जाता है कि पितर लोग श्राद्ध से तृप्त होकर आयु, धन, विद्या आदि तरह-तरह के सुख प्रदान करते हैं। अतः श्राद्ध करना पुत्र का परम कर्त्तव्य है। धर्मग्रंथ के अनुसार भाद्र मास की पुर्णिता से आश्विन की अमावस्या तक पिंडदान व तर्पण किया जाता है। इसलिए इस समय को पितृपक्ष कहा जाता है। इन दिनों में श्राद्ध करने वाले व्यक्ति के सभी मनोरथ पूर्ण हो जाते हैं तथा अंत में स्वर्ग की प्राप्ति होती है-

''आब्दमध्ये गया श्राद्धं यः करोति च मानवः।
सर्वान्कामान्सलभतेस्वर्गलोके महीयते।।''

चूँकि गया में पिंडदान का अपना महत्त्व है। अतः इन पंद्रह दिनों में देश-विदेश हर जगह से लोग अपने पितरों को पिंडदान देने यहाँ हर साल आते हैं। माना जाता है कि सतयुग में ब्रह्मा जी ने सर्वप्रथम यहाँ पिंडदान किया था। तभी से यहाँ पिंडदान की परंपरा चल रही है। जो भी हो, इतना तो तय है कि धार्मिक मान्यताओं को मानते हुए गया में प्रतिवर्ष अनेक जगहों से लोग आते हैं और अपने पूर्वजों का श्रद्धापूर्वक श्राद्ध-तर्पण आदि करते हैं। तभी तो 'पद्म पुराण' में कहा गया है-

''एष्टव्या बहवः पुत्रा यद्यको पि गयां ब्रजेत।
यनेत वाश्वमेधेन नीलं ना वृषमुत्सृजेत।।''

(स्वर्ग०-38/96)

◆

वरीय व्याख्याता, हिन्दी विभाग, गया कॉलेज, गया

पितृपक्ष विश्व का अनूठा मेला

श्री अनन्त कुमार

मुझे गयाधाम में बड़ी प्रसन्नता की अनुभूति हो रही है। कुछ माह पूर्व ही मुझे यहाँ आने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। यहाँ आकर मैंने सर्वप्रथम भगवान विष्णु के चरणों में प्रणाम निवेदित किया, जिनकी कृपा से मुझे इस सांस्कृतिक नगरी में सेवा करने का अवसर प्राप्त हुआ है। यह भी बड़े सौभाग्य की बात रही कि कुछ दिनों में ही पितृपक्ष मेला से रू-ब-रू होने का मौका मिला। पितृपक्ष मेला संसार का अपने ढंग का अकेला मेला है। मेला के और जो अन्य आयोजन होते हैं, उनमें भीड़-भाड़, मनोरंजन के साधन, आकर्षण की सामग्रियों की भरपूर व्यवस्था रहती है, किन्तु पितृपक्ष मेला, एक ऐसा मेला है, जिसमें इन सबसे भिन्न मात्र आस्था, विश्वास और श्रद्धा पर आधारित सम्पूर्ण परिवेश का दर्शन होगा। यहाँ इस मेले में बाजा-गाजा, शोर-शराबा या धक्का-मुक्की नहीं मिलेगी। यहाँ जो आते हैं, शान्त भाव से आते हैं। देश के कोने-कोने और विदेशों से भी हमारे सनातन धर्मावलंबी पितृपक्ष में गया आते हैं और श्राद्ध-कर्म-तर्पण तथा पितर-पूजा करते हैं और अपने पितरों की आत्मा की चिर-शान्ति के लिए भगवान विष्णु के चरणों में शीष नवाते हैं।

हर वर्ष पितृपक्ष मेला भादो शुक्लपक्ष की अनन्त चतुर्दशी के दिन से प्रारंभ होता है। इस वर्ष यह मेला 8 सितम्बर, 2014 से आरंभ हो रहा है और 24 सितम्बर, 2014 तक चलेगा। इस अवधि में गया धाम में लाखों की संख्या में तीर्थ-यात्रियों का आगमन होता है। इस वर्ष भी अपेक्षा की जाती है कि तीर्थ-यात्रियों के आगमन में कमी नहीं आयेगी। इसी कारण गया प्रशासन कई माह पूर्व से ही पितृपक्ष की व्यवस्था में तत्परता पूर्वक कार्य कर रहा है। गया के जिलाधिकारी महोदय के नेतृत्व में जिला प्रशासन ने यात्रियों की सुविधा के लिए समुचित व्यवस्था की है। तीर्थ-यात्रियों के रहने तथा जहाँ पर रहेंगे, वहाँ की सफाई, बिजली-पानी आदि की समुचित व्यवस्था की गयी है। साथ ही यात्रियों की सुरक्षा के लिए पुलिस बल की भी पर्याप्त व्यवस्था की गई है। स्वास्थ्य शिविर, सुरक्षा शिविर आदि बनाये गए हैं, जहाँ पर तीर्थ-यात्रियों को अहर्निश सेवा प्रदान की जायेगी। हमारे सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग की ओर से भी दो सूचना-केन्द्र यथा रेलवे स्टेशन एवं शंकराचार्य पार्क विष्णुपद मंदिर में खोले गए हैं। ये सूचना-केन्द्र चौबीसों घंटा काम करेंगे। तीर्थ-यात्रियों को इन केन्द्रों से पूरी सहायता प्राप्त होगी।

तीर्थ-यात्रियों के सात्विक मनोरंजन के लिए भी प्रत्येक दिन संध्या समय कीर्त्तन-भजन प्रवचन आदि की व्यवस्था की गयी है।

साथ ही सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग की ओर से प्रत्येक संध्या समय संस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत किए जायेंगे। इसी कड़ी में जिला प्रशासन द्वारा एक स्मारिका भी प्रकाशित की जाती है, ताकि यहाँ जो तीर्थ-यात्री आये, वो लौटते वक्त अपने साथ एक ऐसा सारस्वत अवदान लेते जायें, जिससे उन्हें गया के संबंध में तथा पितृपक्ष एवं पितर-पूजा आदि के संबंध में पर्याप्त जानकारी मिल सके।

मुझे आशा है, इस वर्ष पितृपक्ष मेला में जो तीर्थ-यात्री आयेंगे, वे मेला-व्यवस्था से संतुष्ट रहते हुए पूरी आस्था एवं निष्ठा के साथ अपने आध्यात्मिक अनुष्ठानों को सम्पादित करेंगे और जब लौटेंगे, तब उनके हृदय में गयाधाम के संबंध में एक अच्छी छवि प्रतिष्ठित रहेगी और उन्हें पुनः पुनः गया आने को प्रेरित करेगी।

◆

सूचना एवं जन-सम्पर्क पदाधिकारी, गया

।। ॐ श्री गुरवे नमः ।।

The Spiritual Heritage of Gaya

Dr. K. K. Narayan

Much water has flown down the incessant under-current of the river Falgu, which has envisaged the legendary, mythological, geological, anthropological, social, geographical, historical, political, diplomatic, religious, archaeological, philosophical, psychological, cultural and spiritual explorations down the ages. The currents and cross-currents of the River Valley Civilization on the one hand and the multitudinous ritualistic traditions on the other have made Gaya the first and the last pilgrimage of mankind. The first because it provided ample space and time for Brahma - one of the trinities - to start the Creation. It was he who appeared from the naval portion of Lord Vishnu on a blooming lotus along with the four Vedas and started creating the *Universe* as is symbolized by *Brahmayoni Hill*. And the last because Gaya is the Ultimate Pilgrimage which is supposed to pave the way for Salvation. Most of the Sages and Saints, Incarnations, Prophets, Sadgurus, Philosophers and leading personalities of spiritualism who came on the Earth from time to time have graced Gaya. Their august visits have enhanced the glory of this place and they too have been benefited by the spiritual aura of this pious land. There have been successive ritualistic traditions of Sun worship, Fire worship, Shakti worship, Phallus worship, Rudrabhishek, Pantheism, Judaism, Jainism, Buddhism *(Heenyan, Mahayan, Vajrayan, Sahajyan, Mantrayan, Vipashyana),* Tantrik Sadhna, Tripindi Sadhna, Shmashan Sadhna, Hath Yoga, Raj Yoga, Hanumat Sadhna, Dash Mahavidya Sadhna, Ganesh Sadhna, Shaivism, Vaishnavism, Kundalini Sadhna, Christianity, Islam, Panch Devopasna, Navagrah Pooja, Vihangam Yoga, Integral Yoga, Shree Yogendra Satsang, Paramguru Upasana, Pindadan, Dev Tarpan, Rishi Tarpan, Pitar Tarpan, Suphism, Iztema et al which reverberate with social coherence, religious tolerance, cultural harmony and spiritual insight.

Man's eternal quest for Pleasure led him to the supra level of inner urge of Consciousness. This prompted him to look within his own self and squeeze every drop of his energy in achieving the zenith of success. Whenever he felt himself helpless before Nature he thought of seeking some help from super power. Such an approach drew his attention towards the 'Sun-worship'. In *Greek and Roman* mythologies, Hyperion is the Sun God, who is son of the sky and the Earth and 'Apollo', the grandson. *The Holy Bible*, however, tells us in the *Genesis* of the *Old Testament* that the Sun and the Moon were created during the fourth day of Creation. The 'Fire' worship or Pantheism *(Nature worship)* was triggered off forthwith. However, all the mythologies of the world testify to the fact that man is the most finished creation of God. Pointing out towards the Sun worship, Lord Krishna has reiterated in the *Shreemad Bhagwadgeeta* that he preached the Gospel of 'Brahma Vidya' first to the Sun-

इमं विवस्वते योगं प्रोक्तवानहमव्ययम्।
विवस्वान्मनवे प्राह मनुरिक्ष्वाकवेऽब्रवीत्।। (4/1)

Here 'Vivaswan' means the "Sun" to whom the imperishable science of yoga was instructed. In order to realize that state of *Madhumati Bhoomi* in the inner-self, man offers Upanishadic Prayer-

हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापि हितं मुखम्।
तत्त्वं पूषण्ण पा वृणो सत्य धर्माय दृष्टये।।

(ईशावास्योपनिषद्, 15)

Let the door of Absolute Truth lying hidden behind the golden vessel be opened and be helpful in inculcating the true spirit of 'Dharma'. On realizing this, man imbibed the essence of Selfless Service (Nishkam Karma) which he learnt from the Sun and the other attributes of Nature like the Moon, Air, Water, Earth, Sky etc. because according to the *Saankhya School of Indian Philosophy*, the Purush and twenty-four elements of Prakriti operate selflessly. *Kapildhara* is a witness to the Penance of *Maharshi Kapil* who got enlightened ultimately near *Gangasagar*.

Ours has been a glorious past. The creation emerged out of 'Nothingness' or the Void or Chaos. Thereafter 'Hiranyagarbh' (The Golden Egg) was created which metamorphosed into a Sound audible as 'Pranav' or 'Aum' out of which appeared *Mool Prakriti*, at first, known as 'Mahalaxmi'. This 'Mahalaxmi' stood for 'Rajoguna'. She gave birth to Brahma and Laxmi. Then appeared 'Mahasaraswati'. She was vested with 'Satoguna', and begot 'Lord Vishnu' and 'Parvati'. Further appeared "Mahakali" vibrant with 'Tamoguna' who brought forth 'Lord Shiva' and 'Saraswati'. All of them had neither shape nor form. One may call them *"Sagun Nirakar"*. All the three major Deities represented three Gunas of Nature *(Prakriti)*. Thereafter Lord Visnu with Laxmi; Lord Shiva with Parvati and Brahma with Saraswati were united. Formerly the entire cosmos had been wrapped within an 'Embryo' nurtured by a Force known as *"Vishnumaya Jalodari"*. The opening lines of the *Vedantic School of Philosophy "Athato Brahma Jigyasa"* directs towards that state, the knowledge of which leads to Self-Realization. Lord Brahma was initiated by Lord Vishnu to start Creation - *"Eko Aham Bahushyamah".* Consequent upon Brahma created *Sanak, Sanandan, Sanatan* and *Sanat Kumar* who remained bachelor throughout their life. Only then Saptarishis were created. They observed severe penance for many years in the caves of the *Himalayas, Barabar and Rajauli*, where still the *caves of the Saptarishis* exist. 'Rajauli' was formerly a part of Gaya district which is at present in Nawada. Before the Saptarishis started leading a family life, there was a concept of Asexual creation (Amaithuni Srishti) which followed "Maithuni Srishti". The only one stream of Spiritualism has been continuing since then as realized and propagated in different languages and techniques of the self-realization in different parts of the world from time to time. The focal point is the same but the techniques and nomenclature vary. It has been rightly said :-

गणेशं च दिनेशं च दुर्गा विष्णु तथा शिवः।
एकोऽहं पञ्चधार्याता माया नाम्नि पृथक् पृथक्।।

or

एकैव शक्तिः परमेश्वरस्य भिन्नाः चतुर्धा विनियोग काले।
भोगे भवानी पुरुषेषु विष्णुः कोपेषु काली समरेषु दुर्गा।।

Obviously enough, the worship of *Ganesh* in Maharashtra, of the *Sun* in Odisha, *Durga* or *Kali* in West Bengal and Assam, *Vishnu* in Tirupati, Chennai and Gaya, *Shiv* in Kashmir, Ujjain, Deoghar and Varanasi merged into *Panchdevopasna* all over India. This is just a noble attempt of our *Rishis* for National Harmony and spiritual injunction because all the five Deities lead towards only one Goal known as Ultimate Truth. The only one super power of Unseen Force is tetrafurcated into *Bhawani, Vishnu, Kali* and *Durga* in due course representing mundane pleasure *(Bhog)*, domestic and social responsibilities *(Purush)*, Annihilation *(Anger)* and inner conflict within our mind as a tug of war between *Pravritti*

and *Nivritti* (Samar) respectively as per denotation vis-a-vis connotation. During *Satyug* people opted for inner purification by Dhyan and Samadhi, during *Treta* by performing Yajna, during *Dwapar* by *Pad Sewa*, worshipping the lotus feet of the Rishis-and-selfless service, during *Kaliyuga*, selfless donation (दान) and 'Naam Jap' had been the main component of Indian ritualistic tradition. Whenever these techniques and systems yielded to fossilized/stereotyped/mechanical form of worship or superstitious beliefs, there appeared an authoritative personality to uproot the weeds of superstition leading to distortion of the true spirit of religion and till the inner recesses of human heart enabling the devotees receive the pious seed of divinity in their hearts and proceed inward and onward with spiritual fragrance. This is what the *Shreemad Bhagwadgeeta* means by the declaration :-

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानामधर्मस्य तदात्मानाम् सृजाम्यहम्।।
परित्राणाय साधूनाम् विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे।। (4:7–8)

Initially people opted for Fire worship which was performed by offering 'Samidha' into 'Hawankunda'. And in order to declare the process of *'Purashcharan'* (पुरश्चरण) complete they offered 'Coconut' or 'Pinda' supplemented by fruits and sweets as well as *Tarpan* and *Maarjan* along with *Pradakshina* and *Bhandara* and *Langar* of Guru. The ritualistic traditions synchronised in Gaya also of which some deserve to be mentioned viz., *Sun* worship near *Surya Kund*, *Fire* worship, *Yajna, Shakti Upasana* evident from *Gayeshwari Devi* and *Mangala Gauri*, Phallus *(Shiv Lingam)* worship as *Markandey Mahadev, Pitamaheshwar, Vriddh Pitamaheswar*, *Penance* by the Jainism *(Shwetambar School & Digambar School)*, *Vipashyana* by Buddhism, *Namaaz* at Jama Masjid and other Mosques, elements of *Suphism* at Vitthosharif & Peer Mansoor, *Prayer* in Churches and *Guru Ka Langar* supplemented by *Shabad* and *Japuji* of Guru Nanak in the *Gurudwara* which echo religious harmony as well as spiritual vibrations.

There are several anecdotes and references regarding the existence of 'Gaya'. He is still an enigma before us. To some he is a *Rajarshi* belonging to the dynasty of Manu and Ikshwaku and to others he had been the third son of BUDH and ILA. During the Pre-Vedic age he founded 'Gaya' on the bank of Falgu, whereas, his two elder brothers Pururava and Utkal founded Prayag and Puri respectively. Formerly Prayag was called ILAVARTA and now Allahabad. To some Gaya had been a devoted Tantrik as well as a Vedic Rishi. A few group of scholars consider Gaya as a Shaivite or Vaishnavite. Gaya had also been known as a *Kol King* who was quite benevolent and had made his capital on Kolahal Hill and ruled from Gaya to Palamu during 1409 B.C. onwards. However, in the *Vedas* 'Gaya' has composed some important *Richas* also. The sixty third and the sixty fourth *Richas* of the tenth *Mandal* of the *'Rig Veda'* have been composed by Gaya who had been the son of *Plati*, a renowned saint.

''अस्तावि जनो दिव्यो गयेन''

As per *Atharva Veda* (1/14/4) there was a rigorous Sadhak named 'Gaya' who had been associated with *Kashyap* and *Asit*. In the Nirukta (12/19) of Yask the Richa of the Rig Veda (1/22/17) – इदं विष्णु विचक्रमे त्रेधा नि दधे पदम् – has been explained as

पृथिव्यामन्तरिक्षे दिवीति शाकपूर्णिः।
समारोहनेण विष्णुपदे गयाशिरसि इति और्णनाभः।। (12/19)

According to the 'Buddhacharit' by Ashwaghosh Lord Buddha had visited the

Aashram of the saint *Gaya* who lived at the bank of the river *Niranjana*. During the fourth century A.D. Gaya was completely destroyed by an earthquake. Further, it was rehabilitated in due course. Gaya has been attributed with various names viz., Brahmapuri, Amaravati, Alkapuri, Brahmaganga, Vishnulok, Gayadham, Keekat, Alamgirnagar, Gayajee, Sahebganj, Ander Gaya, et al. .

It is an established fact that Buddhism had become very popular during the period of King Ashoka, but, it became stereotyped and degenerated into *Tantric rituals* with the passage of time. Further, Shankaracharya established *Advait School of Philosophy*. In India there is often a trend to trace the genesis of the realized saints in a legendary or mythological background. Lord Buddha has been accepted as the ninth Avatar (Incarnation) of Vishnu in Jaydev's *Geet Govind*. *Adi Shankaracharya* is treated as incarnation of Lord Shiva. *Ramanujacharya* is considered as Sheshavtar. And *Madhvacharya* (1238-1317) has also been given a divine origin. As the path of pure devotion to God had been refracted by the *Advait Philosophy of Shankar*, the *Devas* i.e., the devotees prayed to Lord Vishnu to redeem the world from this hostile doctrine. As Vishnu would not take an incarnation in the *Kaliyuga*, he commissioned "Mukhyaprana", the first of his emanations (identified with his creative force, *Hiranyagarbha*) to undertake this work. *Mukhyaprana* is also alluded to as *Vayu*. It was Mukhyaprana who had in earlier yugas been born as *Hanuman*, the attendant and Vibhuti of *Rama* and as Bheemsena, celebrated during the *Mahabharata* as the mightiest man and the destroyer of the Asuras born as Kings. Madhvacharya's divine affiliation is with this 'Mukhyaprana', the first emanation of *Mahavishnu*. At present all the *Gayawals* belong to the School of Madhvacharya, who had been formerly Shaivites. The temple of *Adi Gadadhar* had already been constructed in 1175 A.D. by the King *Govind* Pal. The Vaishnavism captivated the attention of *Chaitanya Mahaprabhu* (1485-1527) who visited Gaya during October 1508 A.D. at the age of 23 and offered Pindadan here. Prior to him Guru Nanak Dev had also visited Gaya the same year in April 1508 A.D. Maharani Ahalyabai Holkar of Indore got constructed the present *Vishnupad Temple* between 1766 and 1787 A.D.

We, Indians belong to the clan of 'Saptarishis' and we are proud of this. Darwin's ancestors might have been monkeys and apes but ours are *Shaptarishis* and *Manu* & *Shatrupa*, *Adam* & *Eve* and all of them had been the realized saints known as *Brahmarishis*. With the growing population, administrative need became essential with a view to leading a harmonious life. Some of them were entrusted with the responsibilities of looking after the security and safety, who were known as 'Rajarshis'. The place where these *Rishis* used to live had been surcharged with 'spiritual aura' which always curbed the menace of growing evil desires in the minds of the people. Then they constituted certain social, administrative, agricultural, religious and spiritual norms and complied them in *Samhita* (Rig Veda, Yajur Veda, Saam Veda and Atharva Veda), *Brahman*, *Aranyak* and *Smriti* and later on explained the true spirit of spiritualism minutely in the *Upnishads* which have been called the highest culmination of Knowledge.

Broadly speaking, human knowledge is bifurcated into 'Para Vidya' and 'Apara Vidya' according to the *Mundak Upanishad.* The former known as "Shreya marg" leading to Self-Realization and Divine Bliss. It was purely an inner process with inner communion which required no external ritual at all. Maharshi Patanjali has called it the FOURTH

PRANAYAM in the *Yog Darshan.* It was the communion of the souls of the realized saints and the devotees aspiring for it. On the other hand, 'Apara Vidya' deals with the external rituals required for mundane achievement called "Preya Marg". Teerth Yatra (Pilgrimage), Kirtan, Hath Yoga, Recitation of Scriptures, music, art and craft, architecture, scientific researches, all academic disciplines taught in the Institutes, Colleges and Universities, games and sports or whatever knowledge or skill is acquired under the Sun is categorised as 'Apara Vidya'. The former (Para Vidya) starts when one reaches the state of desirelessness whereas the latter (Apara Vidya) throws us in a whirlpool of desires of worldly aspirations with a view to bagging laurels and earning money as well as name and fame. The consequences of 'Apara Vidya' are the numerous cycles of birth and death and occasionally perpetual suffering of hell as one finds recorded in some parts of the Sanskrit Scripture *Garud Puran*, Arabic Scripture the *Holy Quoran* and Dante's Italian epic *The Divine Comedy* and many other scriptures of the world religions.

During the month of September, a huge congregation of people with a view to paying tributes to the departed ancestors known as 'Pitar' by performing certain rituals for their Absolute Peace and Salvation is today called **"Pitripaksha Mela (Mahasangam)"**. It is solemnised for a fortnight every year. In India there are other places of pilgrimage like Pushkar, Prayag, Varanasi, Vindhyachal, Kamakhya, Dwarka, Haridwar, Badarikashram, Jagannathpuri, Nasik, Udupi, Rameshwaram, Tirupati, etc also where the devotees make holy trips in order to obtain Divine Bliss for themselves, their families as well as ancestors. Among all such holy spots Gaya is uniquely itself. Its antiquity dates back to the pre-historic period as is revealed by the existing monuments, caves, rivers, hills and other ruins concealing within themselves a rich tradition of cultural past.

The subsidiary canal of the Falgu river flowing south to the Vishnupad Temple (presently as a dirty nala) has been named after the great Rishi *Madhushrava* who had composed the *"Fire Hymn"* in *Madhushrava Chhand* as recorded in the opening part of the most ancient scripture of the world called the 'Rig Veda' testifies to the rich spiritualistic tradition of Gaya :-

अग्निमीडे पुरोहितम् यज्ञस्य देवमृत्विजम्। होतारं रत्नधातमम्।। (ऋग्वेद, 1/1)

Strangely enough, all of us are burning within ourselves under the Seven deadly sins generated and fuelled by our inner passion. In *The Divine Comedy*, Dante also elaborates them in *Inferno* and *Purgatorio* as Sloth (आलस्य), Gluttony (लोभ/अतिभोजिता), Anger (क्रोध), Covetousness (लालच), Lechery (काम/लम्पटता), Envy (ईर्ष्या) and Pride (अहं). *Dante* has borrowed this concept from the Italian version of the Holy Quoran.

Lord Buddha also delivered his discourse of 'Fire Sermon' to his 500 disciples near the *Brahmyoni Hill*. This Sermon constitutes the genesis of the third part of *T. S. Eliot's* masterpiece, '*The Waste Land'.* He had gone through the Buddhist literature during his stay at *Harvard University*. The vices as pointed out by *Dante* had also stirred the mind of Eliot. Everybody of us is required to seek the blessings of our *'Pitars'* who always think of our well-being because above all they are our fore-fathers. In order to emancipate them, we first pray for their liberation because some of our own ancestors of several generations might have been suffering hellish torture. Unless they are liberated or emancipated, we can never prosper in our lives. We are bound to encounter a lot of obstacles for the whole of life ignited by worldly temptations. This causes the full fruition of our 'Tamogun Vrittis'

culminating into mutual misunderstanding, social disharmony, communal violence, terrorism, diseases, family feuds, ill-will, jealousy, lust for money and endless passion for sex, failure in life, complete dissatisfaction amidst prosperity. *Kabir* has very aptly pointed out, *"Dhobia jal bich marat piyasa"*. This *'Piyasa'* is nothing else but the outcome of our 'Trishna' (greed).

The 'Purush Sukta' of the Shukla Yajur Veda (31/1 - 16) advocates that all of us have originated from the same Super-Esso-conscious-Bliss (Satchidanand/Mahavishnu) –

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः।
ऊरु तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत।। (11)

The Scripture affirms that *Brahmins* emanated from the mouth of *Mahavishnu*; *Kshatriyas* from the arms; *Vaishyas* from the belly and *Shudras* from the feet. The Ganga which stands for devotion also has its origin from the right toe of Lord Vishnu. Naturally the Ganga and the *Shudras* have the same holy origin. Then we must analyse minutely that having the same origin how can the Ganga be holy and Shudras untouchable. The inherent message is devotion (भक्ति) and selfless service (निष्काम सेवा) respectively. The Vishnupad temple as well as the 'Pindadan' are symbolic embodiments of Social Harmony as *Wordsworth* reiterates that we are universally linked with each other in 'Natural Piety'. American poet Whitman also advocated of the same stance of transcendentalism in his masterpiece *'Leaves of Grass'*. Like *Bunyan's Pilgrim's Progress* all the eighteen Puranas are also replete with allegorical connotations bearing symbolic meanings. Virtually, 'Gayasur' is within most of us. The *Yajna* performed on the body symbolizes our relentless efforts and ritualistic performances of *Karma Kanda* or *Sadhna*. We try for our inner-purification for rising above the existing *Sanskara*. This stands for *Dharma Shila.* We pose to be religious but the fact is otherwise. Even while doing so, the ego persists. That is *Satoguni* pride. One must acquire a state of being *Trigunateet* by regular efforts or *dhaarna and dhyan (meditation)*. Our wavering of thoughts in spite of rigorous efforts stand for the trembling of the body of *Gayasur* even after the pressure of *Dharmashila* on the heart. Lord Vishnu is himself *Paramguru*. In the *Vishnusahasranaam* he has been called the *Guru* of the *Gurus* -

गुरुर्गुरुतमोधामः सत्य सत्य पराक्रमः (36)

Let us decode another myth depicted in the Puranas. The demons 'Hiranyaksh' and 'Hiranyakashyapu' have the same origin and both have been considered to be own brothers. 'Hiranya' means 'gold' in Sanskrit; 'Aksha' means 'eye' whereas 'Kashipu' means 'bed or pillow'. Consequently 'Hiranyaksh' means the person whose eyes are always fixed on gold or has an unending urge for money. Similarly 'Hiranyakashyap' means one who makes 'gold' one's bed or pillow meaning thereby hoarding of wealth. Under the spell of *Hiranyakashyap syndrome* within their inner-self, the people resort to deposit their money in Swiss Banks or adopt various malpractices for hoarding money and hankering after more and more. Such people are inwardly demons and outwardly respect-aspiring-persons in our society.

The highly elevated Indian Saints have also accorded that all of us are tethered within eight layers of consciousness which have been called eightfold shackles (अष्टपाश). They are Shame (लज्जा), Aversion (घृणा), Fear (भय), Anger (क्रोध), Disgust (जुगुप्सा), Race (जाति), Ancestry (कुल), Modesty (शील). So long as our inner consciousness is in the grip of *'Ashtapash'*, we are called *Jeevatma* and as such, we are sub-human. In order to break the

shackles of the 'Ashtapash', the blessings of Paramguru and his *Satsang* are the only way out. Goswami Tulsidas has very aptly advocated in his *Ramcharitmanas* that without the grace of Guru one cannot achieve divinity-

गुरु बिनु भवनिधि तरइ न कोई।
जो विरंचि शंकर सम होई।।

Only the grace of Paramguru or a realized saint can emancipate us and lead to *Divine Union*. A *Suphi* poet has also reiterated quite emphatically :-

शहीफ़ा हो कोई वो मिस्ले कुरान हो नहीं सकता।
मुनाफ़िक को कभी एहसासे ईमां हो नहीं सकता।।
न हो ताज़ीम जिसके दिल में सरकारे मदीना की।
इबादत लाख वो करले मुसलमाँ हो नहीं सकता।।

&

ख़ुदा की नज़र में वो सच्चा नमाज़ी, जो गाली सुने और दिल से दुआ दे।
अगर मंजिले मारिफत चाहता है, ख़ुदा के लिए इस खुदी को मिटा दे।।

This earmarks the inevitability of the *Prophet* and the real culmination of Prayer. It is at this juncture that a true devotee is blessed with all virtues leading to Universal Love :

समझ ले अगर कोई सब्रो रज़ा को, गले से लगाले हरेक बेवफ़ा को।
ये सच्चे नमाज़ी को मुश्किल नहीं है, हवा को भी अपना मुसल्ला बना ले।।

or

नहीं अन्तर में, नहीं बाहर में, नहीं आम में है, नहीं खास में है।
नहीं योग में है, नहीं भोग में है, न विरक्ति में है न विलास में है।।
नहीं वेद-विधान में, ज्ञान में है, नहीं संयम औ' उपवास में है।
न पाताल में है, न आकाश में है, यदि प्रेम है तो प्रभु पास में है।।

Most of the religions are trifurcated phase-wise in course of onward transmission of the soul for acquiring *Brahm Vidya*. Nomenclature varies but the Ultimate Goal is almost the same, viz.,

Hinduism	-	Gyaan Marg	Bhakti Marg	Karma Marg
Jainism	-	Samyak Darshan	Samyak Gyaan	Samyak Charitra
Buddhism	-	Sheel	Samadhi	Prajna
Islam	-	Aquidat	Tariquat	Shariyat
Suphism	-	Haqeeqat	Marifat	Shariyat/Tariqat
Sikkh Darma	-	Gyaan	Prem	Karma

To tell the truth 'Pindadan' is the complete surrender of the devotees on behalf of the ancestors to the *Lotus Feet* of Lord Vishnu or the Lord Supreme or *Paramguru* and seeking His grace by inculcating full devotion *(Bhakti)* and imbibing a feeling of broad-mindedness, universal brotherhood and Divine Love. During the evening worship (Shringar Darshan) of Vishnupad, ten emblems are carved on the Right Foot Print (13" in size) after embalming the Sandal-paste on the footprint. Those emblems, signifying ten essential epithets required to be inculcated, are as follows :

- **Conch-Shell (शंख)** - To blow off all our evil desires and evoke the advent of Spiritualism.
- **Sharp Circular missile (चक्र)** - To destroy social, communal or religious vices prevailing all around.
- **Wish-yielding tree (कल्पवृक्ष)** - To aspire for everything positive in life and try to achieve effortlessly.
- **Lotus (कमल)** - A feeling of inner detachment and apparent involvement.

- **Hook (अंकुश)** - To curb all the negative feelings which degrade one's inner self.
- **Flag/Banner (ध्वज)** - To spread devotion, spiritualism and divinity to every nook and corner.
- **Thunderbolt (वज्र)** - Ever readiness to fight against atrocities meted out to humanity at large.
- **Sesamum (तिल)** - Detachment from the outer world which deviates our attention.
- **Barley (यव/जौ)** - To grow life-giving-grains for nutrition and make them accessible to all in order to avoid starvation in the society.
- **Moon (चन्द्रमा)** - Providing nectar (अमृत) of *Bhakti – रसो वै सः* – to the people suffering under the fire of seven deadly sins enabling them to start pious life by imbibing tranquillity and cool-mindedness.

The worship is followed by offering 'Tulsi Dal'. It stands for conservation of Nature, ecological balance as well as Sublime. The *Rituals* at different *'Vedis'* reflect the pleasure of various deities and donation to the needy people from each according to the capacity and each according to the requirement. It anticipates a balance between Labour (श्रम) and Capital (पूँजी) irrespective of caste and creed as propounded by **Dialectical Materialism.** The ultimate *'Sufal'* is performed by the Chief Panda who accepts an offer of a piece of **coconut** and blesses ultimately. Etymologically 'Panda' has been derived from the root 'Pund' which means a person who has reached the highest pitch of spiritualism known as "Ritambhara Pragya" (ऋतम्भरा प्रज्ञा) by rigorous penance or by the grace of the Lord Supreme. The 'coconut' symbolizes outward toughness and inward politeness and compassion with a view to starting a fresh journey of life in the world discharging all responsibilities selflessly and leaving no stone unturned in pleasing every strata of society by rendering our services and fulfilling their needs. This is a Prelude to social coherence and congenial life till the last breath. I beg to differ from the prevailing legend of 'Gayasur' among common mass caused by misinterpretation of the allegorical meanings of **'Vayu Puran'** and other such scriptures. If the sentiment of anybody is offended, I beg apology because never in history of Gaya any 'Asur' or devil has ruled. Gaya is the most sacred place of Pilgrimage on the Earth pulsating with spiritual aura. Had Gaya been Asur's domain, during the *Treta Yug* super great grand-father of Ram named *Dilip* might not have been married here. According to the *"Raghuvansham"* by *Kalidas, Sudakshina*, the wife of *Dilip* hailed from Gaya (Magadh).

The only way to achieve Salvation is inner-cleansing of the self through the detergent of regular *Dhyan* and *Dharana* leading to *'Asampragyat'* or *'Nirbeej- Samadhi'* under the strict guidance of a realized saint or *Paramguru*. Panchkoshiya Sadhna also denotes an inner journey through five layers which cover our inner self (soul) viz., *Annamaya Kosh, Pranmaya Kosh, Manomaya Kosh, Vigyanmaya Kosh* and *Anandmaya Kosh*. Our soul remains within three bodies and eight chakras. The bodies are Physical (स्थूल), Austral (सूक्ष्म) and Causal (कारण). The eight chakras (Plexus) are Agni, Mooladhar, Swadhisthan, Manipur, Anahat, Vishuddha, Ajna and Sahasrar which ultimately culminate into Macrocosm (महाकारण).

These rituals serve the purpose of purifying our *Annamaya Kosh* and preparing the physical body undertake the journey of Austral and Causal ones. Even the techniques like *Kirtan, Naam Jap* or *Naadi Shodhan* are also meant for surmounting over *Annamaya Kosh*. The techniques of 'Kriyayoga' advocated by Lahiri Mahashay begin with *Pranmaya Kosh*;

those of Ramkrishna Paramhans start with *Manomaya Kosh*; Swami Dayanand Saraswati's techniques initiate from *Vigyanmaya Kosh* whereas, Chaitanya Mahaprabhu's Sadhna originates from *Anandmaya Kosh but all paths lead to the same point of spiritual zenith*. However, according to the 'Sanskara' of the devotees as well as the spiritual journey undertaken during the previous birth, the Guru determines the proper path and initiates the *Sadhakas* for self-realization. Prayers through *Brahmasukta, Vishnusukta, Rudrasukta, Yamsukta* and *Pretsukta* during the *Narayanvali* rituals also symbolize five phases prior to Salvation because our *Pitars* are pleased by *Vaikharivani* (वैखरी वाणी) : ''पितरं वाक्यमिच्छन्ति भावमिच्छन्ति देवता'' Herein lies the inherent Spiritualistic Heritage of Gaya which can be achieved only through the *Satsang* of *Vishnupadam* or *Paramguru* — ''मोक्षमूलं गुरोः कृपा।''

Let Peace, Prosperity and Inner-happiness prevail all over the world.

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित् दुःख भागभवेत्।।
।। ॐ तत् सत् ।।

◆

References :

- *The Rig Veda (7/99/4 ; 7/104/24 - 25), (10/63 – 10/64), (10/63/17 – 10/64/17)*
- *Atharv Veda (1/14/4)*
- *The Mahabharat, Van Parva (84/82 – 103), Anushasan Parva (25/42)*
- *Padma Purana (Aadi, 38/2 - 19)*
- *Vayu Purana (105/112)*
- *Garud Purana (7/82 - 86)*
- *Nardeeya Purana (Uttar, 44 - 47)*
- *Lalit Vistar*
- *Ishadi Nau Upanishad*
- *Shreemad Bhagwadgeeta*
- *Goswami Tulsidas : Ramcharitmanas*
- *Patanjali : Yoga Darshan*
- *Yogavashishtha*
- *Kabir Granthavali*
- *H. J. C. Grierson : Notes on Gaya District, 1893*
- *Rajendralal Mitra : Buddhagaya, 1878*
- *General Cunningham, Mahabodhi, 1892*
- *L. S. S. O' Mailley, Gaya Gazetteer, 1906*
- *P. C. Roychaudhury, Gaya Gazetteer, 1957*
- *Dr. Beni Madhav Barua, Gaya and Buddhgaya*
- *Dr. Pandurang Vaman Kane, History of Dharmashastra, Part- lll*
- *Kalyan- Teerthank, Geetapress, Gorakhpur*
- *The Sacred Book of the East (13/134)*
- *Markandeya Purana*
- *Satsang Prabha, Shree Yogendra Satsang, 1994*
- *Dr. Talkeshwar Singh, Satsang Sudha, (1993) & Shree Yogendramrit, (2012)*

Head, PG Centre, Department of English
Gaya College, Gaya
[NAAC Re-Accredited with Grade "A"]
&
Director, DHHTM
Magadh University, Bodh-Gaya, Bihar
 # +91-9934058908
e-mail : kkn.org@gmail.com

पितृपक्ष मेला महासंगम 2014 – अद्भुत दृश्य

देवघाट पर फल्गु महाआरती

पितृपक्ष 2013 में जगद्गुरु शंकराचार्य, गोवर्द्धन मठ, पुरी

सीताकुण्ड जाते पिण्डदानी

प्रेतशिला पर पितरों का आह्वान करते पिण्डदानी

फल्गु पर पिण्डदान करते यात्री

देवघाट पर पिण्ड कार्य करते पिण्डदानी

महाबोधि मन्दिर में पिण्डदान करते श्रद्धालु

फल्गु देवघाट पर पिण्डदानियों का सैलाब

पितृपक्ष मेला महासंगम 2014 – भावनाओं का समागम

पितरों की आरती करते पिण्डदानी

पितृपक्ष करते पिण्डदानी

रामशिला पर पिण्डदान करते यात्री

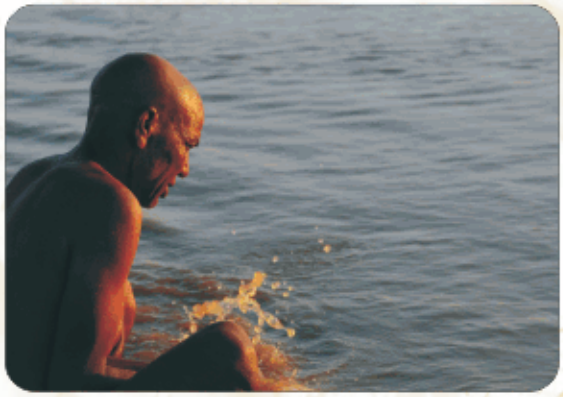

फल्गु में तर्पण

फलगु पर पितरों को तर्पण करते श्रद्धालु

नन्हा बालक पिण्डदान करता हुआ

फलगु की रेत पर पिण्ड-कार्य

देवघाट पर पिण्डदानी

पितृपक्ष मेला महासंगम 2014 – भावनाओं का समागम

पितरों की आरती करते पिण्डदानी

पितृपक्ष करते पिण्डदानी

रामशिला पर पिण्डदान करते यात्री

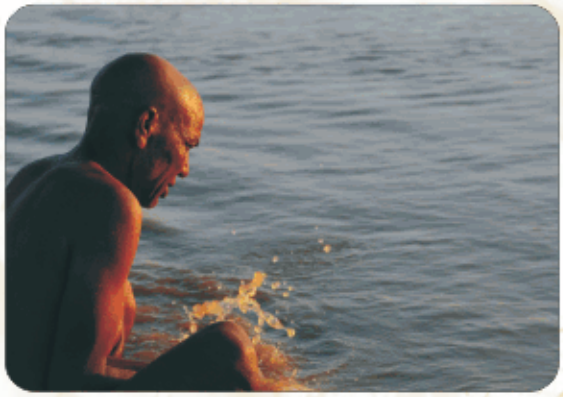

फल्गु में तर्पण

फलगु पर पितरों को तर्पण करते श्रद्धालु

नन्हा बालक पिण्डदान करता हुआ

फलगु की रेत पर पिण्ड-कार्य

देवघाट पर पिण्डदानी

पितृपक्ष मेला महासंगम 2014 – पूर्वजों के प्रति श्रद्धा

अक्षयवट पर पिण्डकार्य

सुफल देते गयावाल पंडा

पिण्डदान करते श्रद्धालु

अक्षवट् पर श्रद्धालुगण

गयाकूप में पिण्डदान

प्रेतशिला पर पिण्डदानी

विष्णुपद मन्दिर प्रांगण में तीर्थयात्री

सीताकुण्ड में पिण्डदानियों की भीड़

– गयाधाम की पवित्र वेदियाँ

धर्मारण्य

सीताकुण्ड

परपितामहेश्वर

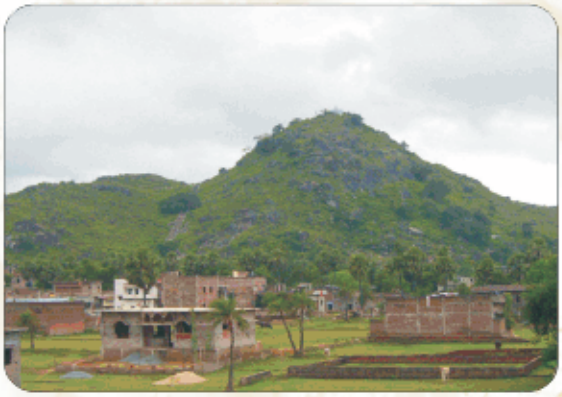

ब्रह्मयोनि पर्वत

प्रेतशिला पर्वत

रामशिला

पितामहेश्वर

पवित्र फल्गु

पितृपक्ष मेला महासंगम 2014 – गयाधाम की पवित्र वेदियाँ

विष्णुपद मन्दिर

गदाधर मन्दिर

माकण्डेय मन्दिर

देवघाट

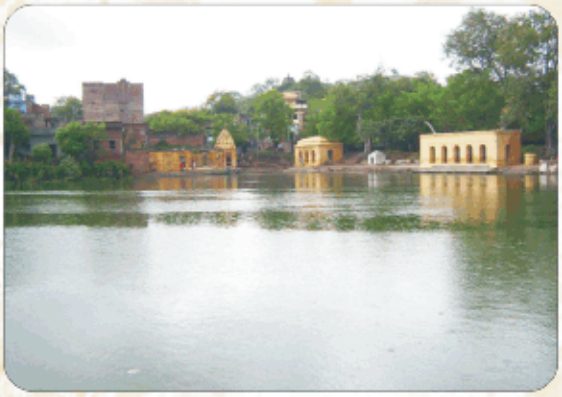

ब्रह्मसरोवर

अक्षयवट

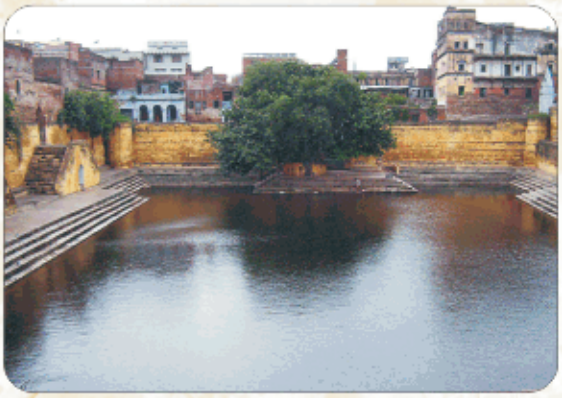

सूर्यकुण्ड

जनार्दन मन्दिर

– गया के अन्य मुख्य दर्शनीय स्थल

महाबोधि मन्दिर, बोधगया

80 फीट बुद्ध प्रतिमा

माँ मंगलागौरी मन्दिर

बगला स्थान

दुर्लभ मूँगा गणेश (रामशिला)

दुर्लभ स्फटिक शिवलिंग (रामशिला)

सुजाता गढ़, बोधगया

माँ दुखहरणी मन्दिर

पितृपक्ष मेला
महासंगम 2014

- तीर्थयात्रियों की सुविधा के लिए प्रयासरत जिला प्रशासन

पितृपक्ष मेला
महासंगम 2014

- महासंगम की सफलता के लिए प्रयत्नशील प्रशासनिक अधिकारीगण

पितृपक्ष मेला
महासंगम 2014

- महासंगम की सफलता के लिए प्रयत्नशील प्रशासनिक अधिकारीगण

पितृपक्ष मेला महासंगम 2014 – खबरों में

एक साथ कई उपलब्धियों के लिए याद किया जाएगा 2014 का मेला, युद्धस्तर पर तैयारी में जुटा है जिला प्रशासन

खास रहेगा पितृपक्ष मेला, राजकीय समारोह होंगे

गया | निज प्रतिनिधि

2014 का पितृपक्ष मेला बेहद खास है। विश्वप्रसिद्ध मेले के साथ इस बार कई उपलब्धियां जुटने वाली हैं जो आगे के वर्षों में याद की जाएंगी। मेले को ऐतिहासिक बनाने में स्थानीय जिला प्रशासन, जनप्रतिनिधि, पंडा समाज के अलावा सामाजिक संगठनों की भूमिका है। तैयारी को बेहतर तरीके अंजाम देने में सभी युद्धस्तर पर लगे हैं।

लंबे इंतजार के बाद मिला है राजकीय मेले का दर्जा : पिछले कई वर्षों से पंडा समाज, राजनीतिक दलों के अलावा विभिन्न संगठनों द्वारा पितृपक्ष मेले के राजकीय मेला घोषित किए जाने की मांग आ रही थी। 26 अगस्त को कैबिनेट की बैठक में पितृपक्ष मेले को राजकीय मेला घोषित कर दिया गया। इसके बाद अधिकारी लेकर जनप्रतिनिधियों का मेले को...

26 अगस्त को कैबिनेट की बैठक में पितृपक्ष मेले को घोषित कर दिया गया राजकीय मेला

- पंडा समाज कर रहा था मेले को राजकीय करने की मांग
- कैबिनेट की मीटिंग में इस पर लग चुकी है मुहर

विष्णुपद मंदिर में जुटने लगी पिंडदान करनेवाले

पितृपक्ष मेले के लिए बनाया गया कॉल सेंटर। • हिन्दुस्तान

कॉल सेंटर का किया उद्घाटन

विष्णुपद क्षेत्र में चला व्यापक जांच अभियान

पहली बार ई-समाधान से दूर होगी परेशानी

...के होंगे लेख

संजय कुमार अग्रवाल भी ...

पितृपक्ष और हरिहर क्षेत्र मेले को राजकीय दर्जा

पटना | हिन्दुस्तान ब्यूरो

राज्य सरकार ने गया के पितृपक्ष और सोनपुर के हरिहर क्षेत्र मेला को राजकीय मेला का दर्जा दिया है। मंगलवार को कैबिनेट की बैठक में इससे संबंधित राजस्व एवं भूमि सुधार विभाग के प्रस्ताव को मंजूरी दी।

विभाग के प्रधान सचिव...

...करने में मदद मिलेगी। अब इन मेलों के आयोजन में सरकार के सभी विभाग शामिल होंगे। सबके सहयोग और समन्वय से मेलों का आयोजन बेहतर तरीके से...

• पर्यटन के ...

सफाई में जुटा प्रशासन

...में भी स्मारिका के लेख होंगे। इन लेखों के जरिए गयाधाम से जुड़ी विशेषताओं को लोग जान सकेंगे।

इसके लिए प्रशासन... किराया, ऑटो की संख्या और चलाने के समय का...

पिंडदानियों को मिलेगी कॉल सेंटर की सुविधा

- पितृपक्ष में आये तीर्थयात्रियों की समस्याओं के समाधान के लिए 24 घंटे की सेवा
- जल्द ही शुरू होगी पितृपक्ष पर जिला प्रशासन की नयी वेबसाइट भी

NATIONAL SCIENCE
Palur Hills, Berham
Phones: (0680) 2492
www.nist.edu
ADMISSI

पितृपक्ष मेले को ले अधिकारियों का जमीनी सर्वे

...क्षेत्र प्राधिकार आयोजना व ... की धारा-11... तथा विकास...

'परिवार' की ताकत साथ हो तो हर चुनौती के लिए तैयार

गया : जिलाधिकारी ...

सर्वधर्म समाज की परिकल्पना गया में होता साकार

- पितृपक्ष मेला होगा राजकीय मेला घोषित
- 'सुपर कोर कमेटी' से जनता के बीच पहुंचा प्रशासन

अधिकारियों ने किया मेले क्षेत्र का निरीक्षण

बन रहे पंडाल, शेड और चापाकल

देवघाट से लेकर संगत घाट तक जिला प्रशासन की ओर से पितृपक्ष मेले की व्यवस्था जोर-शोर से दुरुस्त किया जा रहा है। संगतघाट की ओर शौचालय में टाइल्स लगाए जा रहे हैं। इसी परिसर में चापाकल लगाने का काम अंतिम चरण में है। देवघाट पर ही गायों को रखने के लिए काऊ-वे का निर्माण कार्य शुक्रवार की दोपहर से शुरू हुआ। चापाकल लगाने का काम भी अंतिम चरण में है। ... शेड को हटाकर लाल रंग का ...

चापाकल लगाने ... देवघाट पर जर्जर शेड को हटाकर लाल ... लगाया जा रहा है। विष्णुपद मंदिर के पास 70 फुट ... स्थायी शेड का काम भी अंतिम चरण ... के लिए पीलर

पितृपक्ष मेला महासंगम 2014 – खबरों में

'कोशिश तो है हर तीर्थयात्री के मन को जीतने की' : डीएम

पितृपक्ष की तैयारी जिला प्रशासन के लिए चुनौती होती है. दबाव होता है बेहतर काम करने का, पिंडदानियों को बेहतर सुविधाएं देने का. पितृपक्ष को राजकीय मेले का दर्जा प्राप्त होने के बाद यह दबाव तो और भी बढ़

'बनायें रखें आपसी समन्वय व भाईचारा'

- पुलिस-पब्लिक समन्वय समिति की बैठक में डीएम, एसएसपी व अन्य ने की अपील
- पितृपक्ष, दशहरा व बौद्ध समागम को लेकर प्रशासनिक तैयारी को दिया जा रहा अंतिम रूप

वरीय संवाददाता, गया

सितंबर माह पुलिस-प्रशासन के लिए धार्मिक दृष्टिकोण से काफी महत्वपूर्ण है. 27 अगस्त से हज यात्रियों का काफिला गया एयरपोर्ट से रवाना होगा. आठ सितंबर से पितृपक्ष मेला, 24 सितंबर से दशहरा व 26 सितंबर से तीन दिवसीय

हज, पितृपक्ष व बौद्ध समागम को लेकर पुलिस लाइन में आयोजित बैठक को संबोधित करते डीएम संजय कुमार अग्रवाल. ■ फोटो। प्रभात खबर

हो कि गयाजी श्रद्धालु, चाहे वह किसी भी धर्म या संप्रदाय के हों, यहां के बारे में अच्छी छवि लेकर लौटें. मौलाना नूरानी ने कहा कि पिछले वर्ष बड़े ही खुशनुमा माहौल में सैकड़ों हज यात्री गया से मक्का गये थे. इसमें हिंदू भाइयों ने भी बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया था. मुख्यमंत्री ने स्वयंसेवकों व अधिकारियों को सम्मानित भी किया था. मौलाना ने कहा कि पितरों को मोक्ष की प्राप्ति के लिए देश-दुनिया से आनेवाले श्रद्धालुओं के ठहरने के लिए उनके मदरसे सदैव खुले हैं. उन्होंने अपील की कि आपसी समन्वय बना कर सभी पवित्र कार्यक्रमों में अपनी महत्वपूर्ण भागीदारी निभाएं

कई बार नजर नहीं जाती क्षेत्र में रहते हैं, छोटी-छोटी बारे में जानकारी मिलती खामियों तुरंत अवगत एसएसपी ने कहा कि पितृपक्ष मेले व हज यात्रा में था.

आप लोगों के सहयोग से शांतिपूर्ण माहौल में संपन्न बार भी आशा करते हैं कि सहयोग मिलता रहेगा. यह निर्भर करेगा कि पितृपक्ष देश-दुनिया से आनेवाले स्वागत कैसे करते हैं. अ बना कर कोशिश करें श्रद्धालु को गयाजी में व

धर्मारण्य पिंडवेदी का होगा कायाकल्प : डीएम

पितृपक्ष मेला 07 दिन शेष

मुख्य संवाददाता, गया

द्वापरकालीन धर्मारण्य पिंडवेदी का अपना अलग ही ऐतिहासिक महत्व है. इसके संवर्द्धन के साथ सजाने-संवारने के प्रति जिला प्रशासन का ध्यान गया है. शनिवार की देर शाम को डीएम संजय

मंदिर तक ऑटो से जायेंगे अस्वस्थ पिंडदानी !

- इस बार पितृपक्ष में बैटरी चालित ऑटो की सुविधा देने पर प्रशासन कर रहा मंथन

गया. दूसरे धर्मस्थलों की तरह गया में भी पितृपक्ष के दौरान अस्वस्थ पिंडदानियों को विष्णुपद मंदिर तक पहुंचाने के लिए बैटरी चालित ऑटो की

हालांकि, अधिकारी अभी तक किसी ठोस निष्कर्ष पर नहीं पहुंच पाये हैं. मामला ऑटो की संख्या ... इनके चलाने की अवधि ... बोधगया में ऐसे ऑटो ... लगे हैं. प्रशासन अपनी ... पर उतार दे, तो बुजु... तीर्थयात्रियों सहित पर्यटक ... सहूलियत होगी. पितृपक्ष ...

ही गाड़ियों को रोकने के लिए बैरियर लगा दिये जाते हैं. इससे ... मंदिर तक वाहन चलाने की पंडों की ... भी पूरी हो जायेगी.

पितृपक्ष मेले में चिकित्सा शिविर लगाने का निर्णय

गया. संझा समिति, गयाधाम ... रविवार को ... इसमें पितृपक्ष ... गढ़ी तीन मुहानी ... के चिकित्सा ... सा शिविर ... या. साथ ही, ... कराने के लिए ब्राह्मणों का परिचय पत्र भी निःशुल्क मुहैया कराने की सहमति बनी. बैठक की अध्यक्षता आचार्य लाल ... मिश्र ने की. पुरुषोत्तम नारायण

Demand for 'state fair' tag to Pitrapaksha Mela

Abdul Qadir

शहर में सजने लगीं मेला क्षेत्र की दुकानें, खुशी

पितृपक्ष मेला नौ दिन शेष

- दुकानों की जोरों से हो रही रंगाई-पुताई और साफ-सफाई
- बड़ी-बड़ी दुकानें सज-धज कर तैयार
- हफ्ते भर गुलजार होंगी अंदर गया की गलियां

तक की सारी दुकानें गुलजार रहती हैं. इसके ... क्षेत्र में स्थायी के ... नों भी खुलेंगी. ... व दूसरे प्रदेशों से ... भारी संख्या में वहां एक पखवारे तक फुटपाथ किनारे दुकान लगाएंगे। मुख्य रूप से विष्णुपद मंदिर प्रवेश द्वार से लेकर चांदचौरा मोड़ तक ज्यादा दुकानें नजर आती हैं।

निरीक्षण के दौरान प्रभारी मंत्री ने किया दावा, घाट सहित पिण्डवेदियों का किया निरीक्षण

- जरूरी सुविधाओं को दूर

पितृपक्ष मेले में ➤ 09304401000

Multi-lingual approach of souvenir to attract pilgrims from across country & generate more revenue

Tarpan debut in six languages

ALOK KUMAR IN GAYA

डीएम ने जनता व अधिकारियों से लिया फीडबैक

venir, *Tarpan*, for the first ... country during the 17-day ... The souvenir used to get ... 5day has been the princi- ... Majhi is expected to inaug

अधिकारियों ने किया मेले क्षेत्र का निरीक्षण

मेला क्षेत्र से हटाया गया अतिक्रमण

- सड़क पर रहे जेनरेटर सहित कई सामानों को किया गया जब्त

मेला क्षेत्र चांदचौरा में अतिक्रमण हटाता जेसीबी

IVRS helpline for Pitripaksh visitors

ALOK KUMAR IN GAYA

Just dial 9304401000 from your mobile to seek any information or complain about anything while visiting Gaya during the 17-day-long Pitripaksh Mela.

The interactive voice response system (IVRS)-based e-samadhaan helpli...

be recorded to avoid denial by either side.

The website, www.pinddaangaya.com, launched in 2008, is also being upgraded. The website would have new features this year such as detailed information about tourist plac...

permanent arrangements for devotees and tourists visiting Gaya and Bodhgaya. Urban development minister Samrat Chaudhary, during his visit to Gaya on Wednesday, announced that toilets would be ...

हर बार 'फसल काटने' के लिए मेले में न हो अस्थायी निर्माण

- मेले को लेकर होने वाले अस्थायी निर्माण पर जतायी नाराजगी
- मेले की तैयारी को ले खेल परिसर, रामशिला व सीताकुंड का निरीक्षण

गया | वरीय संवाददाता

डीएम संजय कुमार अग्रवाल ने अधिकारियों को इशारों में चेतावनी दी है कि वे हर बार 'फसल काटने' की नहीं सोचें। वे पितृपक्ष मेला को लेकर कराए जा रहे अस्थायी निर्माण को लेकर भड़के हुए थे। उन्होंने कहा कि मेला में अस्थायी ... है। डीएम ने ...

Manjhi: Pitripaksh Mela to be declared 'state fair'

मेले के दौरान हाईटेक रहेगी शहर की सुरक्षा

गया | नगर संवाददाता

इस बार पितृपक्ष मेले में सुरक्षा के हाईटेक इंतजाम होंगे। विष्णुपद मंदिर, देवघाट, वैतरणी, ब्रह्म सरोवर आदि के अलावा प्रमुख पिंडवेदियों के साथ ही शहर के ... पुलिस की चाक-चौबंद सु...

- **40** पुलिस पोस्ट बनाये जा रहे पितृपक्ष मेले में
- छह टीमों द्वारा रखी जायेगी मेले पर नजर
- सीआरपीएफ एवं एसएसबी की टीम करेगी मदद

मेले की सुरक्षा के लिए छह टीमें गठित

मेले की सुरक्षा को लेकर एएस... के नेतृत्व में छह टीम बनायी गई ... संवेदनशील स्थानों पर

24 घंटे होगी पेट्रोलिंग की व्यवस्था

संदिग्ध व्यक्ति पर पुलिस ...

पीएचईडी के कनीय अभियंता से स्पष्टीकरण

Vishnupad Temple offers hospitality to haj pilgrims

Abdul Qadir | TNN

Gaya: In a rare gesture, well-known priest of world-famous Vishnupad Te... ...wami Ra...

and nursing homes being run by the medical body members would provi... cal ...

Civil society hails Gaya DM's move

Abdul Qadir | TNN

Gaya: Gayawal pandas and civil society ... of the town have wel...

was long over due. Guput also said that instead of operating seasonal flights, the national airliner and private operators should operate regular flights on the Delhi-Gaya and ...

सफाईकर्मियों की फौज उतारने की तैयारी

- तीर्थयात्रियों की सेवा में दिन रात

15 दिनों में 1924 सफाई कर्मी करेंगे कार्य

विष्णुपद मंदिर परिसर में बन रहा भव्य पंडाल, मेला क्षेत्र की जर्जर सड़कों की हो रही मरम्मत

पितृपक्ष मेला 8 सितंबर से, तैयारी अंतिम चरण में

15 दिन शेष

गया | निज प्रतिनिधि

पितृपक्ष मेला शुरू होने में 15 दिन शेष हैं। आठ से शुरू होकर 27 सितम्बर तक चलने वाले मेले की तैयारी में जिला प्रशासन जोर-शोर से लगा है। प्रशासन के अलावा पंडा समाज और मेला क्षेत्र के दुकानदार तैयारी में जुटे हैं।

मेले की व्यवस्था को दुरुस्त करने और आने वाले तीर्थयात्रियों को किसी तरह की ...

38 | जोन में मेला क्षेत्र को बांटकर यहां आने वाले तीर्थयात्रियों की सुरक्षा के लिए रखी जाएगी नजर

55 | चिकित्सा पदाधिकारी तैनात किये जाएंगे मेले में ...

दूर होंगी समस्याएं : प्रभारी मंत्री

- प्रवेश द्वार पर ही हुआ जर्जर सड़क से ... सामना

– बैठक करते प्रभारी राज्य मंत्री, निगमायुक्त, मेयर, विधान पार्षद व सदर एसडीओ

देवघाट में 25 लाख से बनेगा आधुनिक शौचालय : मंत्री

गया | निज प्रतिनिधि

रेलवे को हर सहयोग देगा जिला प्रशासन

पितृपक्ष मेले की तैयारी को लेकर बैठक करते आयुक्त व रेल डीआरएम

- रेल व जिला प्रशासन की ...

जागरण

पूर्व की अपेक्षा इस बार बेहतर व्यवस्था होगी : डीआरएम

पदभार ग्रहण के बाद पहली बार गया आए मुगलसराय रेल मंडल प्रबंधक विद्याभूषण ने गया जंक्शन पर पितृपक्ष मेला को लेकर किए गए निरीक्षण के बाद कहा कि हर साल से बेहतर इस बार बेहतर व्यवस्था होगी।

जानकारी दी। मंत्री श्री रजक ने महापौर ... कुमारी सहित जनप्रतिनिधियों को जिले ... साथ समन्वय स्थापित कर ... लाखों तीर्थयात्रियों की सुविधा ... को कहा। समीक्षा बैठक में ... सिंह, सिटी एसपी राकेश कुमार ... रामचंद्र, सदर एसडीओ ... डीएसपी आलोक कुमार ... विनोद कुमार सिंह सहित कई ...

24 घंटे होगी पेट्रोलिंग की व्यवस्था

चोर-उचक्कों पर नजर रखने के लिए मेला के दौरान 24 घंटे पुलिस पेट्रोलिंग की व्यवस्था रहेगी। पितृपक्ष मेला के दौरान संदिग्ध व्यक्ति पर पुलिस खास नजर रखेगी। इसके अलावा ... पहिया वाहनों के अलावे दो पहिया वाहनों से भी पेट्रोलिंग ... द्वारा गली-मोहल्लों में चोर-उचक्कों ...

मेले के दौरान जाम की समस्या उत्पन्न न हो इसके लिए बस व छोटे वाहनों के लिए पार्किंग की व्यवस्था

तीर्थयात्रियों को मिलेगी रिंग बस सर्विस की सुविधा

गया | हिन्दुस्तान संवाददाता

विष्णुपद में स्थायी शेड का काम शुरू

इन जगहों पर मेला रिंग सर्विस

तीर्थयात्रियों को मिलेगा शुद्ध पेयजल

नए गड़ेंगे, 38 खराब चापाकलों की हो रही मरम्मत

इन स्थानों पर लगाये जा रहे हैं नये चापाकल

गया कॉलेज खेल परिसर, टी मॉडल स्कूल व प्रेतशिला मंदिर के पीछे दो-दो तथा डंकन मध्य विद्यालय, जेल प्रेस कन्या मध्य स्कूल ...

यहां के चापाकलों की हो रही मरम्मत

प्रेतशिला में 13, संवास सदन अशो... गेस्ट हाउस, महावीर मध्य स्कूल व पोलिटेकनिक कॉलेज में तीन-तीन ...

पितृपक्ष की तैयारी में जुटा स्वास्थ्य विभाग

- मेला क्षेत्र के प्रमुख 14 स्थानों पर लगाये जायेंगे हेल्थ कैंप
- 21 आवासन स्थलों पर भी उपलब्ध होगी चिकित्सा ...

प्रेतशिला, घुघरीटांड, कालचक्र मैदान के समीप ...

मेला परिसर साफ-सुथरा व दुरुस्त चाहिए : आयुक्त

परिसर के एक-एक गली को देखा एवं जगह-जगह मरम्मत करने एवं रंगाई करने का भी निर्देश दिया।

पितृपक्ष मेला महासंगम 2014 – खबरों में

तीर्थयात्रियों को मिलेंगी हर संभव सुविधाएं

जंक्शन पर सहूलियत

गया | हिन्दुस्तान संवाददाता

विश्व प्रसिद्ध पितृपक्ष मेला के दौरान स्थानीय जंक्शन पर तीर्थयात्रियों के लिए अच्छी व्यवस्था रहेगी। देश के विभिन्न भागों से मेला में भाग लेने के लिए गया आने वाले तीर्थयात्रियों को हर संभव सुविधाएं मिलेंगी।

सोमवार को मगध प्रमंडल के आयुक्त कार्यालय में स्टेशन क्षेत्र में पितृपक्ष मेले की तैयारी को लेकर आयोजित बैठक में डीआरएम मिश्राभूषण ने यह बातें कहीं।

- प्रमंडलीय आयुक्त व डीआरएम ने मेला व्यवस्था पर की बैठक
- जिला प्रशासन व रेल प्रशासन मिलकर करेंगे कार्य
- आयुक्त ने अच्छी व्यवस्था से संबंधित दिए कई निर्देश

पितृपक्ष मेला. व्यवस्था बेहतर रखने की चल रही कवायद

ट्रैफिक की प्लानिंग पूरी

मेला क्षेत्र में छोटे वाहनों के प्रवेश पर भी रहेगी रोक

आठ सितंबर से लागू हो जायेगी ही सारी व्यवस्था

छह मार्गों पर रिंग बस सेवा

- रेलवे स्टेशन से विष्णुपद मंदिर
- विष्णुपद मंदिर से प्रेतशिला
- गांधी मैदान से विष्णुपद मंदिर
- विष्णुपद मंदिर श्मशान घाट से
- गया कॉलेज खेल परिसर से रामशिला/ प्रेतशिला
- केंदुई नवादा से गया कॉलेज खेल परिसर

डीएम ने किया मेला क्षेत्र का निरीक्षण

पितृपक्ष में तैनात होगी आरपीएफ की अतिरिक्त कंपनी

जिला परिवहन कार्यालय में पितृपक्ष मेले को लेकर हुई बैठक में चर्चा करते जिला... जिला अवर परिवहन पदाधिकारी

शहर में दो जगह बनेंगे बस पड़ाव

समाहरणालय में डीएम संजय कुमार अग्रवाल के साथ चर्चा करते बुडको के प्रोजेक्ट डायरेक्टर, एसडीओ, डीसीएलआर व अन्य. ■ फोटो। प्रभात खबर

अलग-अलग मजहबों के लोगों ने एक-दूसरे को मदद का दिलाया भरोसा

पिंडदानी व हाजी की करेंगे सेवा

सद्भाव

गया | वरीय संवाददाता

पितृपक्ष मेले के बाकी कार्यों को पूरा करने का डीएम ने अफसरों को दिया निर्देश, अधिकारियों संग किया तैयारी का निरीक्षण

चप्पे-चप्पे पर होगी रेलवे सुरक्षा बल की तैनाती

- पितृपक्ष मेले के पूर्व सीनियर कमांडेंट ने सुरक्षा व्यवस्था का लिया जायजा
- रेलवे मजिस्ट्रेट व रेल पुलिस अधिकारियों के साथ की बैठक
- एसएसपी ने की विशेष बल की मांग

संवरने लगे हैं पितृपक्ष महत्व वाले सभी घाट

पितृपक्ष मेला

चार दिन शेष

देवघाट, संगत व गजाधर घाट की बदल रही सूरत

मोक्षदायिनी के देवघाट, संगत और गजाधर की सूरत बदल रही है। यहां बुडा, नगर निगम, पीएचईडी और पर्यटन विभाग की ओर कराए जा रहे काम काफी तेजी से हो रहे हैं। बुधवार की दोपहर तक इन घाटों पर कई काम पूरे हो चुके है और कई में जोर से कार्य चल... जमीन को समतल किया जा रहा और झरने का पानी से यात्रियों को परेशानी न हो इसके लिए नाला बनाने का काम मंगलवार की शाम तक पूरा हो गया। झरना जो देवघाट की ओर से टाटा बल स्वार सीट से घेर दिया गया है इसके महिलाओं को...

PITRIPAKSHA MELA

Efforts on to tap full tourism potential of fair, website on the cards

पितृपक्ष के दौरान 850 कर्मचारियों के जिम्मे होगी शहर की सफाई व्यवस्था, दो पालियों में होगी सफाई

सफाई के लिए 532 अतिरिक्त कर्मचारी

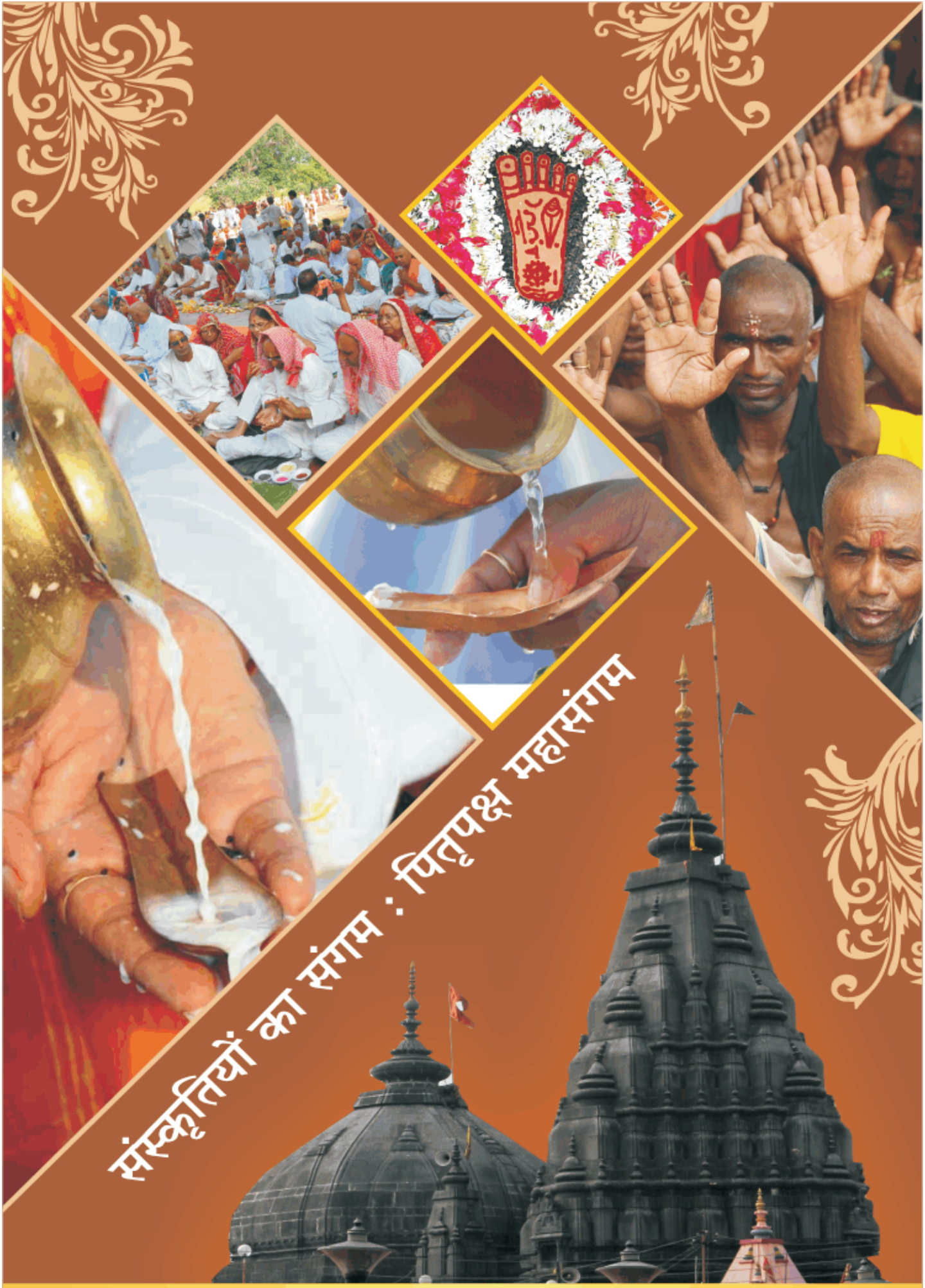

हेल्पलाईन (24×7) : 9304401000

www.pinddaangaya.in